ॐ

* प्रेम-प्रभाकर *

अर्थात्

महात्मा कौण्ट टॉल्स्टाय की ... टेल्स का

सरल हिन्दी भाषा में अनुवाद

जिसको

श्रीमान् राय साहिब आत्माराम

इञ्जिनियर रेलवे डीपार्टमेण्ट

पटियालाराज्यधानी

ने

देश उपकारार्थ निर्माण किया

ज्येष्ठ प्रविष्टे सं० १९७०

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में छपा।

पहलीबार २००० छापी] [मूल्य ।)

धन्यवाद



परमात्मा का धन्यवाद करने के पीछे मै सव से पहिले अपने विद्यानुरागी परमपूज्य स्वामी श्री१०८ महाराजाधिराज श्रीमहाराज भूपेन्द्रसिंह साहिब वहादुर जी० सी० आई० ई० का अतिशय धन्यवाद करता हू, जिनका सेवक होकर मैने यह योग्यता प्राप्त की कि इस पुस्तक को अपने भाइयों की सेवा में अर्पण कर सका ॥

आत्माराम,
सी० ई०.

प्रार्थना

प्रेम का प्रभाव जगत विदित है, मित्रता, मिलाप, सम्मिलन, उपासना, भक्ति, प्यार, मुहब्बत, इश्क, कशश, इत्तमाल, संयोग, मोह, ममता आदि सब प्रेम के ही नामांतर है, इसी की अंतम अवस्था को समाधि कहा जाता है, सब शास्त्रों का प्रयोजन सुख प्राप्ति में है, और निस्संदेह सुख निज स्वरूप के ज्ञान बिना, निज स्वरूप का ज्ञान प्रेम बिना नहीं हो सक्ता, इस गूढ़ अभिप्राय को सिद्ध करने के कारण किसी युक्ति की आवश्यकता नहीं, क्योंकि अनुभूत और स्वतः प्रमाण पदार्थ में युक्ति अयुक्ति होजाती है, पदार्थ विद्या के तत्वदृष्टा भली भांति जानते और मानते हैं कि प्रमाणुओं के सम्मिलन अर्थात् प्रेम बिना संसार की उत्पत्ति और स्थिति असंभव है, कहां तक वर्णन करूं प्रेम समुद्र अथाह और अगाध है, जिस का ओर छोर नहीं, अनंत कारण का कार्य्य भी अनंत हुआ करता है यह नियम है, प्रेम और परमेश्वर में भेद का गंधमात्र भी नहीं, इस कारण प्रेम का अगाध और अथाह होना साधारण वार्ता है, कर्म्म, उपासना, ज्ञान तीनों

कांड प्रेम काड के अंतरगत हैं, महात्मा कौंट टॉलस्टाय ने जिस सुलभता से शास्त्रीय गुह्य, सूक्ष्म, उत कृष्ट आशयों को स्थूल रूप से इन कहानियों द्वारा प्रकाश किया है वह अकथनीय है, मैं अपने सुहृद पाठकों मे केवल यही विनय करता हूं कि वह इन कहानियों को विचार और विवेक दृष्टि से वेर वेर पढ़ें, यदि इस मनन और निदिध्यासन से किसी एक प्राणी के चित्त में भी प्रेम रूपी बीज जम कर परउपकार रूपी वृक्ष वन जाय, तो संसार उन्नति, देश उन्नति, जाति उन्नति, और आत्मउन्नति के अद्भुत विचत्र मधुर फल लग जाने में संदेह ही क्या हो सक्ता है ॥

अव मै अपने परम मित्र महाशय सरदार जुगेंद्रसिंह साहिव होम मिनिस्टर पटियाला राजधानी का धन्यवाद करता हूं, जिन्हों ने मुझे महात्मा टॉलस्टाय की पुस्तक का अनुवाद करने पर उत्साहिक किया ॥

ओम् शान्ति ३

आत्माराम ।

पटियाला १८ दिसम्बर १९१८

पहला भाग



बालकों की कहानियां



पहली कहानी



परमात्मा सच को देखता है परन्तु देर में—

विलासपुर नगर में पूर्णशाह नामी युवक सौदागर बसता था, वहा उसकी अपनी दो दुकानें, और एक रहने का मकान था। वह सुन्दर था, उस के बाल कोमल, चमकीले, और घुघराले थे, वह हंसोड़, और गायन विद्या का बडा प्रेमी था. युवा अवस्था में उसे मद्यपीने की बान पड गई थी, अधिक पीजाने पर कभी २ हल्ला भी मचाया करता था, परन्तु विवाह कर लेने पर उसने मद्य सेवन नितांत छोड़ दिया था॥

ग्रीष्मऋतु में एक समय वह गंगा कुंभ पर जाने को त्यार हो अपने बच्चों और स्त्री से विदा मागने आया ॥

स्त्री–'प्राणनाथ, आज न जाइये मैंने दुस्वप्न देखा है' ॥

पूर्ण–'प्रिय, तुम्हें भय है कि मैं मेले में जाकर तुम्हें भूल जाऊंगा' ॥

स्त्री–'यह तो मै नहीं जानती कि मै क्यों डरती हूं, केवल इतना जानती हूं कि मैंने यह स्वप्न देखा है कि जब तुम घर लौटे हो तो तुम्हारे बाल स्वेत होगये है' ॥

पूर्ण—'यह तो शुगुण है, अपगुण नहीं, देखो मैं सारा माल बेच मेले में से तुम्हारे लिये अच्छी २ चीजें लाऊंगा' ॥

यह कह विदा माग, गाड़ी पर बैठ वह चल दिया, आध में पहुचने पर उसे उसका पूर्व परिचित एक सौदागर मिला, वह दोनों रात्रि को एकही सराय में ठहरे, संध्या समय भोजन कर पास की कोठरियों में सोगये, पूर्णशाह को सुदे मे जग उठने का अभ्यास था, उसने यह विचार करके कि ठंडे २ राह चलना सुगम होगा, मुंह अंधेरे उठ गाड़ी त्यार कराई औ

भटियारे के दाम चुका कर चलता बना। पच्चीस कोसजाने पर, घोड़ों को आराम देने के निमित्त एक सराय में ठेहरा, और आगन में बैठ कर सतार बजाने लगा—

अचानक एक गाड़ी आई—एक पुलिस का कर्म्मचारी और दो सिपाही उतरे, कर्म्मचारी उस के समीप आकर पूछने लगा कि 'तुम कौन हो और कहा से आये हो'—वह सब कुछ बतला कर बोला कि 'आइये भोजन कीजिये'—परन्तु कर्म्मचारी बेर? यही पूछता था कि तुम रात को कहा ठहरे थे, अकेले थे अथवा कोई साथ था, तुमने साथी को आज सवेरे देखा या नहीं, तुम मुंह अन्धेरे क्यों चले आये।

पूर्णशाह को अचम्भा हुआ कि बात क्या है? यह प्रश्न क्यों पूछे जा रहे है।

पूर्ण—'आप तो मुझ से इस भाति पूछते है कि जैसे मै कोई चोर अथवा डाकू हू—मैं तो गङ्गा स्नान करने जा रहा हू—आप को मुझ से क्या प्रयोजन है'—

कर्म्मचारी—'मै इस प्रान्त का पुलिस अफसर हूं, और यह प्रश्न इस निमित्त करता हू कि जिस सौदागर

के साथ तुम कल रात सराय में सोए थे, वह मारा गया, हम तुम्हारी तलाशी लेने आये है।

यह कह पूरणशाह के असबाव की तलाशी लेने लगा. थैले में से एक छुरा निकला, वह लोहू से भरा हुआ था, यह देख कर पूरणशाह डर गया।

कर्म्मचारी–' यह छुरा किस का है, इस पर लोहू कहां से लगा '॥

पूर्णशाह चुप रह गया उसका कण्ठ रुक गया, तुतला कर कहने लगा –' म–मेरा नही–म–मै नहीं जानता॥

कर्म्मचारी–'आज सवेरे हमने देखा कि वह सौदागर' गला कटे चारपाई पर पड़ा है, कोठडी अन्दर से बन्द थी, सिवाय तुम्हारे भीतर कोई न था, अब यह लोहू से भरा हुआ छुरा इस थैले में से निकला है, तुम्हारा मुख तुम्हारा अन्तरीय भाव प्रकट कर रहा है, बस तुमने ही उसे मारा है, बतलाओ किस तरह मारा और कितना रुपया चुराया है' ॥

पूर्णशाह ने सौगन्द खा कर कहा–' मैंने सौदागर को नहीं मारा, भोजन करने के पीछे फिर मैंने उसे

नहीं देखा, मेरे पास अपने आठ हज़ार रुपये हैं, यह छुरा मेरा नहीं'।

परन्तु उस का गला रुक कर मुख पीला पड गया और वह पापी की भांति भय मे कांपने लगा।

पुलिस अफ़सर ने सिपाहियों को हुक्म दिया कि पूर्णशाह की मुशकें कस कर गाड़ी में डाल दो, सिपाहियों ने वैसा ही किया, वह रोने लगा, अफसर ने पास के थाने पर लेजा कर उसका रुपया पैसा छीन उसे हवालात मे दे दिया।

तद पश्चात विलासपुर में पहुच यह निर्णय किया गया कि उसका आचार कैसा है, सब लोगों ने यही कहा कि पहले वह मद्य पीकर व्यर्थ अपना समय व्यतीत किया करता था। परन्तु अब उसका आचार बहुत अच्छा है। अदालत में तहक़ीक़ात होने पर उसे राम पुर निवासी सौदागर के बध और बीस हज़ार रुपये चुरा लेने का अपराधी ठहराया गया॥

पूर्णशाह की स्त्री बड़ी निराश थी, उसे इस बात पर विश्वास न होता था, उसके बालक अति किशोर थे, वह सब को साथ ले कर पूर्णशाह के पास पहुंची

पहले २ तो कर्म्मचारियों ने उसे अपने पति से मिलने की आज्ञा न दी, परन्तु अति विनय करने पर आज्ञा मिलगई और पहरे वाले उसे कारागार में ले गये, ज्यूं ही उसने अपने पति को बेडी डले हुए कैदी के कपड़े पहरे, चोरों और डाकुओं के बीच में बैठा देखा, वह बे सुध होकर धरती पर गिर पड़ी, चिरकाल पीछे सुध आई। वह बच्चों सहित पति के निकट बैठ गई और घर का हाल कह कर पूछने लगी कि यह क्या हुआ, पूर्णशाह ने सारा वृतान्त कह सुनाया॥

स्त्री—'तो अब क्या बन सक्ता है'॥

पूर्ण—'हमें महाराज से विनय करनी चाहिये कि वह निर अपराधी को जान से न मारें॥

स्त्री—'मैने महाराज से विनय की थी परन्तु वह स्वीकार नहीं हुई॥

पूर्णशाह चुप हो गया उसका मुख मलीन पड़ गया॥

स्त्री—'मेरा स्वप्न वृथा न था, आप को स्मरण होगा कि मैने आप को उस दिन मेले पर जाने से रोका था—प्राणनाथ, मै आप की अर्धांगी हू, सत्य २ कहो कि क्या आपने उस सौदागर का वध किया है'॥

पूर्ण—'क्या तुम्हें भी मेरी बातों में सन्देह है'! यह कह कर वह मुंह ढांप रोने लगा, इतने में सिपाही ने आकर स्त्री को वहां से हटा दिया और पूर्णशाह सदैव के लिये अपने परिवार से विदा होगया॥

घर वालों के चले जाने पर जब पूर्णशाह ने यह विचारा कि मेरी स्त्री भी मुझे अपराधी समझती है तो बोला—' बस मालूम होगया, परमात्मा के बिना और कोई नहीं जान सक्ता कि मै पापी हू अथवा नहीं उसी मे प्रार्थना करके दया की आशा रखनी चाहिये'।

फिर उसने छूटने का कोई उद्योग नहीं किया। शान्ति से ईश्वर भजन करने लगा —

पूर्णशाह को पहले तो कोडे मारे गये, पीछे उसे लोहगढ के बंदीखाने में भेज दिया गया—

२६ वर्ष बंदीखाने में रहने पर उसके बाल स्वेत होगये, कमर टेढी होगई, मुख मलीन तन छीन, वह सदैव उदास रहता था, कभी न हसता था, परन्तु भगवान भजन में नित्यतत्पर रहता था।

वहा उसने दरी बुनने का काम सीख कर कुछ

रुपया जमा करके " महात्माओं का जीवन चरित्र " नाम की एक पुस्तक मोल लेली, दिन भर पुस्तक पढ़ता रहता और अवकाश मिलने पर बंदी खाने के निकट वाले मन्दर में जा कर पूजा पाठ भी कर लेता था—वहा के कर्म्मचारी उसे सुशील जान कर उसका मान करते थे, और कैदी सन्मान पूर्वक बूढा बाबा अथवा महात्मा कह कर पुकारा करते थे, कैदियों को जब कभी कोई अरज़ी भेजनी होती तो वह उसे अपना मुखिया बनाते और अपने झगडे भी उसी से चुकाया करते थे।

बंदी खाने में रहते २ उसे घर का कोई समाचार नही मिला कि उसकी स्त्री बालक जीते है अथवा मर गये —

एक दिन कुछ नये कैदीं वहा आये, संध्या समय नये और पुराने कैदी आपस में बातचीत करके पूछने लगे कि भई तुम कहां से आये हो और तुमने क्या क्या अपराध किय हैं, पूर्णशाह उदास बैठा सुनता रहा। नवीन कैदियों में से एक कैदी, जो मुसटंडा, साठ वर्ष की अवस्था का था जिसकी लम्बी सफैद

'भाईयो–मेरे मित्र का घोडा एक पेड से बंधा हुआ था, मित्र कही गया हुआ था, मुझे घर जाने की जलदी पडी हुई थी, मै उस घोड़े पर सवार हो कर घर चलो गया, वहा जाकर मैंने घोडा छोड दिया, पुलिस वालों ने चोर ठेहरा कर मुझे पकड़ लिया, यद्यपि कोई यह नहीं बतला सका कि मैंने किसका घोडा चुराया और कहां से, फिर भी चोरी के अपराध में मुझे यहा भेज दिया है इससे पहले एक वेर मैंने ऐसा अपराध किया था कि मै लोहगढ़ में भेजे जाने के लायक था परन्तु मुझे उस समय कोई नही पकड़ सका–अब विना अपराध ही यहा भेज दिया गया हू ।

एक कैदी– 'तुम कहां से आये हो' ॥

जवान—'विलासपुर से–मेरा नाम रुल्दू है' ॥

पूर्ण–'भला रुलदूसिंह, तुम्हें पूर्णशाह के घर वालों का कुछ हाल मालूम है–वह जीते है कि मर गये'—

रुलदू–जानना क्या मैं उन्हें भली भाति जानता हूं–उनका स्वामी यहा लोहगढ में कैद है–वह अच्छे मालदार है–बूढे बावा तुम यहा किस प्रकार आये'–

पूर्ण—हाय कह कर –'मैं अपने पापों के कारण २६ वर्ष से यहां पड़ा सड़ रहा हूं'–

रुलदू—'क्या पाप, मै भी सुनू'–

पूर्ण—'भई जाने दो, पापों का फल अवश्य भोगना पड़ता है' ॥

पूर्णशाह तो चुप कर गया, परन्तु दूसरे कैदियों ने रुलदू को सारा हाल कह सुनाया कि वह एक सौदागर के वध करने के अपराध में यहा कैद है, रुलदू पूर्णशाह को देख कर घुटने पर हाथ मार कर बोला ॥

'वाह वाह, वड़ा अचरज है २ बावा अब तुम्हारी अवस्था क्या है' ॥

दूसरे कैदी रुलदू से पूछने लगे कि तुम पूर्णशाह को देख कर चकित क्यों हुए, तुमने क्या पहले कहीं उसे देखा है–परन्तु रुलदू ने कोई उत्तर नहीं दिया ॥

पूर्णशाह के चित्त में यह संशय उतपन्न हुआ कि स्यात रुलदू रामपुरी सौदागर के असली मारने वाले को जानता है ॥

पूर्ण—'रुलदूसिंह क्या तुमने यह बात पहले सुन रक्खी है–और मुझे भी पहले कहीं देखा है' ॥

रुद्र—'यह बात तो सारे संसार में फैल रही है मैं किस तरह न सुनता, पर यह चिरकाल की बात है, मुझे कुछ स्मरण नहीं रहा' ॥

पूर्ण—'तुम्हें मालूम है कि उस सौदागर को किसने मारा था' ॥

रु—'जिसके थैले में से छुरा निकला वही उसका मारने वाला, यदि किसी ने थैले में छुरा छिपा भी दिया हो तो जब तक वह पकड़ा न जाय क्या बन सक्ता है—थैला तुम्हारे सिरहाने धरा था, यदि कोई दूसरा पास आकर छुरा थैले में छिपाता तो तुम अवश्य जाग उठते' ॥

यह बातें सुन कर पूर्णशाह को निश्चय होगया कि सौदागर को इसी ने मारा है, वह उठकर वहा से चल दिया, और रात्रि भर नहीं सोया, अत्यंत दुखी रहा उसे अनेक प्रकार के दृश्यं दिखाई देने लगे, पहले वह दृश्य दिखाई दिया जब वह मेले जाने को उपस्थित था, स्त्री सच मुच सामने खडी जाने का निषेध कर रही है, फिर बालक दिखाई पड़े, फिर युवा अवस्था की याद आई फिर सराय और पुलिस

वालों का सीन सामने आया, फिर लोगों का कोड़े लगते देखना दीख पड़ा,फिर बेड़ी और बन्दी खाना फिर बुढापा और २६ वर्ष का दुख, यह सब बातें चिन्तन कर के वह आत्मघात पर प्रस्तुत होगया।

'हाय इस रुलदू चाडाल ने यह क्या किया–मै तो अपना सर्व नाश करके भी इस से बदला अवश्य लूंगा'।

सारी रात भजन करने पर भी उसे शांति नही हुई दिन में उसने रुलदू को देखा तक नही, पन्द्रह दिन बीत गये, पूर्णशाह की यह दशाथी कि रात को नींद न दिन को चैन, क्रोधाग्नि में जल रहा था—

एक रात वह अपनी कोठड़ी में टहल रहा था कि सामने कोई चीज़ हिलती दिखाई पड़ी, देखा तो रुलदू सामने खड़ा भय से काप रहा है, पूर्णशाह आखें मूंद कर आगे जाना चाहता था कि रुलदू ने उसका हाथ पकड लिया॥

रुलदू—'देखो, मैने जूतों में मिट्टी भर के बाहर फैंक कर यह सुरग लगाई है, चुप, मै तुमको यहां से भगा देता हूं–यदि शोर करोगे तो जेल के अफ़सर

मुझे जान से मार डालेंगे, परन्तु याद रक्खो कि तुम्हें मार कर मरूंगा, यू नहीं मरता' ॥

पूर्णशाह अपने शत्रु को देख कर भय से कांप उठा, और हाथ छुड़ा कर बोला ॥

'मुझे भाग ने की इच्छा नहीं–रहा मारना, मुझे मार तो तुम्हें २६ वर्ष होचुके, कर्म्मचारियों को यह हाल प्रकट करने के विषय में जैसी परमात्मा की आज्ञा होगी वैसा होगा, मै बतलाऊं अथवा न बत लाऊं कुछ कह नही सक्ता' ॥

अगले दिन जब कैदी बाहर काम करने गये, तो पहरे वालों ने सुरंग की मिट्टी बाहर पड़ी देखली, खोज लगाने पर सुरंग का पता चल गया, हाकम सब कैदियों से पूछने लगे। किसी ने न बतलाया क्योंकि वह जानते थे, कि यदि बतला दिया तो रुलदू मारा जायगा। अफसर पूर्णशाह को सत्यवादी जानते थे, उस से पूछने लगे ॥

अफ०–' बूढे बाबा, तुम सत्यवादी हो–परमात्मा को सर्वव्यापी जान कर सच बताओ कि यह सुरंग किसने लगाई है।

रुलदू पास ऐसे खडा था कि कुछ जानता ही नहीं

पूर्णशाह के होंठ और हाथ कांप, रहेथे—चुप—विचार करने लगा कि जिमने मेरा सारा जीवन नाश कर दिया। उसे क्यों छिपाऊं—दुख का वदला दुख उसे अवश्यै भोगना चाहिये, परन्तु वतला देने पर फिर वह वच नही सक्ता, स्यात यह सव मेरा भ्रम मात्र हो, सौदागर को किसी और ने ही मारा हो यदि इस ने भी मारा है तो इसे मरवा देने से मुझे क्या लाभ होगा ॥

अफ०—' वावा चुप क्यों होगये, वतलाते क्यों नहीं ?'

पूर्ण—'मै कुछ नही वतला सक्ता—आप जो चाहें सो करें' ॥

हाकम ने वेर २ पूछा, परन्तु पूर्णशाह ने कुछ भी नहीं वतलाया, वात आई गई हुई।

उसी रात पूर्णशाह जव अपनी कोठड़ी में लेटा हुआ था, रुलदू चुप के से भीतर आकर पास वैठगया, पूर्णशाह ने देखा और कहा —

पूर्ण—रुलदू सिंह अव और क्या चाहते हो यहा तुम क्यों आये' ॥

रुलदू चुप वैठा रहा ॥

पूर्ण–'तुम क्या चाहते हो, यहा से चले जाओ नहीं तो मैं पहरे वाले को बुलालूगा' ॥

रुल्दू–(पांव में पडकर)–'पूर्ण शाह मुझे क्षमा कर क्षमा कर ॥

पूर्ण—क्यों ?

रुल्दू–'मैने ही उस सौदागर को मारकर छुरा तुम्हारे थेले में छिपाया था मै तुम्हे भी मारना चाहता था परन्तु बाहर से आहट हो गई, मै छुरा थेले में रख कर भाग निकला' ॥

पूर्णशाह चुप होगया कुछ नही बोला ॥

रुल्दू 'भाई पूर्णशाह भगवान् के वास्ते मुझ पर दया कर, मुझे क्षमा कर मै कल अपना अपराध अगीकार कर लूगा, तुम छूट कर अपने घर चले जाओगे'–

पूर्ण–'बातें बनाना सहज है, २६ वर्ष के इस दुख को देखो, अब मैं कहा जासक्ता हूं' ॥

रुल्दूसिंह–धरती से माथा फोड़ रो रो कर कहने लगा ॥

'मुझे कोड़े लगने पर भी इतना कष्ट नहीं हुआ

था जो अब तुम्हे देख करहो रहा है, तुमने दया कर के सुरंग की बात नहीं बतलाई, पूर्णशाह क्षमा करर मैं अत्यंत दुखी हो रहा हू'

यह कह रुलदू धाड २ रोने लगा, पूर्णशाह के नेत्रों से भी जलकी धारा वह निकली ॥

पूर्ण–'परमात्मा तुमपर दया करें, कौन जाने कि मैं अच्छा हू अथवा तुम अच्छे हो मैने तुम्हे क्षमा किया' ॥

अगले दिन रुलदू सिंह ने स्वयं कर्म्म चारियों के पास जाकर सारा हाल सुना करके अपना अपराध मानलिया परन्तु पूर्णशाह को छोड़ देने का जब परवाना आया, तो उस का देहांत हो चुका था॥

दूसरी कहानी।



राजपूत कैदी।

सुमेरसिंह नामी राजपूत राजपूताने की सेना में एक अफ़सर था, एक दिन माता की पत्री आई

कि मै बूढी होती जाती हूं, मरने से पहले एक वेर तुम्हें देखने की अभिलाषा है, यहा आकर मुझे विदा करके आशीर्वाद ले, क्रिया कर्म्म करके आनद पूर्वक नौकरी पर लौट जाना, तुम्हारे वास्ते मैं ने एक कन्या खोज रक्खी है, वह बड़ी बुद्धिमती और धनवान है यदि तुम्हें भावे तो उससे विवाह करके सुख पूर्वक गृहमें रहना ॥

उस ने सोचा कि निस्संदेह माता बूढी होकर नित्य दुर्बल होती जाती है, संभव है कि फिर मै उस के दर्शन न कर सकू, इस कारण चलना ही ठीक है, कन्या यदि सुदर हुई तो विवाह करने में क्या हानि है अतएव सेनापती से छुट्टी ले कर साथियों से विदा हो वह चलने पर प्रस्तुत होगया ॥

उस समय राजपूतों और मरहटों में युद्ध होरहा था, रास्ता चलने में सदैव भय रहता था, यदि कोई राजपूत अपना किला छोड कर कुछ दूर बाहर निकल जाता था, तो मरहटे उसे पकडकर कैद कर लेते थे, इस कारण यह प्रबध किया गया था, कि सप्ताह में दो वेर सिपाहियों की एक कम्पनी मुसा-

फिरों को एक किले से दूसरे किले तक पहुंचा आया करती थी ॥

गरमी की रुत थी–दिन निकलते ही किले के नीचे असबाब की गाडियां लदकर त्यार होगई, सिपाही बाहर आगये, और सब ने सडक की राहली. सुमेरसिंह घोडे पर सवार हो आगे चलरहा था सोलह मील का सफ़र था, गाडिया धीरे २ चलती थीं, कभी सिपाही ठहर जाते थे कभी गाडी का पहिया निकल जाता था. कभी कोई घोडा अडजाता था ॥

दुपहर ढल चुकी थी, रास्ता आधा भी नहीं कटा था, गरमेरत उड़रहा था, धूप आग का काम कररही थी, छाया कहीं नहीं थी साफ़ मैदान था सड़क पर वृक्ष न कोई झाडी सुमेरसिंह आगे था और कभी २ इस कारण ठहर जाता था कि गाडिया आकर मिल जाएं, मनमें विचारने लगा कि आगे क्यों न चलूं घोड़ा तेज है, यदि मरहटे धावा करेंगे तो घोड़ा दौडाकर निकल जाऊंगा, यह सोचही रहा था कि कुंवरसिंह बन्दूक हाथ में लिये उसके

पास आया और बोला, 'आओ, आगे चलें, इस समय बडी गरमी है, मै भूख के मारे व्याकुल हो रहा हू, सब कपडे पसीने से भीगरहे हैं। कुवेर भारी भरकम आदमी था उसका मुंहलाल होरहा था॥

सुमेरसिंह–'तुम्हारी वन्दूक भरी हुई है कि नहीं

कुवेर–' हा भरी हुई है '।

सुमेर०–' अच्छा चलो, पर बिछड न जाना ' वह दोनों चल दिये, बातें करते जाने थे, पर ध्यान दाएं वाएं था, साफ मैदान होने के कारण दृष्टि चारों ओर जासक्ती थी, आगे चलकर सड़क दो पहाड़ियों के बीचसे होकर निकली थी ॥

सुमेरसिंह–उस पहाड़ी पर चढकर चारों ओर देखलेना उचित है, ऐसा न हो कि अचानक मरहटे कहीं से आकर हमें पकड़ लें ॥

कुवेरसिंह–'इससे क्या प्रयोजन है चले भी चलो'॥

सुमेरसिंह–'नहीं–आप यहा ठहरिये, मैं जाकर देख आता हू ॥

सुमेर ने घोडा पहाडी की ओर फिरा दिया घोडा शिकारी था, उसे पक्षी की भाति ले उड़ा वह

हाड़ी की चोटी पर नही पहुंचा था कि सौ कदम आगे तीस मरहटे दिखाई पडे, सुमेर लौट पड़ा परन्तु मरहटों ने उसे देख लिया वह बन्दूकें संभाल कर घोड़े दौड़ा उसपर लपके, सुमेर अत्यन्त शीघ्रता से नीचे उतरा, और कुवेर को पुकार कर कहने लगा—'बन्दूक त्यार रक्खो' और घोडे से बोला—' प्यारे, अब समय है—देखना ठोकर न खाना, नही तो झगड़ा समाप्त हो जायगा; एक वेर बन्दूक ले लेने दे; फिर मै किसी के वाधने का नही, उधर कुवेर मरहटों को देखकर घोड़े को चाबुक मार ऐसा भागा कि गरदे में घोड़े की पूछही पूछ दिखाई दी और कुछ नही ॥

सुमेर ने देखा कि काम तो विगड़ गया खाली तलवार से क्या बनेगा, वह किले की ओर भाग निकला, परन्तु छै मरहटे उसपर टूटपड़े; सुमेर का घोडा तेज था; पर उन के घोड़े उससे भी तेज़ थे तिसपर वात यह हुई कि वह सामने से आरहे थे, सुमेर चाहता था कि घोडे की वाग मोड़ कर उसे दूसरे रास्ते पर डाल दे, परन्तु घोड़ा इतना -

तेज जारहा था कि रुकनहीं सका; सीधा मरहटों से जाटकराया, सबजे घोडे पर सवार बन्दूक उठाये लाल दाढ़ी वाला एक मरहटा दांत निकालता हुआ उसकी ओर लपका, सुमेर ने कहा कि मैं इन दुष्टों को भली भांति जानता हूं; यदि वह मुझे जीता पकड लेंगे तो किसी कंदरा में फेक कर कोडे मारा करेंगे; इसलिये क्या तो आगे निकलो नही तो तलवार से एक दो का ढेर कर दो मरना अच्छा है, कैद होना ठीक नहीं सुमेर और मरहटों में दसहाथ का ही अंतर रह गया था कि पीछे से गोली चली; सुमेर का घोडा घायल हो कर गिरा और वह भी उसके साथही धरती पर आरहा ॥

सुमेर उठना चाहता था कि दो मरहटे आकर उसकी मुशकें कसने लगे, सुमेर ने धक्का देकर उन्हें दूर गिरा दिया, परन्तु दूसरों ने आकर बन्दूक के कुन्दों से उसे मारना आरम्भ किया, और वह घायल होकर फिर पृथ्वी पर गिरपडा—मरहटों ने उसकी मुशकें कसली कपड़े फाड दिये रुपया पैसा

सब छीन लिया, सुमेर ने देखा कि घोड़ा जहां गिरा था वहीं पड़ा है, एक मरहटे ने पास जाकर ज़ीन उतारना चाहा; घोड़े ने लात चलाई मरहटे ने गले पर तलवार फेरदी, घोड़ा मरगया—और उसने ज़ीन उतारा लिया ॥

लाल दाढी वाला मरहटा घोड़े पर सवार होगया दूसरों ने सुमेर को उसके पीछे बिठाकर उसे उसकी कमर मे बांध दिया और जंगल का रास्ता लिया ॥

सुमेर का बुरा हाल था, मस्तक फटगया था, लोहू बह कर आखो पर जमगया था, मुशकों के मारे शरीर पीडत था, वह हिल नहीं सक्ता था, मरहटे पहाड़ियों पर ऊपर नीचे होते हुए एक नदी पर पहुचे उसे पार करके एक घाटी मिली सुमेर यह जानना चाहता था कि वह किधर जारहे है परन्तु उस के नेत्र बन्द थे, वह कुछ न देख सका ॥

सायं काल होने लगी, मरहटे दूसरी नदी पार करके एक पथरीली पहाडी पर चढ़गये, यहा धुआ और कुत्तों का भौंकना सुनाई दिया, मानो कोई बस्ती है, थोड़ी दूर चल कर गांव आगया, मरहटों

ने घोड़े छोड दिये, सुमेर को एक ओर धरती पर बिठा दिया, बालक आकर उस पर पत्थर फैंकने लगे, परन्तु एक मरहटे ने उन्हें वहा से भगा दिया, लालदाढ़ी वाले ने एक सेवक को बुलाया. वह दुबला पतला आदमी फटा हुआ कुरता पहने था मरहटे ने उसे कुछ कहा वह जाकर बेडी उठालाया, मरहटों ने सुमेर की मुशकें खोल कर उसके पाव में बेडी डालदी और उसे कोठड़ी में कैद कर के ताला लगा दिया ॥

२.

उस रात सुमेर नितात नहीं सोया. गरमी की रुत में रातें छोटी होती है, शीघ्र प्रातःकाल होगया मालूम हुआ कि दीवार में एक झरोका है, झरोके द्वारा सुमेर ने देखा कि पहाडी के नीचे एक सडक उतरी है, दाई ओर मरहटे का झोंपड़ा है; उसके निकट दो वृक्ष है द्वारपर काला कुत्ता बैठा हुआ है, पास एक बकरी और उसके बच्चे पूछ हिलाते फिररहे हैं, एक स्त्री चमकीले रंग की साढ़ी पहने

पानी की गागर सिरपर धरे हुये एक बालक की उगली पकडे झोंपडे की ओर आरही है—वह अंदर गई कि लालदाढी वाला मरहटा रेशमी कपड़े पहरे चादी के मुठे की तलवार लटकाए हुये बाहर आया और सेवकसे कुछ बात करके चलदिया—फिर दो बालक घोडों को पानी पिलाकर लौटते हुए दिखाई पड़े इतने में कुछ बालक कोठड़ी के निकट आकर झरोके में टहनिया फसाने लगे प्यास के मारे सुमेर का कठ सूखा जाता था; उसने उन्हें पुकारा, परन्तु वह भाग गये ॥

इतने में किसी ने कोठड़ी का ताला खोला—लालदाढी वाला मरहटा भीतर आया; उसके साथ एक नाटा पुरुष उसका सांवला रग निरमल काले नेत्र; गोल कपोल; कतरीहुई महीनदाढ़ी प्रसन्न मुख; हंसोड़ यह पुरुष लालदाढी वाले मरहटे की अपेक्षा बहुत बढिया वस्त्र पहरे हुये था; सुनहरी गोट लगी हुई नीले रंग की रेशमी अचकन थी चादी के म्यान वाली तलवार; कलावत्तु का जूता था लाल-दाढी वाला मरहटा कुछ बुड़ बुड़ाता हुआ सुमेर

को कन अंखिया देखता हुआ द्वार पर खड़ारहा सावला पुरुष आकर सुमेर के पास बैठगया, और आंखें मटका कर जल्दी २ अपनी मात्री भाषा में कहने लगा "वड़ा अच्छा राजपूत--२"-

सुमेर एक अक्षर भी न समझा, उसने पानी मागा सावला पुरुष हस दिया,तब सुमेर ने होंठ और हाथों के संकेत से जनाया किमुझे प्यास लगी है, सावले पुरुष ने पुकारा-" सुशीला "-२- ॥

एक छोटी सी कन्या दौडती हुई भीतर आई तेरह एक वर्ष की अवस्था, मावला रग दुबली पतली, नेत्र काले और रसीले, सुन्दर वदन नीली, साढी, गले में स्वर्णहार पहरेहुये प्रकट वह सावले पुरुष की पुत्री मालूम पडती थी, पिता की आज्ञा पाकर वह पानी का एक लोटा लेआई और सुमेर को देकर मुटकनी मार उसे इस भाति देखने लगी कि वह मानो कोई वनचर है, ॥

फिरठाली लोटा लेकर सुशीलाने ऐसी छलाग मारी कि सावला पुरुष हंसपडा, फिर पिता के कहने

से कुछ रोटी लेआई इसके पीछे वह सब बाहर चलेगये और कोठड़ी का ताला बन्द कर दियागया॥

कुछदेर पीछे एक सेवक आकर मरहटी में कुछ कहने लगा सुमेर समझा कि कहीं चलने को कहता है, वह उसके पीछे होलिया, वेड़ी के कारण लगड़ा कर चलता था, बाहर आकर सुमेर ने देखा कि दस घरों का एक गांव है एक घर के सामने तीन लड़के तीन घोड़े पकड़े खड़े हैं सांवला पुरुष बाहर आया और सुमेर को भीतर आने को कहा, सुमेर भीतर चलागया; देखा कि मकान स्वच्छ है गोबरी फिरीहुई है सामने की दीवार के आगे गद्दा बिछाहुआ है तकिये लगे हुये है, दाईं बाईं दीवारों पर परदेगिरे हुये हैं उनपर चादी के काम की बन्दूकें; पिस्तौल और तलवारें लटकी हुई हैं गद्दे पर पांच मरहटे बैठे है; एक सावला पुरुष दूसरा लालदाढी वाला तीन अतिथि; और सब भोजन पारहे हैं॥

सुमेर धरती पर बैठगया, भोजन से निश्चित हो कर एक मरहटा बोला॥

देखो राजपूत—तुम्हें बलवंतराउ ने पकड़ा

(सावले पुरुष की ओर उंगली करके) और सम्पतराउ के हाथ बेच डाला है, अतएव अब सम्पतराउ तुम्हारा स्वामी है ॥

सुमेर कुछ न बोला सम्पतराउ हंसने लगा—

वही मरहटा—वह यह कहता है कि तुम घर से रुपया मंगवालो, दण्ड दे देने पर तुम को छोड दिया जायगा।

सुमेर—"कितना रुपया"—

म०—"तीन हजार"।

सुमेर—"मै तीन हज़ार रुपया नहीं देसक्ता"

म०—"कितना देसक्ते हो"

सुमेर—"पाच सौ"

यह सुनकर मरहटे बडे घबडाये, सम्पतराउ मुंह से झाग फैंकने लगा, बलवन्त ने आखें नीची करली।

म०—"पाच सौ रुपये में काम नहीं चल सक्ता। बलवन्ततराउ ने सम्पतराउ का रुपया देना था। पांच सौ रुपये में तो सम्पतराउ ने तुम्हें मोल ही लिया है, तीन हज़ार से कम नहीं होसक्ता, यदि

रुपया न मंगाओगे तो तुम्हें कोड़े मारे जायेंगे। सुमेर ने सोचा कि जितना डरोगे, यह दुष्ट उतना ही डरायेंगे।

सुमेर–इस कुत्ते से कह दो कि यदि मुझे कोड़ों का भय दिखाओगे तो मै घर वालों को कदापि नहीं लिखूंगा, मै तुम चाडालों से नही डरता।

म०–अच्छा एक हजार मंगाओ।

सुमेर–पांच सौ से एक कौडी ज़्यादह नही यदि तुम मुझे मार डालोगे तो इस पाच सौ से भी हाथ धोवैठोगे:—

यह सुनकर मरहटे आपस में सलाह करने लगे–इतने में एक सेवक एक मनुष्य को साथ लिये हुए भीतर आया–मनुष्य मोटा था, नगे पैर बेड़ी पड़ी हुई सुमेर देखकर चकित होगया, वह पुरुष कुंवरसिंह था सेवक ने कुंवर को सुमेर के पास बैठा दिया वह एक दूसरे से अपनी विथा कहने लगे–सुमेर ने अपना वृत्तान्त कह सुनाया। कुंवर बोला मेरा 'घोड़ा अड़

गया, बन्दूक़ रंचक चाट गई, और सम्पतराउ ने मुझे पकड़ लिया।

म०-(फिर) अब तुम दोनों एक ही स्वामी के वश में हो जो पहले रुपया देदेगा वही छोड़ दिया जायगा, (सुमेर की ओर देखकर) देखो तुम कैसे क्रोधी हो. और तुम्हारा साथी कैसा सुशील है, उस ने पाच सहस्र मुद्रा भेजने को घर लिख दिया है, इस कारण उसका पालन पोषण भली भान्ति किया जायगा।

सुमेर-मेरा साथी जो चाहे सो करे, वह धनवान है और मै निर्धन हूं, मै तो पाच सौ रुपये से अधिक नही देसक्ता, चाहे मारो चाहे छोडो—

मरहटे चुप होगये सम्पतराउ झट मे क़लमदान उठा लाया-काग़ज़ कलमदवात निकाल कर सुमेर की पीठ ठोक उसे लिखने को कहा। तात्पर्य्य यह कि वह पाचसौ रुपये लेने पर राज़ी होगया था।

सुमेर-किंचित ठहरो, देखो हमारा पालन पोषण भली भाति करना हमें एक साथ रखना कि हमारा काठ अच्छी तरह कटजाय बेड़िया भी निकालदो:—

मं–जैसा चाहो वैसा भोजन करो। वेड़ियां नहीं निकाल सक्ता। स्यात तुम भाग जाओ हां रात को निकाल दिया करूगा।

सुमेर ने पत्र लिख दिया परन्तु पता सब झूठ लिखा क्योंकि वह मन में निश्चय कर चुका था कि कभी न कभी भाग जाऊगा।

तदपश्चात मरहटों ने कुबेर और सुमेर को एक कोठरी में पहुचाकर एक लोटा पानी, कुछ वाजरे की रोटिया देकर ऊपर से ताला बन्द कर दिया।

३.

सुमेर और कुबेर को इस प्रकार रहते २ एक मास व्यतीत हो गया–सम्पतराउ उनको देखकर सदैव हंसता रहता था पर खाने को बाजरे की अधपकी रोटी के सिवाय और कुछ न देता था। कुबेर उदास रहता और कुछ न करता। दिन भर कोठडी में पड़ा सोया रहता और दिन गिनता रहता था कि रुपया कब आवे कि छूटकर अपने घर पहुंचू–सुमेर तो जानता था कि रुपया कहां से आना है–जो कुछ घर भेजता

हू माता उसी पर जीवन व्यतीत करती है, वह विचारी पाच सौ रुपये किस प्रकार भेज सकती है, ईश्वर कृपा से ऐसे भागू कि सब भौचक रह जायें, अत एव वह घात में लगा हुआ था, कभी सीटी बजाता हुआ गाव का चक्कर लगाता, कभी बैठ कर मिट्टी के खिलौने और टोकरियां बनाता, क्यों कि वह हाथों का कारीगर था।

एक दिन उसने मरहटा स्त्री की प्रति मूर्ति एक गुडिया बना कर छत पर रखदी, गाव की स्त्रिया जब पानी भरने आई तो सुशीला ने उनको बुलाकर गुडिया दिखलाई, वह सब हंसने लगीं, सुमेर ने गुडिया सब के आगे करदी परन्तु किसी ने नहीं ली, वह उसे बाहर रख कर कोठडी में चला गया कि देखें क्या होता है, सुशीला गुडिया उठा कर भाग गई।

अगले दिन सुमेर ने देखा कि सुशीला द्वार पर बैठी गुडिया के साथ खेल रही है, एक बुढिया आई उस ने गुडिया छीन कर तोड डाली, सुशीला भाग

गई, सुमेर ने और गुडिया बना कर सुशीला को दे दी, परिणाम यह हुआ कि वह एक छोटा सा लोटा लाई, भूमी पर रख कर सुमेर को दिखा कर भाग गई सुमेर ने देखा तो उसमें दूध, अब सुशीला नित्य अच्छे २ भोजन लाकर सुमेर को देने लगी।

एक दिन आंधी आई, एक घण्टा मूसलाधार मींह वरसा, नादियां नाले भर गये, बन्ध पर सात फुट पानी चढ़ आया, जहा तहां झरने झरने लगे, धार ऐसी प्रबल थी कि पत्थर लुढ़के जाते थे, गाव की गलियों में नादियां वहने लगीं, आंधी थम जाने पर सुमेर ने संपतराउ से चाकू मांग कर एक पहिया बना कर उस के दोनों ओर दो गुड़ियां वाध कर पहिये को पानी में छोड़ दिया, वह पानी के बल से चलने लगा, सारा गाव इकट्ठा होगया, फिर यह हुआ कि संपतराउ के पास एक पुराना विगड़ा हुआ घण्टा पड़ा थ , सुमेर ने उसे ठीक कर दिया, उसके पीछे और लोग अपने घण्टे, पिस्तौल, घड़ियां लाकर सुमेर से ठीक कराने लगे, इस कारण संपतराउ ने

प्रसन्न होकर सुमेर को एक चिमटी, एक बरमी और एक रेती देदी ॥

एकदिन एक मरहटा रोगी होगया, वह सुमेर के पास आकर दारू मांगने लगे, सुमेर कुछ वैद्य तो था ही नहीं, पर उसने पानी में रेता मिला कर कुछ मन्त्र सा पढ़ कर उन्हें कहा कि जाओ यह पानी रोगी को पिलादो, पानी पिलाने पर रोगी चंगा होगया, सुमेर के भाग अच्छे थे अब बहुत से मरहटे उसके मित्र बन गये।

बलवन्तराउ सुमेर से सदैव ग्लानि करता था, जब उसे देखता मुंह फेर लेता, पहाड़ी के नीचे एक बूढा रहता था, मन्दर में आने के समय सुमेर उसे देखा करता था यह बूढा नाटा दाढी मूछ बर्फ की भांति स्वेत थी, मुंह लाल था उसमें झुर्रियां पड़ी हुई उस का नाक तीक्ष्ण नेत्र निर्दयी, दो धाडों के सिवाय सब दांत टूटे हुए थे, वह लकडी टेकता चारों ओर भेडिये की न्याई झाकता हुआ मंदिर में जाने के समय जब कभी सुमेर को देख पाता था तो जल कर राख हो जाता और मुंह फेर लेता था।

एक दिन सुमेर बूढ़े का घर देखने के कारण पहाडी के नीचे उतरा, कुछ दूर जाने पर एक बगीचा मिला, चारों ओर पत्थर की दीवार बनी हुई थी बीच में मेवे के वृक्ष लगे हुये थे वृक्षों में एक झोपडा था सुमेर आगे बढ कर देखना चाहता था कि उसकी बेडी खड़की, बूढा चौंका, कमर से पिस्तौल निकाल कर उसने सुमेर पर गोली चलाई, पर वह दीवार की ओट में होगया, बूढे ने आकर सपतराउ को बहुत कुछ कहा सुना कि सुमेर बडा दुष्ट है।

सपत ने सुमेर को बुलाकर पूछा कि तुम बूढे के घर क्यों गये थे, सुमेर बोला, मैंने उसका कुछ नहीं बिगाडा, मै केवल यह देखने गया था कि वह बूढा कहां रहता है, सपत ने बूढे को शांत करने का बहुत यत्न किया पर वह बुड़ बुड़ाता ही रहा। सुमेर केवल इतना ही समझ सका कि बूढा यह कह रहा है कि राजपूतों का गांव में रहना उचित नहीं, उन्हें मार देना चाहिये, बूढा तो चल दिया, सुमेर ने सपत से पूछा कि बूढा क्या कहता था।

स०—'यह बडा आदमी है, इस ने बहुत राजपूत मारे हैं—पहले यह बड़ा धनाढ्य था, इस के तीन

स्त्रिया और आठ पुत्र थे, सब एक ही गाव में रहा करते थे, एक दिन राजपूतों ने धावा करके गाव जला दिया, इस के सात पुत्र तो मारे गये, आठवा कैद होगया, यह बूढा राजपूतों के पास जाकर और उन के संग रह कर अपने पुत्र का खोज लगाने लगा, अन्त में उसे पाकर अपने हाथ से उसका वध करके भाग आया, फिर विरक्त होकर तीर्थ यात्रा को चला गया-अब यह पहाडी के नीचे रहता है यह बूढा यू कहता था कि तुमे मार डालना उचित है परन्तु मैं तुमे मार नही सक्ता क्योंकि फिर रुपया कहा से मिलेगा, इसके सिवाय मै तुमें प्यार भी करने लगा हूं, मै नहीं चाहता कि तुम यहा से चले जाओ।



४

एक दिन संपतराउ बाहर गया हुआ था सुमेर भोजन करके तीसरे पहर रास्ता देखने की इच्छा से सामने वाली पहाडी की ओर चल दिया। संपतराउ बाहर जाते समय अपने पुत्र से सदैव यह कह जाया करता था कि सुमेर को आंखों से परे न होने देना

इस कारण बालक उसके पीछे भागा और चिल्ला-कर कहने लगा–'मत जाओ, मेरे पिता की आज्ञा नही, यदि तुम नहीं लौटोगे तो मै गांव वालों को बुला लूंगा।' सुमेर बालक को फुसलाने लगा–'मैं दूर नही जाता, केवल उस पहाडी पर जाने की इच्छा है क्यों कि रोगियों की चिकित्सा के वास्ते मुझे एक बूटी की अपेक्षा है, तुम भी साथ चलो, बेड़ी के होते भागना असम्भव है, आओ, कल मैं तुम को तीर कमान बना दूंगा'–

बालक मान गया पहाडी की चोटी कुछ दूर न थी, बेडी के कारण चलना कठन था, परन्तु ज्यूं त्यूं करके सुमेर चोटी पर पहुंच कर चारों ओर देखने लगा, अपने रहने की कोठड़ी के परे दक्षिण दिशा में एक घाटी दिखाई दी उस में घोड़े चर रहे थे, घाटी की जड़ में एक गांव था उससे परे एक ऊंची पहाड़ी थी, फिर एक और पहाड़ी थी। इन पहाड़ियों के बीचों बीच जंगल था, उस से परे पहाड थे एक से एक ऊंचा, पूर्व और पश्चम दिशा में भी ऐसी ही पहाडियां थीं, कन्द्राओं में से जहां तहां गावों का धूआं उठ रहा था, वास्तव में यह मरहटों का देश था उत्तर

की ओर देखा, तो पैरोंतले एक नदी वह रही है और वही गांव है जिस में वह रह रहा था। गाव के चारों ओर वगीचे लगे हुये हैं और स्त्रियां नदी पर बैठी वस्त्र धो रही थीं और ऐसी प्रतीत होती थीं। मानो गुड़िया बैठी हैं। गाव से परे एक पहाड़ी थी, परन्तु दक्षिण देश वाली पहाडी से नीची, उससे परे दो पहाडिया और थीं उन पर घना जंगल था, इनके वीच में मैदान था, मैदान के पार अति दूर कुछ धूआं सा दिखाई दिया, अब सुमेर ने स्मरण किया कि क़िले में रहते हुए सूर्य्य कहां से उदय होता और कहा अस्त हुआ करता था, बस उसे निश्चय होगया कि धुए का वादल हमारा क़िला है और उसी मैदान में मे जाना होगा।

अन्धेरा होगया, मंदिर का घंटा बजने लगा, पशु घर लौट आये, सुमेर भी अपनी कोठड़ी में आ गया. रातें अन्धेरी थीं, उसने उसी रात भागने का विचार किया, पर दुर्भाग्य से सध्या समय मरहटे घर लौट आये, आज उन के साथ एक मुरदा था मालूम होता था कि कोई मरहटा युद्ध में मारा गया है—

मरहटे उस शव को स्नान करा कर स्वेत वस्त्र में लपेट, अर्थी बना, राम राम सत्त कहते हुये गांव से बाहर जाकर समशान भूमि में दाह करके घर लौट आये, तीन दिन उपवास करने के पश्चात चौथे दिन अस्ति सचय करके बाहर चले गये, भंपतराउ घर में ही रहा—रातें अंधेरी थी,चाद अभी निकला ही था।

सुमेर ने कहा कि आज रात को भागना ठीक है—

सु०—'भाई कुबेर, सुरंग त्यार है, चलिये, भाग चलें'

कु०—(भय भीत होकर) 'रास्ता तो जानते ही नहीं भागेंगे किस प्रकार'।

सु०—'रास्ता मै जानता हू'।

कु०—'माना कि तुम रास्ता जानते हो, परन्तु एक रात में किले तक पहुचना असंभव है'।

सु०—'यदि किले तक नहीं पहुंच सकेंगे तो रास्ते में कहीं जंगल में छिप कर दिन काट लेंगे, देखो मैने भोजन का प्रबन्ध भी कर लिया है, यहा पड़े सड़ने से क्या लाभ है, यदि घर से रुपया न आया तो क्या बनेगा, राजपूतों ने एक मरहटा मारडाला है इस कारण वह बड़े क्रुद्ध हो रहे हैं भागना ही उचित है।'

कु०—अच्छा चलो'—

५

रात्र में जब सन्नाटा होगया तो सुमेर सुरग मे बाहर निकलें आयाँ निकलती समय कुबेर का पैर किसी पत्थर से लगकर घायल होगया, उस ने चीख मारी, संपतराउ का कुत्ता भौंका, परन्तु सुमेर ने उसे पहले ही हिला लिया था, इस कारण सुमेर का शब्द सुन कर वह चुप होगया—

रात्रि अंधेरी थी, तारे निकले हुये थे, चारों और सन्नाटा था तमोगुण का प्रभाव छाया हुआ था घाटिया धुद से ढकी हुई थीं चलते २ रास्ते में छत पर से बूढे का शब्द सुनाई दिया कि राम राम जप रहा है, वह पास से निकल गये किसी को कुछ पता न हुआ।

धुद्र बहुत छा गई, सुमेर तारों की ओर देख कर राह चलने लगा, ठंड के कारण चलना सहज था, सुमेर कूदता फांदता चला जाता था, कुवर पीछे रहने लगा—

कुबेर—' भाई सुमेर किंचित ठहरो, जूतों ने मेरे पैरों में छाले डाल दिये।'

सुमेर–'जूते निकाल कर फैक दो, नंगे पैर चलो'

कुवेर ने जूते निकाल कर फैंक दिये, पत्थरों ने उसके पांव घायल कर दिये, वह ठहर,२ कर चलने लगा।

सुमेर–' देखो कुवेर पांव तो फिर भी चंगे हो-जायेंगे, यदि मरहटों ने आ पकड़ा तो फिर समझ लो कि जान गई '–

कुवेर चुप होकर पीछे चलने लगा, थोड़ी दूर जाने पर सुमेर बोला–'हाय हाय, हम रास्ता भूलगये, हमें तो बाईं ओर की पहाडी पर चढना चाहिये था'–

कुमेर–' किंचित ठहरो, मेरे पैर घायल होगये हैं देखो, लोहू किस प्रकार वह रहा है।'

सुमेर–' कुछ चिंता नही, यह सब ठीक होजायेंगे तुम चले चलो।'

वह लौट कर बाईं ओर की पहाडी पर चढ गये, आगे जंगल मिला, झाडियों ने उन के सब वस्त्र फाड़ डाले, इतने में कुछ आहट हुई, वह डर गये, समीप जाने पर मालूम हुआ कि बारासिंगा भागा जा रहा है–

प्रातःकाल होने लगा, किला यहा से अभी सात मील पर था, मैदान में पहुंच कर कुबेर बैठ गया और बोला—

कुबेर—' मेरे पांव हार गये, मैं अब नहीं चल सक्ता '—

सुमेर—(क्रोध से)—' अच्छा तो राम राम, मैं अकेला ही चलता हू '—

कुबेर उठ कर साथ हो लिया, तीन मील चलने पर अचानक सामने से घोड़े की टाप सुनाई दी वह भाग कर जगल में घुस गये, सुमेर ने देखा कि घोड़े पर चढ़ा हुआ एक मरहटा जा रहा है, जब वह निकल गया तो सुमेर बोला कि भगवान ने बड़ी दया की कि उसने हमें नहीं देखा ' कुबेर भाई अब चलो '—

कुबेर—' मै नहीं चल सक्ता, मुझ में कोई सामर्थ्य नहीं ' ।

कुबेर मोटा आदमी था, ठण्ड के मारे उस के पैर अकड गये, सुमेर उसे उठाने लगा, उसने चीख मारी।

सुमेर—' हैं हैं—यह क्या, मरहटा तो अभी पास

ही जा रहा है, कहीं सुन न ले, अच्छा यदि तुम नहीं चल सक्ते तो मेरी पीठ पर बैठ जाओ।'

सुमेर ने कुवेर को पीठ पर बिठला कर किले की राह ली।

सुमेर—' भाई कुवेर सीधी तरह बैठे रहो, गला क्यों घोटते हो '

अब उधर की बात सुनिये कि मरहटे ने कुवेर का शब्द सुन लिया, उसने गोली चलाई, परन्तु खाली गई, मरहटा दूसरे साथियों को लेने के लिये घोड़ा दौड़ा कर चल दिया।

सुमेर—' कुवेर, मालूम होता है कि उस दुष्ट ने तुम्हारी आवाज़ सुन ली, वह अपने साथियों को बुलाने गया है, यदि उसके आने से पहले २ हम दूर नहीं निकल जायेंगे तो समझो कि जान गई', (स्वागत) यह बोझा मैंने क्यों उठाया, यदि मैं अकेला होता तो अब तक कभी का निकल गया होता।

कुवेर—' तुम अकेले चले जाओ, मेरे कारण प्राण क्यों खोते हो।

सुमेर—' कदापि नहीं, साथी को छोड़ कर चल देना धर्म्म के विरुद्ध है '

सुमेर फिर कुवेर को कन्धे पर लाद कर चलने लगा—आधा मील चलने पर एक झरना मिला, सुमेर बहुत थक गया था, कुवेर को कन्धे से उतार कर विश्राम करने लगा—पानी पीना ही चाहता था कि पीछे से घोड़ों की टाप सुनाई दी, दोनों भाग कर झाडियों में छिप गये।

मरहटे ठीक वहीं आकर ठहरे जहा वह छिपे हुए थे, उन्होंने सूंघ लेने को कुत्ता छोडा, फिर क्या था दोनों पकडे गये. मरहटोंने दोनो को घोडों पर लाद लिया, राह में सपतराव मिल गया, उसने उन को सभाल लिया. दिन निकलते २ वह सब ग्राम में पहुंच गये।

उसी समय बूढा भी वहा आगया, सब मरहटे विचार करने लगे कि क्या किया जावे, बूढे ने कहा कि कुछ मत करो, इन दोनोंका तुरन्त वध करदो।

सपत—'मैने तो उन पर रुपया लगाया है, मार किस प्रकार डालू'—

बूढा—'राजपूतों को पालना पाप है, वह तुम्हें सिवाय दुःख के और कुछ भी न देंगे, मार कर झगडा समाप्त करो।'

मरहटे इधर उधर चले गये, संपत सुमेर के पास आया और बोला—' देखो सुमेर, पंद्रह दिन के भीतर यदि रुपया न आया, और तुमने फिर भागने का साहस किया, तो मैं तुम्हें अवश्य ही मार डालूंगा इस में संदेह नहीं; अब शीघ्र घर वालों को पत्र लिख डालो कि तुरंत रुपया भेजदें '—

दोनों ने पत्र लिख दिये—फिर वह पहले की भांति कैद कर दिये गये, परन्तु कोठड़ी में नहीं, अब की बेर बारह फुट मुरब्बा गढ़े में बंद किये गये।

६

अब उन्हें अत्यन्त कष्ट दिया जाने लगा न बाहर जाने पाते थे न बेड़िया निकाली जाती थी, कुत्तों के समान अधपकी रोटी और एक लोटे में पानी पहुंचा दिया जाता था और कुछ नहीं, गढ़ा सीला था उस में अंधेरा और अति दुर्गन्ध थी कुवेर का सारा शरीर सूज गया, सुमेर मन मलीन तन छीन रहने लगा, करे तो क्या करे।

सुमेर एक दिन बहुत उदास बैठा था कि ऊपर से रोटी गिरी, ऊपर देखा तो सुशीला बैठी हुई है

सुमेर—(स्वागत) क्या सुशीला इस काम में मेरी सहायता कर सक्ती है, अच्छा इसके लिये कुछ खिलौने बनाता हूं, कल जब आवेगी तब इसे देकर फिर बात करूंगा :—

दूसरे दिन दैवगति से सुशीला नहीं आई, तीसरे दिन उसने आकर दो रोटियां गढ़े में फैकदीं, तब सुमेर बोला—' तू कल क्यों नहीं आई, देख मैंने तेरे वास्ते यह खिलौने बनाये है ।

सुशीला—' खिलौने लेकर क्या करूंगी, मुझे खिलौने नहीं चाहियें, उन्होंने तुम्हारे मार डालने का विचार कल पक्का कर लिया है, सब मरहटे इकट्ठे हुये थे, इसी कारण मैं कल नहीं आ सकी । '

सुमेर—' कौन मारना चाहता । '

सुशील—' मेरा पिता, बूढे ने यह सलाह दी है कि राजपूतों की सेना निकट आगई है, तुम्हें मार डालना ही ठीक है, हाय हाय क्या करू, मुझे तो यह सुन कर रोना आता है । '

सुमेर—' यदि तुम्हें दया आती है तो एक बास ला दो । '

सुशीला—' यह नही हो सक्ता । '

सुमेर–' सुशीला, दया कर, मै हाथ जोड़ कर तुझ मे प्रार्थना करता हू कि एक वास लादे ।'

सुशीला–' वास किस प्रकार लाऊं, वह मब घर पर बैठे है, देख लेंगे—'

यह कह कर चलती बनी ।'

सूर्य अस्त होगया, तारे चमकने लगे, चांद अभी नहीं निकला था, मंदिर का घंटा बजा, बस फिर सन्नाटा होगया सुमेर इस विचार में बैठा था कि सुशीला वास लावेगी अथवा नही ।

अचानक ऊपर से मिट्टी गिरने लगी, देखा तो सामने की दीवार में वास लटक रहा है, सुमेर अति प्रसन्न हुआ, उसने वास को नीचे खेंच लिया ।

बाहर आकाश में तारे चमक रहे थे, गढे के किनारे पर मुंह रख कर धीरे से सुशीला ने कहा– 'सुमेर सिवाय दो के और सब बाहर चले गये है ।'

सुमेर कुवेर से– 'भाई कुवेर, आओ अंतम यत्न कर देखें, हिम्मत न हारो, चलो, मै तुम्हारी सहायता करने को त्यार हूं ।'

कुवेर–' मुझ में तो करवट लेने की शक्ति नही चलना तो एक ओर रहा मैं नहीं भाग सक्ता ।'

सुमेर–' अच्छा राम ? परन्तु मुझे निर्दयी मत समझना। '

सुमेर ने कुंवर से आलिंगन किया, बांस का एक सिरा सुशीला ने पकड़ा, दूसरा सिरा सुमेर ने पकड़ा इस भांति वह बाहर निकल आया।

सुमेर–' सुशीला मैं तुम्हारा धन्यवाद करता हूं मैं जन्म भर तुम्हारे से उऋण नहीं हो सक्ता, अच्छा जीती रहो, तुझे धन्य है। '

सुमेर ने थोड़ी दूर जाकर पत्थरों से बेड़ी तोड़ने का बहुत ही यत्न किया, पर वह न टूटी, वह उसे हाथ में उठा कर चलने लगा, वह चाहता था कि चन्द्रमा उदय होने से पहले जंगल में पहुंच जाय, परन्तु पहुंच न सका, चन्द्रमा निकल आया, चारों ओर उंजाला होगया, पर सौभाग्य से जंगल में पहुचने तक राह में कोई नहीं मिला।

सुमेर फिर बेड़ी तोडने लगा पर सारा यत्न निष्फल हुआ वह थक गया, हाथ पांव घायल होगये, विचारने लगा, 'अब क्या करूं, बस चले चलो, ठहरने का काम नहीं, यदि एक बेर बैठ गया तो फिर उठना दुर्लभ होजायगा, माना कि मैं प्रातःकाल

से पहले क़िले में नहीं पहुंच सक्ता, न सही, दिन भर जंगल में काट दूंगा, रात पड़ने पर फिर चल दूंगा, पास से दो मरहटे निकले,वह झट झाड़ी में छिप गया ।

चाद फीका पड गया, सबेरा होने लगा जंगल समाप्त होगया, साफ़ मैदान आगया क़िला दिखाई देने लगा–बाईं ओर देखने पर मालूम हुआ कि थोडी दूर कुछ राजपूत सिपाही खडे है सुमेर मग्न होगया, और बोला–'अब क्या है,परन्तु ऐसा न हो कि मरहटे पीछे से आपकडें, मै सिपाहियों तक न पहुंच सकूं, इस कारण जितना भागा जाय भागो।'

इतने में बाई ओर दो सौ कर्म्म के अन्तर पर कुछ मरहटे दिखाई दिये,सुमेर निराश होगया, चिल्ला उठा, 'भाइयो, दौड़ो २ मुझे बचाओ २'–

राजपूत सिपाहियों ने सुमेर की पुकार सुनली मरहटे समीप थे, सिपाही दूर थे वह दौडे सुमेर भी चेडी उठा कर भाइयो २ कहता हुआ ऐसा भागा कि झट सिपाहियों मे जा मिला,मरहटे डर कर भाग गये–

राजपूत पूछने लगे कि तुम कौन हो और कहां

से आये हो, परन्तु सुमेर घबड़ाया हुआ भाइयो २ पुकारे चला जाता था, निकट आने पर सिपाहियों ने उने पहिचान लिया, सुमेर सारा बृत्तांत कह कर बोला—'भाइयो इस प्रकार मैं घर गया और विवाह किया, निस्सन्देह विधाता वाम था '—

एक महीना पीछे पांच हजार मुद्रा देकर कुवेर छूट कर किले में आया, वह उस समय अध मूए के समान हो रहा था ॥

तीसरी कहानी।

ध्रुव निवासी रीछ का शिकार।

हम-एक दिन रीछ के शिकार को बाहर गये मेरे साथी ने एक रीछ पर गोली चलाई, वह गहरी नहीं लगी, रीछ भाग गया, बर्फ़ पर लोहू के चिन्ह बाक़ी रह गये और कुछ नहीं।

हम एकत्र होकर यह विचार करने लगे कि तुरत पीछा करना चाहिये अथवा दो तीन दिन ठहर

कर उसके पीछे जाना चाहिये किसानों से पूछने पर एक बूढ़ा बोला :-

बूढा-' तुरंत पीछा करना ठीक नहीं, रीछ को टिक जाने दो. पांच दिन पीछे स्यात वह मिल जाय, अब पीछा करने पर तो वह डर कर भाग जायगा '।

दूसरा जवान-' नहीं नहीं, हम आज ही रीछ को मार सक्ते है, वह बहुत मोटा है दूर नही जासक्ता, सूर्य्य अस्त होने से पहले २ कही न कहीं टिक जायगा, नही तो मै बर्फ पर चलने वाले जूते पहन कर उसे ढूंढ निकालूगा।'

मेरा साथी तुरंत रीछ का पीछा करना नहीं चाहता था, मैने कहा-'झगडा करने से क्या लाभ है आप सब गांव को जाइये, मै और दुर्गा (मेरे सेवक का नाम) रीछ का पीछा करते है. मिल गया तो वाह वाह, दिन भर और करना ही क्या है '-

और सब तो गांव को चले गये, मै और दुर्गा जंगल में रह गये, अब हम बंदूकें संभाल कर कमर कस रीछ के पीछे हो लिये, ऋतु बहुत अच्छी थी

पर बर्फ पर चलना कठिन था, पैर फिसले जाते थे।

रीछ का खोज दूर से दिखाई पड़ता था, प्रतीत होता था कि भागते समय कभी तो वह पेट तक बर्फ में धस गया है, कभी बर्फ चीर कर निकला है, पहले२ तो हम उस के खोज के पीछे बड़े २ वृक्षों के नीचे चलते रहे, परन्तु घना जंगल आजाने पर दुर्गा बोला—

'दुर्गा—' अब यह मार्ग छोड देना चाहिये, प्रकट होता है कि वह यहीं कहीं बैठ गया है, धीरे २ चलो। ऐसा न हो कि डर कर भाग जाय।'

हम मार्ग छोड कर बाईं ओर लौट पडे, पाच सौ कर्म्म जाने पर सामने वही चिन्ह फिर दिखाई दिये उसके पीछे चलते २ एक सडक पर जा निकले चिन्हों से विदित होता था कि रीछ गांव की ओर गया है।

'दुर्गा—' महाराज, सडक पर खोज लगाने मे अब कोई लाभ नहीं, वह गाव को नहीं गया, आगे चल कर चिन्हों से पता लग जायगा, कि वह किस ओर गया है'

एक मील आगे जाने पर चिन्हों से ऐसा प्रकट

होता था कि रीछ जंगल की ओर से सड़क की ओर आया है मैने पूछा कि दुर्गा क्या यह कोई दूसरा रीछ है।

दुर्गा—' नहीं, यह वही रीछ है, उसने धोखा दिया है, आगे चल कर दुर्गा का कहना सत्य निकला क्योंकि रीछ दस कर्म्म सड़क की ओर आकर फिर जंगल की ओर लौट गया था।

दुर्गा—' अब हम उसे अवश्य मारलेंगे आगे दलदल है, निस्संदेह वह वहीं जाकर बैठ गया है—चलिये।'

हम दोनों आगे बढ़े, कभी तो मै किसी झाड़ी में फस जाता था, बर्फ पर चलने का अभ्यास न होने के कारण कभी जूता पैर से निकल जाता था पसीने से भींग कर मैने कोट उतार कर कन्धे पर डाल लिया, दुर्गा को कुछ श्रम प्रतीत न होता था वह बड़ी फुरती से चला जा रहा था। दो मील चल कर हम झील के उस पार पहुच गये।

दुर्गा—' देखो, सुनो सामने झाड़ी पर चिड़िया बोल रही है, रीछ वहीं है।'

हम वहां से हट कर आधेक मील चले होंगे कि फिर रीछ का खोज दिखाई दिया, मुझे इतना पसीना आ गया कि मैंने साफ़ा भी उतार दिया, दुर्गा को भी पसीना आगया था—

दुर्गा—' स्वामी काम तो बन गया, अब किंचित विश्राम कर लीजिये ।'

सन्ध्या हो चली थी, हम जूते उतार कर धरती पर बैठ गये और भोजन करने लगे, भूख के मारे रोटी ऐसी स्वाद लगी कि मैं कुछ कह नहीं सक्तों, मैंने दुर्गा से पूछा कि गाव कितनी दूर है ।

-दुर्गा—' कोई आठ मील होगा, हम रात्रि तक वहां पहुच जायेंगे आप कोट पहनलें ऐसा न हो सरदी लग जाय ।'

दुर्गा ने बर्फ़ ठीक करके उस पर कुछ झाडियां, बिछाकर मेरे वास्ते बिछोना त्यार कर दिया, मैं दो घटे बेसुध सोया, जाग कर देखता हू कि स्वेत चमकदार खंभों पर एक बडा भारी हाल कमरा बना हुआ है, उसकी छत अति श्याम है उस में रगदार अनंत दीपक जगमगा रहे हैं, मैं चकित होगया, परन्तु तुरंत

मुझे याद आई कि यह तो जंगल है यहां हाल कमरा कहां, यथार्थ में स्वेत खभे तो वर्फ से ढके हुये वृक्ष थे, रंगदार दीपक उनकी लताओं में से चमकते हुये तारे थे।

वर्फ गिर रही थी, जंगल में सन्नाटा था, अचानक आहट मालूम होने पर हम समझे कि रीछ है, परन्तु पास जाने पर मालूम हुआ कि जंगली ससे हैं। हम गांव की ओर चल दिये वर्फ ने सारा जंगल स्वेत बना रक्खा था, वृक्षों की शाखाओं में से तारे चमकते और हमारा पीछा करते ऐसे दिखाई देते थे कि मानों सारा आकाश चलायमान हो रहा है—

जब हम गांव में पहुंचे तो मेरा साथी सो गया था—मैंने उसे जगाकर सारा वृत्तांत कह सुनाया, और ज़िमींदार को अगले दिन के वास्ते शिकारी एकत्र करने को कह कर भोजन करके सो रहे, मैं इतना थक गया था कि, यदि मेरा साथी मुझे न जगाता तो मैं मध्यान काल तक सोया पड़ा रहता—जागकर मैंने देखा कि साथी वस्त्र पहरे [illegible] है और अपनी बंदूक ठीक कर रहा है।

मैं—'दुर्गा कहां है

'साथी—' उसे गये देर हुई, वह कलके खोज पर शिकारियों को इकट्ठा करने गया है।'

हम गांव के वाहर निकले, धुद के मारे सूर्य्य दिखाई न पडता था, दो मील चल कर धूंआं दिखाई पडा समीप जाकर देखा कि शिकारी आलू भुन रहे हैं और आपस में बातें करते जाते हैं दुर्गा भी वही था—हमारे पहुंचने पर वह सब उठ खडे हुये रीछ का घेरा डालने के कारण दुर्गा उन सब को लेकर जंगल की ओर चल दिया, हम भी उनके पीछे हो लिये आधा मील चलने पर दुर्गा ने कहा कि अब कहीं बैठ जाना उचित है—

मैंने खडा होने के वास्ते स्थान नियत किया, बाईं ओर ऊंचे २ वृक्ष थे, सामने मनुष्य के समाने ऊंची बर्फ से ढकी हुई घनी झाड़िया थी, इन के बीच से होकर एक पगडंडी सीधी वहा पहुंचती थी जहा मैं खडाहुआ था, दाईं ओर साफ मैदान था, वहा मेरा साथी बैठगया—

मैंने अपनी दोनों बंदूकों को भली भांति देख कर विचारा कि कहा खडा होना चाहिये, तीन

कर्म्म पीछे हट कर एक ऊंचा बृक्ष था, मैंने बन्दूक भर कर तो उसके सहारे खड़ी कर दी, घोड़ा चढ़ा कर हाथ में लेली, म्यान से त निकाल कर देख ही रहा था कि अचानक ज से दुर्गा का शब्द सुनाई दिया "वह उठा, वह इस पर सब शिकारी बोल उठे, सारा जंगल पडा, मै घात में था कि रीछ दिखाई पडा औ तुरंत गोली छोडी–

अकस्मात बाईं ओर वर्फ पर कोई काली दिखाई दी, मैंने गोली छोडी, परन्तु खाली, ग रीछ भाग गया।

मुझे बड़ा शोक हुआ कि अब रीछ इध आयगा स्यात साथी के हाथ लग जाये, मैंने वंदूक भरली, इतने में एक शिकारी ने शोर कि " यह है, यह है यहा आओ "–

मैंने देखा कि दुर्गा भाग कर मेरे साथी आया और रीछ को उंगली से दिखाने लगा. ने निशाना लगाया, मै समझा वह मारा, पर गोली भी खाली गई क्यों कि यदि रीछ गिर

तो साथी अवश्य उस के पीछे भागता वह दौडा नहीं, इससे मैने जाना कि रीछ मरा नहीं–

हैं यह क्या आपत्ति आई, देखता हूं कि रीछ भय भीत हुआ अंधाधुद भागा मेरी ओर आ रहा है मैने गोली मारी, परन्तु खाली गई दूसरी छोड़ी, वह लगी तो सही परन्तु रीछ गिरा नहीं,मै दूसरी बंदूक उठाना ही चाहता था कि उसने झपट कर मुझे दबा- लिया और लगा मेरा मुंह नोचने जो कष्ट मुझे उस समय हो रहा था मै उसे वर्णननहीं कर सक्ता ऐसा प्रतीत होता था कि मानों कोई छुरियों से मेरा मुंह छील रहा है।

इतने में दुर्गा और साथी रीछ को मेरे ऊपर बैठा देख कर मेरी सहायता को दौडे. रीछ उन्हें देख डर कर भाग गया, साराश यह कि मैं घायल होगया पर रीछ हाथ न आया और हमें खाली हाथ गाव को लौटना पडा।

एक मास पीछे हमें फिर उस रीछ को मारने के कारण शिकार को गये, मैं फिर भी उसे न मार

सका, उसे दुर्गा ने मारा, वह बड़ा भारी री
उस की खाल अब तक मेरे कमरे में बिछी

नोट—इस मृगया के पीछे महात्मा टॉ
ने दया भाव से मांस खाना छोड़ दिया था



दूसरा भाग

सर्व जनप्रिय कहानियां

चौथी कहानी

मनुष्य का जीवन आधार क्या है

१

माधो नामी एक चमार जिसके घर का घर था न धरती अपनी स्त्री और बच्चों सहित एक झोंपड़े में रह कर मेहनत मजूरी द्वारा काल व्यतीत किया करता था नफ़री कम थी अन्न महगा था, जो कमाता था खा जाता था, उसके और उसकी स्त्री के पास शीत निवारणार्थ केवल एक वस्त्र था, पूरे एक वर्ष से इस विचार में लगा हुआ था कि दूसरा वस्त्र मोल

ले, मर मार कर उस ने तीन रुपये जमा किये थे, पाच रुपये पास के गाव वालों से उस ने लेने थे।

अतएव उसने यह विचारा कि पांच रुपये गाव वालों से उगराह कर वस्त्र ले आऊं वह एक दिन घर से चला, गाव में पहुच कर वह पहले एक किसान के घर गया, किसान तो घर में नहीं था, उस की स्त्री ने कहा कि इस समय रुपया त्यार नही, फिर दे दूंगी, फिर वह दूसरे के घर पहुंचा, वहा से भी रुपया न मिला, फिर वह बनिये की दुकान पर जा-कर वस्त्र उधार मांगने लगा बानिया बोला हम ऐसे कंगालों को उधार नहीं देते, कौन पीछे २ फिरे, जाओ अपनी राहलो—

वह निराश होकर घर को लौट पड़ा।

माधो (स्वागत)—'देखो अचरज की बात है कि मै सारा दिन काम करता हू तिस पर भी पेट नहीं भरता, चलती समय स्त्री ने कहा था कि वस्त्र अवश्य लाना, अब क्या करू, कोई उधार भी तो नहीं देता, हाय हाय, इन जिमीदारों के पास घर पशु सब कुछ है, मेरे पास तो यह शरीर ही शरीर है,

न के पास अनाज के कोठे भरे पडे हैं, मुझे एक २ ाना मोल लेना पड़ता है, सात दिन में तीन रुपये ो केवल रोटी में खर्च होजाते है, क्या करूं. कहा ाऊं, हे भगवान ' सोचता २ मंदिर के पास पहुंच र देखता क्या है कि धरती पर कोई स्वेत वस्तु ड़ी है, सायंकाल के कारण कुछ अंधेरा होगया था, हले तो वह समझा कि बैल है,समीप जाने पर मालूम ुआ कि एक मनुष्य नग्न पड़ा है, माधो समझा कि याात किसी ने इसके वस्त्र छीन लिये है, मुझे क्या योजन है ऐसा न हो इस झगडे में पडने से मुझ पर ोई आपत्ति खड़ी हो जाय, चल दो ।

थोडी दूर जाकर लौटकर देखा तो वह मनुष्य खड़ा होकर उसकी ओर देख रहा है—

माधो—(स्वागत)—' क्या मुझे उसके पास लौट जाना उचित है—ऐसा न हो कोई व्याधि चिमट जाये कौन जाने यह कौन और यहा क्या करने आया है, स्यात चोर हो, मेरा ही कंठ दवाले, तिस पर नग्न मनुष्य का मैं बनाऊगा ही क्या, मेरे पास तो आप वस्त्र नही, उसे कहा से दूगा, चल देना ही ठीक है'—

परन्तु आत्मा ने फटकार बतलाई।

माधो (स्वागत)—'माधो तुम क्या करते हो, स्यात् वह मनुष्य भूख से मर रहा हो और तुम भागे जाते हो; क्या तुम इतने धनाढ्य होगये कि तुम्हें चोरों का भय होने लगा, धिक्कार इस विचार पर धिक्कार'

अतएव माधो उस मनुष्य के पास लौट आया-

२

पास पहुंच कर माधो ने देखा कि वह मनुष्य निरोग्य और युवक है, वस्त्र वहीन केवल शीत से दुखी हो रहा है, उस मनुष्य का माधो को आंख भरकर देखना था कि माधो उस पर तत्काल आसक्त होगया, और अपना कोट उतार कर बोला—

मा—' यह समय बातें करने का नहीं, यह कोट पहर लो और मेरे संग चलो '—

मनुष्य का शरीर स्वच्छ, मुख दयालु, हाथ पाव सडौल ये वह प्रसन्न वदन था माधो ने उस पहरा दिया—

माधो—' मित्र अब चलो, बातें पीछे होती रहेंगी।'

मनुष्य ने प्रेम भाव से माधो को देखा और कुछ न बोला।

माधो—' आप बोलते क्यों नहीं, यहां ठंड है, घर को चलें, यदि तुम चल नहीं सक्ते तो यह लो लकड़ी इस के आश्रय चलो।

मनुष्य माधो के पीछे २ हो लिया।

माधो—' तुम कहां रहते हो।'

मनुष्य—' मै यहां का रहने वाला नहीं।'

माधो—' मै भी यही समझा था, क्यों कि यहां तो मैं सब को जानता हूं, तुम मंदिर के पास किस भांति आ गये।'

मनुष्य—' यह मै नहीं बतला सक्ता।'

माधो—' क्या तुम को किसी ने दुख दिया है?'

मनुष्य—' मुझे किसी ने दुख नहीं दिया, अपने कर्म्मों का भोग है, परमात्मा ने मुझे दंड दिया है।'

माधो—' निस्संदेह परमेश्वर सब का स्वामी है, परन्तु उदर भर अन्न शीत निवारण वस्त्र तो प्राणी मात्र को आवश्यक है, तुम अब कहां जाना चाहते हो।'

मनुष्य–जहा ईश्वर-इच्छा, मै कुछ नहीं कह सक्ता।'

माधो चकित होगया मनुष्य का संभाषण बड़ा प्रिय था, वह ठग प्रतीत न होता था, परन्तु पता कुछ नहीं बतलाता था–

माधो (स्वागत)–' कौन जाने इस पर क्या बीती है, (प्रकाश) भाई घर चल कर किंचित विश्राम करो, फिर देखा जायगा।'

दोनों वहा से चल दिये माधो–(मन में) 'मै तो वस्त्र मोल लेने आया था, यहां अपना भी दे बैठा, नम्र मनुष्य साथ है क्या यह सब बातें देख कर मालती प्रसन्न होगी, कदापि नही, अथवा चिंता ही क्या है, दया करना मनुष्य का परम धर्म्म है।'

उधर माधो की स्त्री मालती उस दिन जल्दी २ लकड़ी काट कर पानी लाई, फिर भोजन बनाया बच्चों को खिलाया आप खाया, पति के कारण भोजन अलग रखकर घर का धंदा सुदेसी ही नबेड़ दिया, पीछे कुरते में टाका लगाती हुई यह विचार करने लगी–

मालती-(स्वागत)-ऐसा न हो बनिया मेरे पति को कोई धोखा देदे, वह बड़ा साधू है, किसी से छल नहीं करता बालक भी उसे फंदे में फंसा सक्ता है, आठ रुपये बहुत होते हैं, इतने रुपये में तो बडे अच्छे वस्त्र मिल सक्ते हैं, पिछली सरदी किस कष्ट से व्यतीत हुई है, चलती समय यद्यपि उसे अति काल होगया था, परन्तु क्या हुआ, अभी लौट आने को बड़ा समय है '-

इतने में आहट हुई, मालती बाहर आई, देखाकि माधो है उसके साथ नंगे सिर एक मनुष्य है पति का कोट उसके गले में पड़ा है और पति ठाली हाथ है मनुष्य भीतर आकर चुपचाप खड़ा होगया, मालती समझी कोई ठग है, त्योरी चढ़ाँ कर खड़ी हो देखने लगी कि वह क्या करता है।

माधो-' प्यारी, यदि भोजन त्यार है तो ले आओ '-

मालती जल कर राख होगई, कुछ न बोली, चुप चाप वहीं खड़ी रही, माधो ताड़ गया कि स्त्री क्रोधाग्नि में जल रही है।

माधो–' क्या भोजन नहीं बनाया '–

मालती–(क्रोध से) हां बनाया है, परन्तु तुम्हारे वास्ते नहीं, तुम तो वस्त्र मोल लेने गये थे, यह क्या किया, अपना कोट भी दूसरे को दे दिया, इस ठग को कहां से ले आए भोजन छाजन यहा कुछ नहीं

माधो–' मालती, बस बस, बिना सोचे समझे किसी को बुरा कहना उचित नही, पहले पूछ तो लो कि यह कैसा—

मालती–'पहले यह बताओ कि रुपये कहा फैके।'

माधो–' यह लो अपने तीन रुपये, गांव वालों ने कुछ नही दिया '–

मालती–(रुपये लेकर)–' मेरे पास संसार भर के नंगे लुच्चों के लिये भोजन नही है '–

माधो–' मालती २ देखो फिर वही बात, पहले इससे पूछ तो लो कि क्या कहता है '–

मालती–' बस बस, पूछ चुकी, मै तो तुम से विवाह ही करना नही चाहती थी, तुम तो घर खोऊ हो।'

माधो ने बहुतेरा समझाया, वह एक न मानी, दस वर्ष के पुराने झगड़े याद करके बकवाद करने

लगी, यहा तक कि क्रोध में आकर माधो की जाकट फाड़ डाली।

४

मालती—(कुछ नम्र होकर)—' यदि वह भला-मानस होता तो नग्न न होता, भला तुम्हारी भेट उससे कहां हुई।

माधो—' हां देखो नां, यही मै तुम को बतलाना चाहता हूं; वह गाव के बाहर मंदिर के पास नग्न बैठा था, भला विचार तो कर यह रुत बाहर नंगा बैठने की है, दैवगति से मै वहा जा पहुंचा, नहीं तो क्या जाने वह मरता या जीता, मालती हम क्या जानते हैं कि उन पर क्या विपत पड़ी है, मै अपना कोट पहरा कर उसे यहा ले आया हूं—देख क्रोध मत कर; क्रोध पाप का मूल है, एक दिन हम सब ने यह संसार छोडना है '—

" मालती कुछ कहना चाहती थी पर मनुष्य को देखकर चुप रह गई वह नेत्र मुंदे घुटनों पर हाथ रक्खे मौन धारण किये स्थिर बैठा था—

माधो—' प्यारी क्या तुम में ईश्वर का प्रेम नहीं'

यह वचन सुन मनुष्य को देख कर मालती का चित्त तुरंत द्रवत होगया, झट से उठी, और भोजन लाकर उसके सामने रख दिया और बोली खाईये'—

मालती की यह दशा देख कर मनुष्य का मुखार बिंद खिल गया और वह हंसा—भोजन कर लेने पर मालती बोली—

माधो—' तुम कहां से आये हो '

मनुष्य—'मैं यहां का रहने वाला नहीं।'

मालती—' तुम मंदिर के पास किस प्रकार पहुंचे'

मनुष्य—' मैं कुछ नहीं बता सक्ता'—

मालती—' क्या किसी ने तुम्हारा माल चुरा लिया।'

मनुष्य—' किसी ने नहीं—परमेश्वर ने यह दंड दिया है।'

मालती—' क्या तुम वहां नंगे बैठे थे।'

मनुष्य—' हां— शीत के मारे ठठर रहा था, माधो ने देख कर दया की; कोट पहरा कर मुझे यहां ले आया; तुमने तरस खाकर मुझे भोजन खिला दिया; भगवान तुम दोनों का भला करे।'

मालती ने एक कुरता और दे दिया। रात्रि को जब वह अपने पति के पास जाकर लेटी तो यह बातें करने लगी'—

मालती—' प्राण नाथ '—

माधो—' हां '—

मालती—' अन्न तो चुक गया, कल भोजन कहा से करेंगे, स्यात पड़ोसन से मांगना पड़े '—

माधो—' जियेंगे तो अन्न भी कहीं से मिलै ही रहेगा। '

मालती—' वह मनुष्य भला तो प्रतीत होता है, अपना पता क्यों नहीं बतलाता '—

माधो—' क्या जानूं—कोई कारण होगा '—

मालती—' प्यारे। '

माधो—' हां '—

मालती—' हम औरों को देते हैं-पर हम को कोई क्यों नहीं देता '—

माधो ने इस का कुछ उत्तर नहीं दिया, मुंह फेर कर सो गया।

५

प्रातःकाल होगई–माधो जागा,,बच्चे अभी सोये पड़े थे मालती पड़ौसन से अन्न मांगने गई हुई थी, अज्ञात मनुष्य भूमि पर बैठा आकाश की ओर देख रहा था; परन्तु पहले की अपेक्षा उसका मुख अब प्रसन्न था–

माधो–' मित्र, पेट रोटी मांगता है, शरीर वस्त्र, अतएव काम करना आवश्यक है, तुम कोई काम जानते हो।'

मनुष्य–' मै कोई काम नहीं जानता।'

माधो–' अभ्यास बड़ी वस्तु है; मनुष्य यदि चाहे सब कुछ सीख सक्ता है '–

मनुष्य–'मैं सीखने को उपस्थित हूं, आप सिखा दीजिये '

माधो–' तुम्हारा नाम क्या है।'

मनुष्य–' यमदूत '–

माधो–'भाई यमदूत;, यदि तुम वृत्तांत सुनाना नहीं चाहते; तो न सुनाओ; परन्तु कुछ काम अवश्य करो, जूते बनाना सीखलो, और यहां निवास करते रहो।' –

यमदूत—' बहुत अच्छा '

अब माधो ने यमदूत को सूत बाटना, उस पर मोमचढ़ाना जूते सीना आदि काम सिखाना आरभ कर दिया, यमदूत तीन दिन में ही ऐसे जूते बनाने लग गया कि मानो आयु पर्य्यंत चमार का ही काम करता रहा है,-वह घर से बाहर नहीं निकलता था, बोलता भी बहुत ही कम था, अब तक वह केवल एक बेर उस समय हंसा था जब मालती ने उसे भोजन खिलाया था. फिर वह कभी नहीं हंसा।

६

एक वर्ष बीत जाने पर चारों ओर यह धूम मिच गई कि माधो का नौकर यमदूत जैसे पक्के जूते बनाता है, दूसरा कोई नहीं बना सक्ता, माधो के पास बहुत काम आने लगा और उसकी आमदनी बहुत बढ़ गई—

एक दिन माधो और यमदूत बैठे काम कर रहे थे, कि एक गाडी आई, उस में से एक धनाड्य पुरुष उतर कर झोंपड़े के पास आया, मालती ने झट से किवाड खोल दिये, वह भीतर आ गया।

माधो ने उठ कर प्रणाम किया, उसने ऐसा पुरुष पहले कभी नहीं देखा था, क्योंकि वह स्वयं दुबला था, यमदूत कृषतन, और मालती हड्डियों का पिंजरा थी, यह पुरुष तो किसी दूसरे ही लोक का वासी प्रतीत होता था लाल मुंह, हट्टा कट्टा, साढे जैसी उस की ग्रीवा मानो लोहे में ढला हुआ था।

पुरुष–' तुम में बढ़िया कारीगर कौन है।'

मांधो–' हजूर, मैं '–

पुरुष–(चमड़ा दिखाकर), ' ओ चमार, तुम यह चमड़ा देखते हो '–

माधो–' हां हजूर '–

पुरुष–' तुम जानते हो कि यह किस जात का चमड़ा है।'

माधो–' महाराज यह चमड़ा बहुत अच्छा है।'

पुरुष–' अच्छा, मूर्ख कहीं का, तुमने स्यात ऐसा चमड़ा कभी नहीं देखा होगा, यह जरमन देश का चमड़ा है इसका मोल बीस रुपये है।'

माधो–(भय से) ' भला महाराज ऐसा चमड़ा मैं कहां से देख सक्ता था।'

पुरुष–' अच्छा तुम इसका बूट बना सक्ते हो'

माधो–' हां हजूर बना सक्ता हूं '

पुरुष–' हां हजूर की बात नहीं, समझ लो कि चमड़ा कैसा है और बनवाने वाला कौन है यदि साल भर के अन्दर कोई टांका उखड़ गया अथवा जूते का रूप बिगड गया तो तुझे बन्दी खाने जाना पडेगा, नहीं तो दस रुपये मजूरी मिलेगी '–

माधो ने यमदूत से पूछा कि काम लेलूं, उसने कहा हां लेलो–माधो नाप लेने लगा–

पुरुष–देखो नाप ठीक लेना, बूट छोटा न पड जाय, (यमदूत की तर्फ) यह कौन है–

माधो–' मेरा कारीगर । '

पुरुष–(यमदूत से) हो २-देखो बूट एक वर्ष चलना चाहिये, पूरा एक वर्ष, कम नहीं । '

यमदूत का उस पुरुष की ओर ध्यान ही नहीं वह किसी और ही धुन में मस्त बैठा हंस रहा था–

पुरुष–(क्रोध से)–' मूर्ख, बात सुनते हो कि हसते हो, देखो बूट बहुत जल्दी त्यार करना, देर न होने पावे ।

बाहर निकलती समय पुरुष का मस्तक द्वार से टकरा गया–माधो बोला ' सिर है कि लोहा,किवाड़

ही तोड़ डाला था'--मालती बोली-'धनवान ही बलवान होते हैं; इस पुरुष को तो काल भगवान भी हाथ नहीं लगा सक्ता; और की तो बात ही क्या है।



७

माधो (यमदूत से)--' भाई काम तो ले लिया है, कोई झगड़ा न खड़ा हो जाय, चमड़ा बहुमूल्य है, और धनाढ्य बड़ा क्रोधी है भूल न होनी चाहिये, तुम्हारा हाथ साफ़ होगया है बूट काट तुम दो सी मैं दूगा।'

यमदूत बूट काटने लगा, मालती नित्य अपने पति को बूट काटते देखा करती थी, यमदूत की काट देख कर वह आश्चर्य्य हुई कि यह कर क्या रहा है, स्यात बड़े आदमियों के बूट इसी प्रकार काटे जाते हों, यह विचार कर वह चुप रह गई।

यमदूत ने चमड़ा काट कर मध्यान तक सलीपर त्यार कर लिये, माधो जब भोजन करने उठा देखता क्या है कि बूट की जगह सलीपर बने रक्खे हैं।

माधो--' हाय हाय, यह क्या हुआ, यमदूत को मेरे साथ रहते एक वर्ष होगया ऐसी भूल तो उसने

कभी नहीं की, धनाढ्य ने तो बूट बनाने को कहा थाँ, इसने तो सलीपर बना डाले, अब धनाढ्य को क्या उत्तर दूंगा, ऐसा चमडा और कहा से मिल सक्ता है-(यमदूत से)-मित्र यह तुमने क्या किया, यह तुमने बनाया क्या, बुरी हुई '-

यह बातें हो ही रहीं थी कि द्वार पर एक आदमी ने आकर पुकारा-

आदमी-' राम राम-स्वामी ने मुझे बूट के वास्ते भेजा है '

माधो-' राम, राम जूते, जूते '

आदमी-'मेरा स्वामी मर गया, अब बूट बनाना व्यर्थ है।'

माधो-' मर गया, यह कैसे हो सक्ता है।'

आदमी-' हो सक्ता है, अजी वह तो घर तक भी पहुंचने नहीं पाया, गाडी में ही प्राण त्याग दिये, स्वामिनी ने कहा है कि उस चमड़े के सलीपर बनादो--'

माधो-प्रसन्न होकर-' यह लो सलीपर '

आदमी सलीपर लेकर चलता बना।



यमदूत को माधो के साथ रहते २|छः वर्ष बीत गये अब तक वह केवल दो वेर हंसा था, नहीं तो चुपचाप वैठा अपना काम किये जाता था माधो उस पर अति प्रसन्न था और डरता रहता था कि कहीं भाग न जाय, इस कारण फिर माधो ने उस से पता चता कुछ नहीं पूछा।

एक दिन मालती चूल्हे में आग जला रही थी, वालक आंगन में खेल रहे थे,माधो और यमदूत दोनों वैठे जूते बना रहे थे, कि एक वालक ने आकर कहा– 'चचा यमदूत, देखो, वह स्त्री दो लडकिया संग लिये आ रही है'--यमदूत ने देखा कि एक स्त्री चादर ओढ़े छोटी २ कन्याएं संग लिये चली आ रही है; कन्याओं का एक रंग एक रूप है भेद केवल यह है कि उन में एक लंगड़ी है--बुढ़िया भीतर आगई– माधो ने पूछा 'माई क्या प्रयोजन है' उसने कहा 'इन लड़कियों के जूते बनादो।' माधो बोला 'बहुत अच्छा'--

उसने नाप लेना आरम्भ किया, देखता क्या है

के यमदूत इन लड़कियों को इस प्रकार ताक रहा है मानों पहले देखी हुई हैं।'

बुढ़िया—' इस लड़की का एक पाव लुंजा है, एक नाप इस का लेलो, बाकी तीन पैर एक जैसे हैं, यह लड़कियां जोड़ी हैं।'

माधो—(नाप लेकर)—' यह लंगड़ी किम भांति होगई, क्या जन्म से ही ऐसी है '--

बुढ़िया—' नहीं--इसकी माता ने ही इसकी टांग कुचल दी थी।'

मालती--' तो--क्या तुम उनकी माता नहीं हो ?'

बुढ़िया--' प्यारी बहन; मैं उनकी माता हूं न संबंधी; वह मेरी कन्याएं नहीं--मैने उन्हें पाला है।'

मालती--' तिस पर भी तुम उनसे बड़ा प्यार करती हो।'

बुढ़िया--' प्यार क्योंकर न करूं; मैंने अपना दूध पिला २ कर उन्हें बड़ा किया है, मेरा अपना भी एक बालक था परन्तु वह परमात्मा को प्यारा हुआ, मुझे इनके साथ उससे भी अधिक प्रेम है '--

मालती--' तो यह किस की कन्याएं हैं ?'

९

बुढ़िया--'छे एक वर्ष हुए कि एक सप्ताह के अन्दर इन के माता पिता का देहात होगया, पिता की मगल के दिन मृत्यु हुई माता की शुक्रवार को पिता की मृत्यु के तीन दिन पीछे यह उत्पन्न हुई, यह मेरी पडौसन है--इनका पिता लकडहारा था. जंगल में लकड़िया काटता २ वृक्ष के नीचे दबकर मर गया. उसका अभी अस्थिसंचय भी नहीं हुआ था कि इनका जन्म हुआ, जन्म होते ही माता भी चल बसी।

'दूसरे दिन जब मै उस से मिलने गई तो देखा कि बिचारी मरी पडी है, मरते समय करवट लेते हुए इस कन्या की टांग उसने कुचल डाली; गाव वालों ने उसका दाहकर्म्म किया; इन के माता पिता रंक थे कौडी पास न थी; सब लोग सोचने लगे कि कन्याओं को कौन पाले-उस समय वहा मेरी ही गोद में दो महीने का एक बालक था; सब ने यही कहा कि सुन्दरी जब तक कोई प्रबन्ध न हो तुम ही इन को पालो, मैने इन्हें संभाल लिया, पहले २ मै इस

लंगडी को दूध नहीं पिलाया करती थी क्योंकि मैं समझती थी कि यह मर जायगी, पर फिर मुझे इस पेर दया आगई और इसे भी दूध पिलाने लगी, उस समय परमात्मा की कृपा से युवती होने और पुष्ट भोजन पाने के कारण मेरे स्थनों में इतना दूध था कि तीनों बालकों को पिला कर भी वह निकलता था, मेरा बालक मर गया, यह दोनों पल गईं, हमारी व्यवहारिक दशा पहले की अपेक्षा अब बहुत अच्छी है, मेरा पति एक बड़े कारखाने में नौकर है— मैं उन्हें प्यार किस प्रकार न करू--यह तो मेरा जीवन आधार हैं। ' यह कह कर बुढ़िया ने दोनों लड़कियों को छाती से लगा लिया।

मालती--'सत्य है--मनुष्य माता पिता के बिना जी जा सक्ता है, परन्तु ईश्वर के बिना जीवन असंभव है।'

यह बातें हो रही थीं कि सारा झोंपड़ा प्रकाशित हो गया सब ने देखा कि यमदूत कोने में बैठा हंस रहा है--

---

१०

बुढ़िया लड़कियों को लेकर बाहर चली गई, यमदूत ने उठ कर माधो और मालती को प्रणाम की और बोला—'स्वामी, अब मैं विदा होता हूं, परमात्मा ने मुझ, पैं दया की, यदि कोई भूल चूक हुई हो तो क्षमा करना।'

माधो और मालती ने देखा कि यमदूत का शरीर तेजोमय हो रहा है--

माधो--(दंडवत करके)--'यमदूत मैं जान गया कि आप साधारण मनुष्य नहीं, अब मैं तुम्हें नहीं रख सक्ता केवल यह जानने की अभिलाषा है, कि जब मैं आपको अपने घर लाया था, आप बहुत उदास थे, जब मेरी स्त्री ने आपको भोजन दिया तो आप हंसे-- फिर बूट बनवाने जब धनाढ्य आया तब आप हंसे, आज लड़कियों के संग बुढ़िया आई तब आप हंसे, यह क्या भेद है ?'

यमदूत-- मैं इस कारण तेजस्वी हो रहा हूं कि परमात्मा ने मुझ पर दया की मैं अपने कर्मों का फल भोग चुका, ईश्वर ने तीन बातों का निर्णय

करने के लिये मुझे इस मृतलोक में भेजा था—अतएव तीनों बातें मैं समझ गया, इसी लिये मैं तीन वार हंसा, पहली वार जब तुम्हारी स्त्री ने मुझे भोजन दिया, दूसरी वार धनाढ्य पुरुष के आने पर, तीसरी वार आज इस बुढिया की वार्ता सुन कर।

माधो—' परमेश्वर ने यह दंड तुमें किस कारण दिया, वह तीन सत्य वार्ता कौनसी है, मुझे भी बतलाओ।'

यमदूत—भगवानयमराज ने अपनी आज्ञा उलंघन करने के कारण मुझे यह दण्ड दिया था, मै देवता हूं, एक समय यमराज ने मुझे एक स्त्री की जान लेने के अर्थ मृतलोक में भेजा, जाकर देखता क्या हूं कि स्त्री अति दुर्बल है और भूमि पर पड़ी है पास तुरंत की जन्मी हुई दो जौडी लड़किया रो रही हैं मुझे यमराज का दूत जान कर वह बोली--' मेरापति वृक्ष के नीचे दब कर मर गया है मुझे बहन है न माता, इन लड़कियों की कौन पालना करेगा मेरी जान न निकाल, मुझे इन्हें पाल लेने दे, बालक माता पिता बिना पल नहीं सक्ता '-मुझे उस की बातों पर दया आगई, यमराज के पास लौट आकर मैंने निवेदन किया कि महाराज

मुझे स्त्री की बातें सुनकर दया आगई, उसकी जोड़ी लड़कियों को पालने वाला कोई नहीं इस लिये मैंने उसकी जान नहीं निकाली क्यों कि बालक माता पिता बिना पल नहीं सक्ता, यमराज बोले, ' जाओ अभी उसकी जान निकाल लो, और जब तक (१) मनुष्य में क्या रहता है। (२) मनुष्य को क्या नहीं मिलता, (३) मनुष्य का जीवन आधार क्या है यह तीन बातें निर्णय न करलो तुम स्वर्ग में नहीं आसक्ते'' मैंने मृतलोक में आकर स्त्री की जान निकाल ली, मरती समय करवट लेते हुए उसने एक लड़कीकी टांग कुचल दी. मैं स्वर्ग को उड़ा, परन्तु आंधी आई, मेरे पंख उखड़ गये और मैं मन्दिर के पास आगिरा।'

११

अब माधो और मालती समझे कि यमदूत कौन है, दोनों बड़े प्रसन्न हुये कि अहो भाग्य हम ने देवता के दर्शन किये।

यमदूत–जब तक मैंने मनुष्य शरीर धारण नहीं किया था मैं शीत ऊष्ण क्षुधा पिपासा का दुख

अनुभव नहीं कर सक्ता था, परन्तु मृतलोक में आने पर प्रकट होगया कि दुःख क्या वस्तु है, मैं भूख और जाड़े का मारा मंदिर में घुसना चाहता था परन्तु मंदिर बंद था, मै वायू से बच कर सड़क पर बैठ गया, सन्ध्या समय एक मनुष्य आता दिखाई दिया, मृतलोक में जन्म लेने पर यह पहला मनुष्य था जो मैंने देखा था, उसका मुख ऐसा भयंकर था कि मैंने नेत्र मूद लिये उसकी ओर देख न सका वह मनुष्य यह कह रहा था कि स्त्री पुत्रों का पालन पोषण किस भांति करें, वस्त्र कहा से लाएं इत्यादि मैंने विचारा, देखो मै तो क्षुधा औ शीत से काल ग्रास बन रहा हूं, यह अपना ही रोना रो रहा है, मेरी कुछ सहायता नहीं करता, वह पास से निकल गया, मैं निराश होगया, इतने में वह मेरे पास लौट आया, अब दया के कारण उसका मुख किंचित सुंदर प्रतीत होने लगा--माधो वह मनुष्य तुम थे जब तुम मुझे घर लाये मालती का मुख तुम से भी अधिक भयकर था क्योंकि उस में दया का लेश मात्र न था, परन्तु जब वह द्रवत होकर भोजन लाई तो उसके मुख की

कुटिलता जाती रही, तब मैं समझा कि मनुष्य में तत्व वस्तु प्रेम है--अतएव पहली वार का हंसना ।

एक वर्ष पीछे वह धनाढ्य बूट बनवाने आया, उसे देख कर मैं इस कारण हंसा कि बूट तो एक वर्ष के लिये बनवाता है, और यह जानता ही नहीं कि सन्ध्या होने से पहले २ मर जायगा तब दूसरी बात निर्णय हुई कि मनुष्य जो चाहता है सो उसे नहीं मिलता अतएव दूसरी वार का हंसना--

छै वर्ष पीछे आज जब यह बुढ़िया आई तो मुझे निश्चय होगया कि सब का जीवन आधार परमात्मा है दूसरा कोई नहीं, अतएव तीसरी वार का हंसना ।

१२

यमदूत प्रकाश स्वरूप हो रहा था, उस पर दृष्टि नहीं जमती थी--

यमदूत--' देखो प्राणी मात्र प्रेम द्वारा जीते हैं केवल अपने पालन पोषण से कोई नहीं जी सक्ता, वह स्त्री क्या जानती थी कि उसकी लड़कियों को

कौन पालेगा, वह धनाढ्य क्या जानता था कि गाड़ी में ही मर जाऊंगा, घर पहुंचना कहा, कौन जानता है कि कल क्या होगा, मृतु अथवा राज्य-प्राप्ति

' मनुष्य शरीर में मैं केवल इस कारण जीता बचा कि तुमने और तुम्हारी स्त्री ने मुझ से प्रेम किया वह अनाथ लड़किया इस कारण पलीं कि एक बुढ़िया ने प्रेम वस होकर उन्हें दूध पिलाया, तात्पर्य्य यह कि प्राणी केवल अपने यतन से नहीं जी सक्ते, पहले मैं यह समझता था कि जीवों का धर्म्म केवल जीना है, परन्तु अब निश्चय हुआ कि धर्म्म केवल जीना नहीं किन्तु प्रेम भाव से जीना है, इसी कारण परमात्मा एक को दूसरे के आछित रखता है, मुझे विश्वास होगया कि प्राणों का आधार प्रेम है, प्रेमी पुरुष परमात्मा में और परमात्मा प्रेमी पुरुष में सदैव निवास करता है, साराश यह है कि प्रेम और परमेश्वर में कोई भेद नहीं '

यह कह कर यम्फ्रूत स्वर्ग लोक को चला गया।

पांचवीं कहानी

एक चिंगारी घर को जलादेती है।

एक समय एक गांव में जवाहिरसिंह नाम का एक मालदार ज़िमीदार बसता था, उसके तीन पुत्र थे, सब युवक और काम करने वाले थे सब से बड़ा व्याहा हुआ था, मंझला व्याहने को था, छोटा क्वारा था जवाहिरसिंह की स्त्री और बहू चतुर और सुशीला थीं, बूढ़ा बाप दमे के रोग से ग्रस्त था, उसके पास तीन बैल, एक गाय, एक बछड़ा, पंद्रह भेड़ थीं, स्त्रियां खेती के काम में सहायता करती थीं, अनाज मुक्ता पैदा हो जाता था पड़ौसी मनोहरसिंह के लंगड़े पुत्र जवरसिंह के साथ इसका एक ऐसा झगड़ा छिड़ गया था कि जिस से सुख चैन जाता रहा था, यदि यह झगड़ा न होता तो वह बड़े सुख से काल व्यतीत करता रहता--

जब तक बूढ़ा मनोहरसिंह जीता रहा और जवाहिरसिंह का पिता घर का प्रबन्ध करता रहा,

कोई झगड़ा नहीं हुआ, वह बड़े प्रेम भाव से जैसा कि पड़ौसियों में होना चाहिये एक दूसरे की सहायता करते हुए वास करते रहे, लड़कों का घरों को संभालना था कि सब कुछ बदल गया।

अब सुनिये कि झगड़ा किस बात पर छिड़ा— जवाहिरसिंह की बहू ने कुछ मुरगियां पाल रक्खी थीं एक मुरग़ी नित्य पशुशाला में जाकर अंडा दिया करती थी, बहू सन्ध्या समय वहां जाती और अंडा उठा लाती, एक दिन दैवगति से वह मुरग़ी बालकों से डर कर पड़ौसी के आगन में चली गई और वहां अंडा दे आई, सन्ध्या समय बहू ने जो पशुशाला में जाकर देखा तो अंडा वहां कहां था, सास से पूछा, उसे क्या मालूम था, देवर बोला कि मुरग़ी पड़ौसन के आगन में कुड़ कुड़ा रही थी, स्यात वहां अंडा दे आई हो—

बहू वहां पहुंच कर अंडा खोजने लगी, भीतर से जवरासिंह की माता निकल कर पूछने लगी, 'बहू क्या है'।

बहू—'मेरी मुरगी तुम्हारे आगन में अंडा देगई है, उसे खोजती हूं, यदि तुमने देखा हो तो बतादो।'

वसन्त कौर (जवरसिंह की माता)—'मैने नहीं देखा, क्या हमारी मुरगियां अंडे नहीं देतीं, हम ऐसे नही कि कंगालों की भांति दूसरों के घरों में जाकर अंडे इकठे करते फिरें'।

'फिर क्या था, यह सुनकर वहू आग होगई लगी वकने। वसन्त कौर क्या कुछ कम थी, एक एक वात के सौ सौ उत्तर दिये, जवाहिरसिंह की स्त्री पानी लेने वाहर निकली थी, गाली गलोज का शोर सुनकर वह भी आनपहुंची, उधर से जवरसिंह की स्त्री भी दौड पड़ी, अब सब की सब ईकट्ठी होकर लगी गालियां वकने और लडने, जवरसिंह खेत से घर को आरहा था वह भी आकर शामल होगया, इतने में जवाहिरसिंह भी आन पहुंचा। पूरा महाभारत होगया। अब दोनों गुथ गये जवाहिरसिंह ने जवरसिंह की दाढी के वाल उखाड़ डाले, गांव वालों ने आकर वड़ी कठनताई से उन्हें छुड़ाया।

जवरसिंह ने जवाहिरसिंह पर दंगे की नालिश करदी। और लड़ाई वढ़ने [illegible]
वूढ़े पिता ने शांति का [illegible]

सुनता था, एक दिन बूढा पिता जवाहिरसिंह को यूं समझाने लगा—

बूढ़ा—'बेटा ऐसी तुच्छ बात पर लड़ाई करना मूर्खता नहीं तो क्या है, किञ्चत विचार तो करो, सारा बखेडा एक अंडे से फैला है। कौन जाने स्यात किसी बालक ने उठा लिया हो, और फिर अंडा कितने का। परमात्मा सब का पालन पोषण करता है, पड़ौसी यदि गाली दे भी दे, तो क्या गाली के बदले गाली देकर अपनी आत्मा को मलिन करना उचित है, कदापि नहीं। संसार की लडाईयां हुआ ही करती है, उन्हें मिटाना उचित है बढाना ठीक नहीं, क्रोध पाप का मूल है, याद रक्खो लडाई बढाने से तुम्हारी ही हानि होगी'।

परन्तु बूढे की बात पर किसी ने कान न धरा जवाहिरसिंह कहने लगा कि उसकी तो बुद्धि भ्रष्ट होगई है, मैं क्या किसी का दिया खाता हू, कौन जवरसिंह। देख लूगा क्या करता है। अतएव इधर से उसने भी नालश ठोक दी।

यह मुकदमा चल ही रहा था कि जवरसिंह की गाडी की एक कील खोइ गई. उसके घर वालों ने

जवाहिरसिंह के बड़े लड़के को चोर थापकर चोरी की नालश करदी—

अब कोई दिन ऐसा न जाता था कि लड़ाई न हो, बड़ों को देखकर बालक भी आपस में लड़ने लगे। जब कभी वस्त्र धोने के कारण स्त्रियां नदी पर इकठ्ठी होती थीं, तो सिवाय लड़ाई के कुछ काम न करती थीं।

पहले पहल तो गाली गलोज पर ही बस हो जाती थी, पर अब वह आपस में एक दूसरे का माल चुराने लग गये, जीना दुर्लभ होगया, न्याव चुकाते २ वहां के कर्म्मचारी थकित होगये। कभी जवरसिंह जवाहिरसिंह को कैद करादेता कभी वह उसको बंदीखाने भिजवा देता। कुत्तों की भांति क्रोधाग्नि में जलने लगे। छै वर्ष यही हाल रहा। बूढ़े ने बहुतेरा सिर पटका कि 'लड़को क्या करते हो, बदला लेना छोड़ दो, वैरभाव त्याग कर अपना काम करो, दूसरों को कष्ट देने से तुम्हारी ही हानि होगी' परन्तु वहां तो सब के कान बंद थे, क्रोध ने श्रोत्र इन्द्रीय को निकम्मा कर छोड़ा था।

सातवें वर्ष गाव में किसी के घर विवाह था, स्त्री पुरुष एकत्र थे, बातें करते २ जवाहिरसिंह की वहू ने जवरसिंह को घोडा चुराने का दूषण दिया, वह आग होगया, उठकर वहू के ऐसा मुक्का मारा कि वह सात दिन चारपाई पर पडी रही वह उस समय गर्भवती थी। जवाहिरसिंह बडा प्रसन्न हुआ कि अब काम बनगया, गर्भवती स्त्री को मारने के अपराध में इसे बंदीखाने न भिजवाया तो मेरा नाम जवाहिरसिंह ही नहीं। झट जाकर नालश करदी, नरीक्षण होने पर मालूम हुआ कि वहू को कोई कड़ी चोट नहीं आई, मुकद्दमा डिसमिस होगया। जवाहिर सिंह कब चुप होने वाला था, ऊपर की कचहरी में जाकर मुंशी को घूस देकर जवरसिंह को बीस कोडे मारने का हुक्म लिखवा दिया।

उस समय जवरसिंह कचहरी से बाहर खडा था, हुक्म सुनते ही बोला—'कोडों से मेरी पीठ तो जलेगी ही, परन्तु जवाहिरसिंह को भी भस्म किये विना न छोडूंगा'।

ज़वाहिरसिंह ने हाकिम से निवेदन किया, कि

महाराज जवरसिंह धमकी देकर मुझे भय दिखलाता है, अमुक २ पुरुष साक्षी हैं—

हाकिम ने जवरसिंह को बुलाकर पूछा कि क्या बात है—

ज–" सब झूठ, मैने कोई धमकी नहीं दी, आप हाकिम हैं । जो चाहें सो करें, पर क्या न्याय इसी को कहते है कि सच्चा मारा जाय, और झूठा चैन करे " ।

जवरसिंह की आकृति से हाकिम को निश्चय होगया कि वह अवश्य जवाहिरसिंह को कोई न कोई दारुण दुःख देगा । हाकिम–' देखो भाई, बुद्धि से काम लो, भला जवरसिंह गर्भवती स्त्री को मारना क्या ठीक था, वह तो ईश्वर की बड़ी कृपा हुई कि उसे चोट नहीं आई, नहीं तो क्या जाने क्या होजाता तुम विनय करके जवाहिरसिंह से अपना अपराध क्षमा करालो, मैं यह हुक्म बदल डालूंगा ' ।

मुंशी–' दफै-२१७ के अनुसार हुक्म बदलना असम्भव है ' ।

हाकिम–' चुप रहो–परमात्मा को शांति प्रिय है, उसकी आज्ञा पालन करना सब का मुख्य धर्म है ' ।

जबर—'मेरी अवस्था अब पचास वर्ष की है। एक व्याहा हुआ पुत्र उपस्थित है, आज तक मैंने कभी कोडे नहीं खाए। अब उस चेचक के खाये हुए जवाहिरसिंह ने यह हुक्म लिखवा दिया तो क्या हुआ—मैं और उस से विनय करूं यह कभी होसक्ता है, वह भी मुझे याद ही करेगा'।

यह कहकर जबरसिंह बाहर चला गया।

कचहरी गाव से सात मील पर थी, जवाहिर-सिंह को घर पहुंचते २ अंधेरा होगया, उस समय घर में कोई न था, सब बाहर गये हुए थे, जवाहिरसिंह भीतर जाकर बैठगया और विचार करने लगा।

जवाहिर (स्वागत)—'कोडे लगने का हुक्म सुनकर जबरसिंह का मुख कैसा भयङ्कर होगया था। यदि मुझे कोड़े मारने का हुक्म सुनाया जाता तो मेरी क्या दशा होती'।

इस पर उसे जबरसिंह पर दया आई, इतने में बूढ़े पिता ने आकर पूछा।

बूढ़ा—'जबरसिंह को क्या दंड मिला'।

जवा—'बीस कोड़े'।

वूँ–' बुरा हुआ–बेटा तुम अच्छा नहीं करते, इन बातों में जवरसिंह की उतनी हानि नहीं होगी जितनी कि तुम्हारी, भला मैं यह पूछता हूं कि जवरसिंह पर कोड़े पड़ने से तुम्हें क्या लाभ होगा ' ।

जवा–' वह फिर ऐसा काम नहीं करेगा ' ।

वू०–'क्या नहीं करेगा, उसने तुम से बढ़कर कौनसा बुरा काम किया है'—

जवाहिर–'वाह वाह, आप विचार तो करें कि उस ने मुझे कितना कष्ट दिया है–बहू मरने से बची, अब घर जलाने की धमकी देता है, तो क्या मैं उसका धन्यवाद करूं'—

वू०–(आह भरकर) बेटा मै घर में पडा रहता हूं, और तुम सर्वत्र घूमते हो, इस कारण तुम मुझे मूर्ख समझते हो–द्रोह ने तुम्हें अन्धा बना रक्खा है, दूसरों के दोष तुम्हारे नेत्रों के अग्रभाव है, अपने दोष पीठ पीछे है, भला मैं पूछता हूं, कि जवरसिंह ने क्या किया । एक के करने से भी कभी लडाई हुआ करती है, कदापि नहीं, दो विना लडाई नहीं होसक्ती, यदि तुम शांति स्वभाव होते तो लडाई

मूर्खता, लडकों सहित खेती का काम करो। पर हाय हाय तुम पर तो लडाई का भूत सवार है, वह चैन लेने नहीं देता, पिछले माल्जती क्यों न उगी, इसलिये कि समय पर नहीं बोई गई,मुकद्दमे चलाओ कि जतीजीजो—बेटा अपना काम करो, खेती बाडी को सम्भालो, यदि कोई कष्ट दे, उसे क्षमा करो, परमात्मा इसी से प्रसन्न होता है,ऐसा करने पर तुम्हारा अन्तःकरण शुद्ध होकर तुम्हें आनन्द प्राप्त होगा'—

जवाहिरसिंह कुछ नहीं बोला—

बू०—बेटा, अपने बूढ़े मूर्ख पिता का कहना माना जाओ कचहरी में जाकर आपस में राज़ीनामा करलो. कल दुर्गाष्टमी है, जबरसिंह के घर जाकर नम्रता पूर्वक उसे निमन्त्रन दो,और घरवालों को भी यही शिक्षा दो कि वैर छोड़कर आपस में प्रेम बढ़ाएं—

पिता की बातें सुनकर जवाहिरसिंह के चित्त में यह भाव उत्पन्न हुआ कि महाभारत किस प्रकार समाप्त करूं,बूढ़ा उसके मन की बात जानकर बोला—

बू०—' बेटा मै तुम्हारे मन की बात जान गया, लज्जा त्याग तुरन्त जाकर जबरसिंह से मित्रता कर

पास बैठी सुनरही थी। क्या यही सभ्यता है, क्या गाली का बदला गाली होना चाहिये, नहीं बेटा नहीं, महापुरुषों का वाक्य है कि यदि कोई तुम्हें गाली दे तो सहन करो, वह स्वयं पछतायगा, यदि कोई तुम्हारे गाल पर एक चपत मारे तो दूसरा गाल उसके सामने करदो, वह लज्जित और नम्र होकर तुम्हारे से उपदेश लेने पर प्रस्तुत होजायगा, अभिमान ही सब दुःख का कारण है—तुम चुप क्यों होगये क्या मैं झूठ कहता हूं'—

जवाहिर सिंह चुप रह गया कुछ नहीं बोला—

वृ०—(फिर) महात्माओं का वाक्य क्या असत्य है, कदापि नहीं, उनका एक २ अक्षर पत्थर पर लकीर है—अच्छा अब तुम अपने इस संसारिक जीवन पर विचार करो, जब से यह महाभारत आरम्भ हुआ है, तुम सुखी हो, अथवा दुःखी, किंचित गिनती तो लगाओ, कि इन मुकद्दमों, वकीलों और जाने आने में कितना रुपया खर्च होचुका है। देखो तुम्हारे पुत्र कैसे सुन्दर और बलवान हैं, तुम्हारी आमदनी घटती जाती है, क्यों तुम्हारी

मूर्खता, लड़कों सहित खेती का काम करो। पर हाय हाय तुम पर तो लड़ाई का भूत सवार है, वह चैन लेने नहीं देता, पिछले साल जवी क्यों न उगी, इसलिये कि समय पर नहीं बोई गई.मुकद्दमे चलाओ कि जवोबोजो—बेटा अपना काम करो, खेती बाड़ी को सम्भालो, यदि कोई कष्ट दे, उसे क्षमा करो, परमात्मा इसी से प्रसन्न होता है,ऐसा करने पर तुम्हारा अन्तःकरण शुद्ध होकर तुम्हें आनन्द प्राप्त होगा'—

जवाहिरसिंह कुछ नहीं बोला—

बू०—बेटा, अपने बूढे मूर्ख पिता का कहना मानो.जाओ कचहरी में जाकर आपस में राजीनामा करलो. कल दुर्गाष्टमी है, जवरसिंह के घर जाकर नम्रता पूर्वक उसे निमन्त्रन दो,और घरवालों को भी यही शिक्षा दो कि वैर छोड़कर आपस में मेल बढ़ाएं—

पिता की बातें सुनकर जवाहिरसिंह के चित्त में यह भाव उत्पन्न हुआ कि महाभारत किस प्रकार समाप्त करूं,बूढ़ा उसके मन की बात जानकर बोला—

बू०—' बेटा मै तुम्हारे मन की बात जान गया, लज्जा त्याग तुरन्त जाकर जवरसिंह से मित्रता कर

लो, फैलने से पहले ही चिंगारी को बुझा देना उचित है, फैल जाने पर फिर कुछ नहीं बनता'—

बूढ़ा कुछ और कहना चाहता था कि स्त्रियां कोलाहल करती हुई भीतर आगईं, उन्होंने जबरसिंह के दण्ड का वृत्तान्त सुन लिया था। हाल में पड़ोसने से लड़ाई करके आई थीं, आकर कहने लगीं कि जबरसिंह यह भय दिखाता है कि मैंने घूस देकर हाकिम को अपनी ओर फेर लिया है, जवाहिरसिंह का सारा हाल लिखकर महाराज की सेवा में भेजने के लिये एक विनय पत्र तार किया है, देखो क्या स्वाद चखाता हूं, आधी जायदाद न छीनली तो बात ही क्या है—यह सुनना था कि जवाहिरसिंह का चित्त फिर विक्षिप्त होगया—

आषाढी बोने की रुत थी, करने को काम बहुत था, जवाहिरसिंह खल्यान में गया और पशुओं को नीरा डालकर कुछ और काम करने लग गया, इस समय पिता की बातें और जबरसिंह के साथ लड़ाई सब कुछ भूला हुआ था—रात्रि को घर में आकर मैन करना ही चाहता था कि पास से यह

शब्द सुनाई दिया—"दुष्ट जवाहिरसिंह वध करने ही योग्य है वह जीकर क्या बनाएगा"—

भीतर आकर देखा कि वह बैठी कात रही है, स्त्री भोजन बना रही है, बड़ा लड़का दूध गर्म कर रहा है, मझला बुहारी लगा रहा है, छोटा बकरी चराने बाहर जाने को त्यार है—सुख की यह सब सामग्री उपस्थित थी, परन्तु पड़ौसी के साथ लड़ाई का दुःख सहा न जाता था।

वह जला कुढा भीतर आया उसके कान में पड़ौसी के शब्द गूंज रहे थे, उसने सब से लड़ना आरम्भ किया, इतने में छोटा लड़का छेर चराने बाहर जाने लगा। जवाहिरसिंह भी उसके साथ बाहर चला आया, लड़का तो चल दिया, वह अकेला रह गया

जवाहिर—(स्वागत) जवरसिंह बड़ा दुष्ट है। हवा चल रही है, ऐसा नहो पीछे से आकर मकान में आग लगाकर भाग जाय, क्या अच्छा हो कि जब वह आग लगाने आये, तब उसे मैं पकड़लूं। बस फिर कभी नहीं बचसक्ता, अवश्य उसे बन्दी खाने जाना पड़े—

यह विचार करके वह गली में पहुंच गया, सामने उसे कोई चीज़ हिलती दिखाई दी, पहले तो वह समझा कि जवरसिंह है, पर वहां कुछ न था—चारों ओर सन्नाटा था।

थोड़ी दूर आगे जाकर देखता क्या है कि पशु शाला के पास एक मनुष्य जलता हुआ फूसका पूला हाथ में लिये खड़ा है, गम्भीर दृष्टि देने पर मालूम हुआ कि जवरसिंह है, फिर क्या था। विगट्ट भागा कि उसे जाकर पकड़ले—

जवाहिरसिंह अभी वहां पहुंचने न पाया था कि छप्पर को आग लगी, उजाला होने पर जवरसिंह मसख दिखाई देने लगा, वह बाज़ की न्याईं झपटा, परन्तु जवरसिंह उसकी आहट पाकर चम्पत होगया।

जवाहिरसिंह उसके पीछे भागा, कुरते का पल्ला हाथ में आया ही था कि वह छुड़ाकर भागा, जवाहिरसिंह धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा, उठकर फिर दौड़ा, इतने में जवरसिंह अपने घर पहुंच गया जवाहिरसिंह वहां जाकर उसे पकड़ना चाहता था कि उस ने ऐसा लठ्ठ मारा कि जवाहिरसिंह चक्क

खाकर बेसुध हो धरती पर गिर पड़ा, सुध आने पर उस ने देखा कि जवरसिंह वहां नहीं है, फिर कर देखता है तो पशु शाला का छप्पर जल रहा है, ज्वाला प्रचण्ड होरही है और लाटें निकल रही हैं।

जवाहिरसिंह सिर पीटकर पुकारने लगा, 'भाइयो यह क्या हुआ, यदि मैं उस पूले पर मिट्टी गिराकर उसे बुझा देता तो छप्पर क्यों जलता, चिल्लाते २ उसका कण्ठ बैठ गया, वह दौड़ना चाहता था परन्तु उस की टांगें लड़खड़ा गईं वह धमसे धरती पर गिर पड़ा, फिर उठा, घर के पास पहुंचते २ आग चारों ओर फैल गई, अब क्या बन सक्ता था, भय से पड़ौसी भी अपना असबाब बाहर फैंकने लगे, वायु के वेग से जवरसिंह के घर को भी आग जालगी, यहां तक कि आधा गांव जलकर राख का ढेर होगया, जवाहिरसिंह और जवरसिंह दोनों का कुछ न बचा, मुरगियां, हल, गाड़ी, पशु, सुहागा, वस्त्र, अन्न, भूसा आदि सब कुछ स्वाहा होगया इतना अच्छा हुआ कि किसी की जान नहीं गई।

जवाहिरसिंह पागल की न्याईं मकान के पास खड़ा यही पुकारे जाता था—"भाइयो यदि मैं उस चूले को बुझा देता, इत्यादि"—आग रात भर जलती रही, वह कुछ असबाब उठाने भीतर गया, परन्तु ज्वाला ऐसी प्रचण्ड थी कि जानसका, उसके कपड़े और दाढ़ी के बाल झुलसे गये।

'प्रातःकाल गांव का चौधरी उसके पास आया और बोला—'जवाहिरसिंह तुम्हारा पिता मृत्यु समीप है वह तुम्हें बुला रहा है'—जवाहिरसिंह तो पागल होरहा था, बोला—'कौन पिता'—

-- चौधरी का बेटा—'तुम्हारा पिता, इस आग ने उसे दग्ध कर दिया है, हम उसे यहां से उठाकर अपने घर लेगये थे, अब वह बच नहीं सक्ता, चलो अन्तिम भेट करलो'—

जवाहिरसिंह चौधरी के पीछे हो लिया।

वहां पहुंचने पर चौधरी ने बूढ़े को खबर दी कि जवाहिरसिंह आगया है—

बूढ़ा—'बेटा—मैं तुम से क्या कहा करता था, गांव किसने जलाया'—

जवाहिरसिंह—'जवरसिंह ने, मैने आप उसे छप्पर में आग लगाते देखा था, यदि मैं उस समय उसे पकड़कर पूले को पैरों तले मल देता तो आग कभी न लगती'—

वू०—'जवाहरसिंह, मेरा अन्त समय आगया, तुम ने भी एक दिन अवश्य मरना है, पर सच बतलाओ कि दोष किसका है' जवाहिरसिंह चुप होगया।

वू०—'(फिर) बताओ, कुछ बोलो तो कि यह सब किसकी करतूत है, किसका दोष है'—

जवाहिरसिंह—(आखों में आसू भरकर) मेरा पिता जी क्षमा कीजिये, मैं परमेश्वर और आप दोनों का अपराधी हू—

वू०—'जवाहिरसिंह'—

जवाहिरसिंह—'हा पिता जी'—

वू०—'जानते हो कि अब क्या करना उचित है—

ज०—' मैं क्या जानू '—

वू०—' यदि तू परमेश्वर की आज्ञा पालन करने पर कटिबद्ध होगा तो तुझे कोई कष्ट प्राप्त नहीं होगा देख, याद रख अब किसी से न कहना कि आग

किसने लगाई थी, जो पुरुष किसी का एक दोष क्षमा करता है, परमात्मा उस पुरुष के दो दोष क्षमा करता है'—

यह कहकर राम राम जै सीताराम शब्द उच्चारण करते हुए बूढ़े ने प्राण त्याग किये—

तदपश्चात् जवाहिरसिंह का क्रोध शांत होगया उसने किसी को न बतलाया कि आग किसने लगाई थी पहले २ तो जवरसिंह डरता रहा कि जवाहिर सिंह के चुप रह जाने में भी कोई भेद है, फिर कुछ काल पाकर उसे विश्वास होगया कि जवाहिरसिंह के चित्त में अब कोई वैर भाव नहीं रहा—

बस फिर क्या था—प्रेम का प्रभाव जगत विदित है, वह पास पास घर बनाकर पड़ोसियों की भांति निवास करने लगे—

जवाहिरसिंह को अपने पिता का उपदेश आज तक स्मरण है कि 'फैलने से पहले ही चिंगारी को बुझा देना उचित है, अब यदि कोई उसे कष्ट देता है; तो वह बदला लेने की इच्छा नहीं करता, यदि कोई उसे गाली देता है; तो सहन करके दूसरे

को यह उपदेश करता है कि कुवचन बोलना सभ्यता नहीं—घर वाले भी सुशिक्षित होगये है—पहले की अपेक्षा अब उसका जीवन बड़े आनन्द पूर्वक व्यतीत होता है—

* छटी-कहानी *

दो वृद्ध पुरुष।

१.

एक गांव में अर्जुन और मोहन नाम के दो किसान रहते थे; अर्जुन धनी था, मोहन साधारण पुरुष था; उन्होंने चिरकाल से बद्री नारायण की यात्रा का संकल्प कर रक्खा था ॥

अर्जुन बड़ा सुशील; नम्र स्वभाव और सभ्य था; दो बेर गांव का चौधरी रहकर उस ने बड़ा अच्छा काम किया था—उसको दो लड़के तथा एक पोता था, उस की साठ वर्ष की अवस्था थी परन्तु दाढ़ी अभी तक स्वेत नहीं हुई थी।

मोहन प्रसन्न बदन दयालु और सदाचारी था, इसको दो पुत्र थे, एक घर में था, दूसरा बाहर नौकरी पर गया हुआ था, वह घर में बैठा २ तखाने का काम करता रहता था।

बद्री नारायण की यात्रा का संकल्प किये उन्हें चिरकाल होचुका था, अर्जुन को अवकाश ही नहीं मिलता था, एक काम समाप्त होता था कि दूसरा आकर घेर लेता था, पहले पोते का ब्याह करना था, फिर छोटे लड़के का गौना आगया, इसके पीछे मकान बनना आरम्भ होगया,इत्यादि—

एक दिन बाहर लकड़ी पर बैठकर यूं बातें होने लगीं—

" मोहन—' क्यों भाई—अब यात्रा करने का विचार कब है'—

अर्जुन—'किञ्चित और ठहरो, अब की वर्ष अच्छा नहीं लगा, मैं यह समझा था कि सौ रुपये में मकान,सार होजाएगा, तीन सौ रुपये लग चुके हैं, और अभी दिल्ली दूर है, अगले वर्ष अवश्य चलेंगे'—

मोहन—' शुभ कार्य में देरी करना अच्छा नहीं होता, मेरे विचार में तो तुरन्त चल देना ही उचित है, बड़ी अच्छी ऋतु है'—

अर्जुन—'ऋतु तो अच्छी है, पर मकान को क्या करूं, इसे किस पर छोड़ूं'—

मोहन—' क्या कोई सम्भालने वाला ही नहीं, बड़े लड़के को सौंपदो'—

अर्जुन—'उसका क्या भरोसा है'—

मोहन—' वाह वाह ! भला बताओ तो कि मरने पर कौन सम्भालेगा इस से तो यह अच्छा है कि जीते २ सम्भाललें, और तुम सुख से जीवन व्यतीत करो'—

अर्जुन—'यह सत्य है, परन्तु आरम्भ कर देने पर कार्य्य को समाप्त करने की इच्छा मनुष्य मात्र को होती है'—

मोहन—'तो क्या मनुष्य सारे काम समाप्त कर सक्ता है, कल ही की बात है कि रामनौमी के लिये

स्त्रिया कई दिन से त्यारी कर रहीं थीं, रामनौमी आपहुंची, त्यारी समाप्त भी न हुई, बहू बोली परमेश्वर की बड़ी अनुग्रह है कि त्यौहार बिना बुलाये ही आ उपस्थित होते हैं, नहीं तो हम कभी भी उनके वास्ते त्यार नहीं होसक्ते'—

अर्जुन—'एक बात और है, इस मकान पर बहुत रुपया खर्च होगया है, इस समय रुपये का भी तोड़ा है, न्यून से न्यून सौ रुपये तो हों, नहीं तो यात्रा किस भांति होसक्ती है।

मोहन—(हंसकर) 'आहा हा ! देखो दैवगति विचित्र है, जो जितना धनवान है, उतना ही कङ्गाल है. तुम और रुपये की चिन्ता करते हो जाने भी दो मैं सत्य कहता हूं, कि इस समय मेरे पास सौ रुपये नहीं; परन्तु जब चलने का निश्चय होजाएगा तो रुपया भी कहीं न कहीं से अवश्य आही जाएगा। बस यह बतलाओ कि चलना कब है।

अर्जुन—ओहो ! अदृष्ट पर बड़ा ही विश्वास है, कहां से आजाएगा; बताओ तो सही—

मोहन–'कुछ घर में से कुछ माल बेचकर, पड़ौसी कुछ चौखट आदि मोल लेना चाहता है, उसे सस्ती देदूंगा'

अर्जुन–'सस्ती बेचने पर पश्चाताप न होगा'।

मोहन–'मैं सिवाय पाप कर्म्म के और किसी काम पर पश्चाताप नहीं करता–आत्मा से अधिक और कोई वस्तु प्रिय नहीं'।

अर्जुन–'यह सब ठीक है परन्तु घर के काम काज को बिसारना भी उचित नहीं'—

मोहन–'आत्मा को बिसारना बुरा नहीं किन्तु पाप है, संकल्प अवश्य पूरा करना चाहिये'—

२.

अन्त में चलना निश्चय होगया। चार दिन पीछे जब विदा होने का समय आया तो अर्जुन बड़े लड़के को समझाने लगा, कि मकान पर छत इस प्रकार डालना, भूसा खलयान में इस भांति जमाकर देना, मंडी में जाकर अनाज इस भाव बेचना, रुपये सम्भाल कर रखना ऐसा न हो खोये जावें, घर का प्रबन्ध ऐसा

रखना कि किसी प्रकार की हानि न होने पावे इत्यादि उसका समझाना समाप्त ही न होता था—

इस के प्रतिकूल मोहन ने अपनी स्त्री से केवल इतना ही कहा, कि तुम चतुर हो यथोचित काम करती रहना।

मोहन तो घर से प्रसन्न मुख बाहर निकला गांव छोड़ते ही घर के सारे बखेड़े भूल गया, साथी को प्रसन्न रखना, सुख पूर्वक यात्रा कर घर लौट आना उसका मन्तव्य था। राह चलते क्या तो ईश्वर सम्बन्धी कोई भजन गाता, अथवा किसी महापुरुष का जीवन चरित्र स्मरण करता—सड़क पर अथवा सराय में जिस किसी से भेट होजाती उसे सद् उपदेश करता था—

अर्जुन चुपके २ चल तो रहा था, परन्तु उसका चित्त व्याकुल था, सदैव घर के धन्दे चिन्तन करके संकल्प विकल्प से मन विक्षिप्त रखता था 'लड़का अनजान है, कौन जाने क्या कर बैठे'—अमुक बात कहनी भूल आया, ओहो देखूं मकान की छत डलती है अथवा नहीं' इत्यादि विचार से वह ऐसा सन्तप्त होता था कि कभी २ लौट जाने पर प्रस्तुत हो जाता था—

३.

चलतेर एक महीना पीछे वह पहाड में पहुंच गये, पहाडी अतिथि सेवक बडे होते हैं, अब तक वह मोल का अन्न खाते रहे थे, अब उनकी बडी खातरदारी होने लगी—

आगे चलकर वह ऐसे देश में पहुचे जहां दुर्भिक्ष काल पड़ा हुआ था, खेतिया सब सूख गई थीं, अनाज का एक दाना भी नहीं उगा था, धनवान् कङ्गाल होगये धन हीन देश छोडकर भीख मागने बाहर भाग गये थे।

यहां उन्हें कुछ कष्ट हुआ, अर्थात् अन्न कम मिलता था, और वह भी बड़ा महगा, रात्रि को उन्हों ने एक जगह विश्राम किया—अगले दिन चलते २ एक गाव मिला, गांव के बाहर एक झोंपड़ा था, मोहन थक गया था, बोला 'मुझे प्यास लगी है, तुम चलो मैं इस झोपडे में पानी पीकर अभी तुम्हें आ,

रखना कि किसी प्रकार की हानि न होने पावे इत्यादि उसका समझाना समाप्त ही न होता था—

इस के प्रतिकूल मोहन ने अपनी स्त्री से केवल इतना ही कहा, कि तुम चतुर हो यथोचित काम करती रहना।

मोहन तो घर से प्रसन्न मुख बाहर निकला गांव छोड़ते ही घर के सारे बखेड़े भूल गया, साथी को प्रसन्न रखना, सुख पूर्वक यात्रा कर घर लौट आना उसका मन्तव्य था। राह चलते क्या तो ईश्वर सम्बन्धी कोई भजन गाता, अथवा किसी महापुरुष का जीवन चरित्र स्मरण करता—सड़क पर अथवा सराय में जिस किसी से भेट होजाती उसे सद् उपदेश करता था—

अर्जुन चुपके २ चल तो रहा था, परन्तु उसका चित्त व्याकुल था, सदैव घर के धन्दे चिन्तन करके संकल्प विकल्प से मन विक्षिप्त रखता था 'लड़का अनजान है, कौन जाने क्या कर बैठे'—अमुक बात कहनी भूल आया, ओहो देखूं मकान की छत ढलती है अथवा नहीं' इत्यादि विचार से वह ऐसा सन्तप्त होता था कि कभी २ लौट जाने पर प्रस्तुत हो जाता था—

बुढ़िया—'तुम कौन हो, क्या मांगते हो, हमारे पास कुछ नहीं'—

मोहन—'मुझे प्यास लगी है, पानी मांगता हूं'।

बु०—'यहां बर्तन है न कोई लाने वाला, यहां कुछ नहीं—जाओ अपनी राहलो'—

मोहन—'क्या तुम में से कोई उस स्त्री की सेवा नहीं कर सक्ता'—

बु०—'कोई नहीं—बाहर मेरा लड़का भूख मे मर रहा है, यहां हम भूख मे मर रहे हैं।

यह बातें हो ही रही थीं कि बाहर से वह मनुष्य भी गिरता पड़ता भीतर आया और बोला—

मनुष्य—'काल और रोग दोनों ने हमें मार डाला यह बालक कई दिन से भूखा है—क्या करूं'—यह कह कर रोने लगा और उस की हिचकी बन्ध गई—

मोहन ने तुरन्त अपने थैले में से, रोटी निकाल कर उनके आगे रखदी।

मिलता हूं'—अर्जुन बोला 'अच्छा, पीआओ, मैं धीरे २ चलता हूं'—

झोंपड़े के पास जाकर मोहन ने देखा कि उस के आगे धूप में एक मनुष्य पड़ा है। मोहन ने उस से पानी मांगा, उसने कोई उत्तर नहीं दिया, मोहन समझा कि कोई रोगी है।

समीप जाने पर झोंपड़े के भीतर से एक बालक के रोने का शब्द सुनाई दिया, किवाड़ खुले हुए थे, वह भीतर चला गया—



४.

देखा कि नंगे सिर केवल एक चादर ओढ़े एक बुढ़िया पृथ्वी पर बैठी है, पास भूख का मारा हुआ एक बालक बैठा रोटी २ पुकार रहा है, चूल्हे के पास एक स्त्री पड़ी तड़प रही है, उस की आंखें बन्द हैं, कण्ठ रुका हुआ है।

बुढ़िया—'तुम कौन हो, क्या मांगते हो, हमारे पास कुछ नहीं'—

मोहन—'मुझे प्यास लगी है, पानी मांगता हूं'।

बु०—'यहां बर्तन है न कोई लाने वाला, यहां कुछ नहीं—जाओ अपनी राहलो'—

मोहन—'क्या तुम में से कोई उस स्त्री की सेवा नहीं कर सक्ता'—

बु०—'कोई नहीं—बाहर मेरा लड़का भूख से मर रहा है, यहां हम भूख से मर रहे हैं।

यह बातें हो ही रही थीं कि बाहर से वह मनुष्य भी गिरता पड़ता भीतर आया और बोला—

मनुष्य—'काल और रोग दोनों ने हमें मार डाला यह बालक कई दिन से भूखा है—क्या करूं'—यह कह कर रोने लगा और उस की हिचकी बन्ध गई—

मोहन ने तुरन्त अपने थैले में से रोटी निकाल कर उनके आगे रखदी।

मिलता हूं'—अर्जुन बोला 'अच्छा, पीआओ, मैं धीरे २ चलता हूं'—

झोंपड़े के पास जाकर मोहन ने देखा कि उस के आगे धूप में एक मनुष्य पड़ा है। मोहन ने उस से पानी मांगा, उसने कोई उत्तर नहीं दिया, मोहन समझा कि कोई रोगी है।

समीप जाने पर झोंपड़े के भीतर से एक बालक के रोने का शब्द सुनाई दिया, किवाड़ खुले हुए थे, वह भीतर चला गया—

४.

देखा कि नंगे सिर केवल एक चादर ओढ़े एक बुढ़िया पृथ्वी पर बैठी है, पास भूख का मारा हुआ एक बालक बैठा रोटी २ पुकार रहा है, चूल्हे के पास एक स्त्री पड़ी तड़प रही है, उस की आखें बन्द हैं, कण्ठ रुका हुआ है।

बुढिया—'तुम कौन हो, क्या मागते हो, हमारे पास कुछ नही'—

मोहन—'मुझे प्यास लगी है, पानी मागता हूं' ।

बु०—'यहा बर्तन है न कोई लाने वाला, यहा कुछ नही—जाओ अपनी राहलो'—

मोहन—'क्या तुम में से कोई उस स्त्री की सेवा नहीं कर सकता'—

बु०—'कोई नही—बाहर मेरा लडका भूख मे मर रहा है, यहा हम भूख मे मर रहे हैं ।

यह बातें हो ही रही थी कि बाहर से वह मनुष्य भी गिरता पडता भीतर आया और बोला—

मनुष्य—'काल और रोग दोनों न हमें मार डाला, यह बालक कई दिन से भूखा है—क्या करू'—यह कह कर रोने लगा और उस की हिचकी बन्ध गई—

मोहन ने तुरन्त अपने थैले में से, रोटी निकाल कर उनके आगे रखदी ।

बु०—'इनके कण्ठ सूख गये है बाहर से पानी ले आओ' मोहन बुढिया से कुए का पता पूछकर बाहर जा करके पानी ले आया. सब ने रोटी खाकर पानी पिया, परन्तु चूल्हे के पास वाली स्त्री पड़ी तड़पती रही । मोहन गांव में जाकर कुछ दाल चावल मोल ले आया और खिचड़ी पकाकर सब को खिलाई—

५.

बु०—'भाई क्या सुनाऊ–निर्धन तो हम पहले ही थे । उस पर पड़ा काल हमारी और भी दुर्गति हो गई, पहले २ तो पड़ौसी अन्न उधार देते रहे, परन्तु वह क्या करते वह स्वयं भूखे मरने लगे, हमें कहा से देते'—

म०' मै मजूरी करने निकला, दो तीन दिन तो कुछ मिला, फिर किसी ने नौकर न रक्खा, बुढ़िया और लड़की भीख मागने लगी, अन्न का काल था, कोई भिक्षा भी न देता था, बहुतेरे यत्न किये कुछ

न बनसका, भूख के मारे घास खाने लगे, इसी कारण यह मेरी स्त्री चूल्हे के पास पड़ी तड़प रही है'।

बु०—'पहले कई दिन तक तो मैं चल फिर कर कुछ धन्दा करती रही, परन्तु कहा तक भूख और रोग से ग्रस्त होकर सब हार गये, जो हाल है तुम अपने नेत्रों से देख रहे हो'—

उनकी विथा सुनकर मोहन ने विचारा कि आज रात यहीं रहना उचित है साथी से कल मिल लेंगे—

प्रातःकाल उठकर वह गाव में जाकर सारी सामग्री ले आया, घर में कुछ न था; वह वहा ठहर कर इस प्रकार काम करने लगा कि मानो अपना ही घर है; दो तीन दिन पीछे सब चलने फिरने लग गये; और वह स्त्री भी उठ बैठी—

६.

चौथे दिन एकादशी थी; मोहन ने विचारा कि आज सन्ध्या को इन सब के साथ बैठकर फलाहार करके कल प्रातःकाल चल देंगे।

अतएव वह गांव में जाकर दूध, फलाहार; सब सामग्री लाकर बुढ़िया को दे आप पूजापाठ करने मन्दिर में चला गया। जिमींदार गांव के चौधरी के पास पहुंचा और विनय पूर्वक निवेदन करने लगा—

चौधरी जी—'इस समय रुपये देकर खेत छुड़ाना तो असम्भव है यदि आप इस फसल मुझे खेत बोने की आज्ञा देदें; तो मेहनत मजूरी करके आपका ऋण चुका देसक्ता हू' परन्तु चौधरी कब मानता था: वह बोला—' बिना रुपये खेत बोना असम्भव है जाओ अपना काम करो, वह निराश होकर घर लौट आया इतने में मोहन भी पहुंच गया, ज़िमीदार की बात सुनकर वह मन में विचार करने लगा—

मोहन—(स्वागत)—'यह किस प्रकार प्राण रक्षा करेंगे, चौधरी ने खेत बोने तक की आज्ञा नहीं दी, इनका खेत गहने है, यदि मै इन्हें इसी दशा में छोड़ कर चल दिया तो यह सब काल का कौर बनजायेंगे, कल नहीं, परसों जाऊगा'—

सन्ध्या समय नित्य नैमित्यक कर्म्मों से छुट्टी

पाकर सब ने भोजन किया, और सब सो गये, परन्तु मोहन पड़ा २ सोचने लगा—'यह तो अच्छा बखेड़ा फैला, पहले अन्न पानी, अब खेत छुड़ाना, तदपश्चात गाय और बैलों की जोड़ी मोल लेना मोहन तुम किस जंजाल में फस गये'।

जी चाहता था कि वह उन्हें ऐसे ही छोड़कर चलदे, परन्तु दया जाने न देती थी, सोचते २ आंख लग गई, स्वप्न में देखता क्या है कि वह जाना चाहता है, किसी ने उसे पकड़ लिया है लौट कर देखा तो बालक रोटी माग रहा है, वह तुरन्त उठ बैठा—

मोहन-(स्वागत) 'नही, अब मै नहीं जाता, यह स्वप्न शिक्षा देता है कि मुझे इनका खेत छुडाकर गाय बैल मोल लेकर सारा प्रबन्ध करके जाना उचित है—नही तो वाह्य बद्री नारायण के दर्शनार्थ अन्तरीय बद्री नारायण को खोबैठूंगा'।

अतएव प्रातःकाल उठकर चौधरी के

जाकर रुपये देकर उनका खेत छुड़ा दिया, तदपश्चात् एक किसान से एक गाय और दो बैल मोल लेकर घर लौट रहा था कि राह में स्त्रियों को यू बातें करते सुना—

'बहन, पहले तो वह उसे साधारण मनुष्य जानते थे, वह केवल पानी पीने आया था, परन्तु सारी सामग्री इकठ्ठी करके उसने उनका घर बाँध दिया अब सुना है कि खेत छुड़ाने, और गाय बैल मोल लेने गया है, ऐसे महात्मा के दर्शन करने आवश्यक हैं'—मोहन अपनी स्तुति सुनकर वहा से टल गया, गाय बैल लेकर जब झोंपड़े पर पहुंचा तो जिमीदार ने पूछा—'पिताजी, यह कहां से लाए'

मोहन—'अमुक किसान से यह बड़े सस्ते मिल गये हैं, जाओ, पशुशाला में बाँधकर इनके आगे कुछ भूसा डालदो'—

उसी रात जब सब सोगये, तो मोहन ने चुपके से उठकर बाहर निकल, बद्री नाथ

७.

तीन मील चलकर मोहन एक वृक्ष के नीचे बैठकर बटुआ निकाल रुपये गिनने लगा, तो सत्तरह रुपये बाकी थे।

मोहन—(स्वागत) इन रुपयों में बद्री नारायण पहुँचना असम्भव है, भीख मागना पाप है अर्जुन वहां अवश्य पहुचेगा, और आशा है कि मेरे नाम पर कुछ चढ़ावा भी चढ़ा ही देगा, मैं तो अब आयु पर्य्यन्त यात्रा करने का संकल्प पूरा नहीं कर सक्ता, अच्छा परमात्मा की इच्छा वह बड़ा दयालु है, मुझ जैसे पापियों को निःस्सन्देह क्षमा करेगा।

यह विचार कर गाव का चक्कर काटकर कि कोई देख न ले, वह घर की ओर लौट पड़ा—

गाव में पहुच जाने पर घर वाले उसे देखकर अति प्रसन्न हुए, और पूछने लगे, कि लौट क्यों आये, मोहन ने यही उत्तर दिया कि अर्जुन बिछड

गया, और रुपये चोरी होगये, इस कारण लौट आना पड़ा, घर में सब क्षेम कुशल थी कोई कष्ट न था ।

मोहन का आना सुनकर अर्जुन के घर वाले आकर पूछने लगे कि अर्जुन को कहां छोड़ा उनको भी उसने यही कहा, कि बद्री नारायण पहुंचने से तीन दिन पहले मैं अर्जुन से बिछड़ गया, रुपया किसी ने चुरा लिया, बद्री नारायण जाना असम्भव था, मुझे लौटनाही पड़ा ।

सब लोग मोहन की बुद्धि पर हसने लगे कि बद्री नारायण पहुंचा ही नहीं, रास्ते में ही रुपये खो दिये, मोहन घर के धन्दे में लग गया. बात आई गई ।



८.

अब उधर का हाल सुनिये—

मोहन जब पानी पीने चला गया, तो थोड़ी

दूर जाकर अर्जुन बैठ गया, और साथी की बाट देखने लगा, सन्ध्या होगई पर मोहन न आया।

अर्जुन-(स्वागत) क्या हुआ, साथी क्यों नहीं आया मेरी आंख लग गई थी, कहीं आगे न निकल गया हो, पर यदि यहां से जाता तो क्या दिखाई न देता, पीछे लौट कर देखूं कहीं आगे न चला गया हो, फिर तो मिलना ही असभव है, आगे ही चलो, रात्रि को चट्टी पर अवश्य भेट हो जायगी।

रास्ते में अर्जुन ने कई मनुष्यों से पूछा कि उन्हों ने कोई नाटा साँवले रंग का मानस देखा है कि नहीं, परन्तु कुछ पता न चला। रात्रि को चट्टी पर भी मोहन से भेट न हुई-अगले दिन यह विचार कर कि देव प्रयाग पर अवश्य मिल जायगा, वह आगे चल दिया।

रास्ते में अर्जुन को एक साधू मिल गया, यह जगन्नाथ की यात्रा करके आया था, अब दूसरी बेर बद्री नारायण के दर्शनों को जारहा था, रात्रि को चट्टी पर वह दोनों इकट्ठे ही रहे, और फिर एक साथ यात्रा करने लगे।

देवप्रयाग में पहुंचकर अर्जुन ने मोहन के विषय में पण्डों से बहुत कुछ पूछ ताछ की, कुछ पता न चला, यहां सब संग एकत्र होगया। देवप्रयाग से आगे चलकर संग के लोग रात्रि को एक चट्टी में ठहरे। वहां मूसलाधार मींह बरस ने लगा, बिजली की कड़क बादल की गरज से सब कांप गये, सारी रात जागते कटी, त्राह त्राह करके दिन निकला।

अन्तकाल मध्यान समय संग बद्री नारायण पहुंच गया, पण्डे देवप्रयाग से ही साथ हो लिये थे, बद्री नारायण में यह रीति है कि पहले दिन यात्रियों को मन्दिर की ओर से भोजन कराया जाता है, और उसी दिन यात्रियों को अटका अर्थात् चढ़ावा बतला देना पडता है कि कौन कितना चढायगा, न्यून से न्यून १।) रुपया नियत है, उस समय तो सब ने पण्डों के घरों में जाकर विश्राम किया, अगले दिन प्रातःकाल उठकर दर्शन परसन में प्रवृत्त हुए— अर्जुन और साधू एकही स्थान में टिके थे, सायंकाल

की आर्ती के दर्शन करके लौटकर जब घर आये तो साधू बोला कि मेरा तो किसी ने रुपये का बटुआ निकाल लिया।

९.

अर्जुन के मन में यह पाप उत्पन्न हुआ कि यह साधू झूठा है, किसी ने इसका रुपया नहीं चुराया, इसके पास रुपया था ही नहीं, तुरन्त पश्चाताप करके विचारने लगा—

अर्जुन–(स्वागत)–'किसी पुरुष के विषय में ऐसी कल्पना करना महा पाप है'—

अर्जुन ने मन को बहुतेरा समझाया, परन्तु उस का ध्यान साधू में ही लगा रहा। पवित्र स्थान में रहने पर भी चित्त का विक्षेप दूर नहीं हुआ। इतने में सैन की आर्ती का घण्टा बजा, दोनों दर्शनार्थ मन्दिर में चले गये भीड़ बहुत थी, अर्जुन नेत्र मूँद कर भगवान की स्तुति करने लगा, परन्तु हाय

पर था,क्योंकि साधू के रुपये खोये जाने के संस्कार चित्त में गडे हुए थे; अन्तःकरण का शुद्ध होजाना क्या कोई सहज बात है—

१०.

स्तुति समाप्त कर के नेत्र खोलकर अर्जुन जब भगवान के दर्शन करने लगा, तो देखता क्या है कि मूर्ति के अति समीप मोहन खड़ा है, 'है मोहन, नहीं नहीं, मोहन यहा किसप्रकार पहुंच सक्ता है सारे रास्ते तो ढूंढता आया हूं'—

मोहन को साष्टाग दण्डवत करके खडा हो स्तुति करते देखकर अर्जुन को निश्चय होगया कि मोहन ही है, स्यात किसी दूसरी राह मे यहा आपहुंचा है, चलो अच्छा हुआ साथी तो मिल गया—

आर्ती समाप्त होगई, यात्री बाहर निकलने लगे, अर्जुन का हाथ बटुए पर था कि कोई रुपये न चुरा ले—वह मोहन को खोजने लगा पर उसका कहीं पता नहीं चला।

दूसरे दिन प्रातःकाल मन्दिर में जाने पर अर्जुन ने फिर देखा कि मोहन हाथ जोडे भगवान के सम्मुख खडा है. वह चाहता था कि आगे बढकर मोहन को पकडले, परन्तु ज्यूंही वह आगे बढा, मोहन लोप होगया।

तीसरे दिन भी अर्जुन को वही दृश्य दिखाई दिया। उसने विचारा कि चलकर द्वार पर खडे हो जाओ, सब यात्री वहीं से निकलेंगे, वहीं मोहन को पकड लूंगा, अतएव उसने ऐसा ही किया, सब यात्री निकल गये, मोहन का कहीं पता नहीं—

अन्तकाल एक सप्ताह बद्री नारायण में निवास करके अर्जुन घर को लोट पडा।

११.

राह चलते अर्जुन के चित्त में अनेक संकल्प विकल्प उठते थे, कभी विचारता था कि घर बांधने

में आयु व्यतीत होजाती है. बिगाडने में एक क्षण नहीं लगती, कभी सोचता था कि कौन जाने लडके ने क्या कर छोडा हो—फसल कैसी हो ।' पशुओं का पालन पोषण हुआ है कि नहीं, इत्यादि—

चलते २ अर्जुन जब उस झोंपडे के पास पहुंचा जहां मोहन पानी पीने गया था, तो भीतर से एक लडकी ने आकर उसका कुडता पकड लिया, और बोली—'बाबा, बाबा, भीतर चलो' ।

अर्जुन कुडता छुडाकर जाना चाहता था कि भीतर से एक स्त्री बोली—'महाशय ! भोजन करके रात्रि को यहीं विश्राम कीजिये. प्रातःकाल चले जाना' । वह अन्दर चला गया, और सोचने लगा कि मोहन यहीं पानी पीने आया था, स्यात इन लोगों से उसका कुछ पता चल जाय—

स्त्री ने अर्जुन के हाथ पैर धुलाकर भोजन परस दिया । अर्जुन उसका धन्यवाद करने लगा—

स्त्री—'महाशय हम अतिथि सेवा करना क्या जानें. यह सब कुछ हमें एक यात्री ने सिखाया है, हम परमात्मा को भूल गये थे, हमारी यह दशा हो

गई थी कि यदि वह बूढा यात्री न आता तो हम सब के सब मरजाते, वह यहा पानी पीने आया था, हमारी दुर्दशा देख कर यहीं ठहर गया, हमारा खेत गहने पडा था, वह छुडा दिया, गाय बैल मोल ले कर सब सामग्री उपस्थित करके एक दिन न जाने कहा चला गया,

बुढ़िया—'वह मनुष्य नही था साक्षात देवता था उसने प्रेम वस होकर हमपर ऐसी दया की कि हम उसका धन्यवाद नही कर सक्ते. वह पानी मागने आया, मैने कहा जाओ यहा पानी नहीं—जब मैं वह बात स्मरण करती हू तो मेरा शरीर काप उठता है।

जिमीदार— निस्सन्देह उस यात्री ने हमें जीवन दान दिया। हम जान गये कि परमेश्वर क्या है और परउपकार क्या—वह हमें पशुओं से मनुष्य बनागया।

अर्जुन अब समझा कि बद्री नारायण के मंदिर में मोहन के दिखाई देने का कारण क्या था। उसे निश्चय होगया कि मोहन की यात्रा सफल हुई—

अगले दिन वह वहा से चल दिया।

कुछ दिनों पीछे अर्जुन, घर पहुच गया, लड़का

कलाके खाते गया हुआ था । आया तो मस्त था घरका हाल सब विगड़ा हुआ था। अर्जुन लड़के को ताड़ना करने लगा । लड़के ने कहा—'यात्रा पर जाते को किसने कहा था । न जाते'—इस पर अर्जुन ने उसके मुंह पर तमाचा मारा ।

अगले दिन अर्जुन जब चैाधरी को मिलने जा रहा था तो राह में मोहन की स्त्री मिलगई ।

स्त्री—'भाई तुम प्रसन्न तो हो, कहिये वद्रीनारायण हो आये' ।

अ—'हा हो आया । मोहन मुझसे रास्ते में विछड़ गया था, कहो वह कुशल पूर्वक तो घर पहुंच गया ।

स्त्री—उन्हें आये तो देर होगई, उनके विना हम सब उदास रहा करते थे, स्वामी विना घर सूना होता है ।

अ—'इस समय मोहन घरमें है कि कहीं, वाहर गये हैं' ।

स्त्री—'नहीं,—घर में हैं' ।

अर्जुन भीतर चला गया ।

अर्जुन-राम २ भईया मोहन रामराम।

मोहन-रामराम, आओ मित्र, आनन्द तो हो, हिये दर्शण कर आये।

अर्जुन-हा कर तो आया, पर मैं यह नहीं कह का कि यात्रा सफल हुई अथवा नहीं, लौटते समय उस झोपडे में ठहरा था जहा तुम पानी पीने ये थे।

मोहन ने वात टालदी, और अर्जुन भी चुप गया, परन्तु उसे द्रढ विश्वास होगया कि उत्तम र्थ यात्रा यही है कि पुरुष जीवन पर्य्यंत प्राणी साथ प्रेम भाव रखकर सदैव उपकार में तत्पर रहे।

* सातवीं कहानी *

प्रेम में परमेश्वर।

पहाडी प्रात के एक गाव में चन्द्रभान नाम का एक वनिया रहता था उसकी सडक पर छोटी सी दुकान थी, वहा रहते उसे वहुत काल होचुका था, इसलिये वहा के सब निवासियों को भली भांति जानता था, वह बड़ा सदाचारी, सत्य वक्ता, व्यवहार का सरा, वचनशूर, सभ्य और सुशील था।

चौथे पनमें वह परमात्म भजन का प्रेमी होगया था परन्तु स्त्री पुत्र सबके सब मरजाने के कारण उसका चित्त स्थिर न होता था, और बालक तो पहले ही मर चुके थे, अंतमें तीन साल का बालक छोड़ कर स्त्री का जब देहांत हुआ तो चन्द्रभान ने विचारा कि यह बालक ही मेरे जीवन का आधार होगा, उसके सन्तान का जोग न था, पलपला कर बीस वर्ष की अवस्था में यह बालक भी यमलोक को सिधार गया. अब चन्द्रभान के शोक की कोई सीमा न थी, उसका विश्वास हिल गया, सदैव परमात्मा को उपालंभदे कर यह कहा करता था कि 'परमेश्वर बड़ा निर्दयी और अन्यायी है, मारना मुझ बूढे को चाहिये था, मार डाला युवक को' यहा तक कि उसने ठाकुर मंदर जाना भी छोड़ दिया।

एक दिन उसका एक प्राचीन मित्र, जो आठ वर्ष से तीर्थ यात्रा को गया हुआ था, उससे मिलने आया, चन्द्रभान बोला—'मित्र, देखो सर्व नाश हो गया है अब मेरा जीना अकार्थ है, मैं नित्य परमात्मा से यही प्रार्थना करता हूं कि वह मुझे शीघ्र इस मृत्यु लोक से उठाले, मैं अब किस आशा पर जिऊं'

मित्र—'चन्द्रभान ऐसा मत कहो, परमेश्वर मन बुद्धि से परे है, हम उसकी इच्छा कदापि नहीं जान सक्ते, वह जो करता है ठीक करता है, पुत्र का मर जाना और तुम्हारा जीते रहना विधाता के वश है, और कोई इसमें क्या कर सक्ता है, तुम्हारे शोक का मूल कारण यह है कि तुम अपने सुख में सुख मानते हो पराये सुख से सुख नहीं मानते'।

चन्द्रभान—'तो मैं क्या करूं'।

मित्र—'परमात्मा की निष्काम अनन्य भक्ति करने से अंतःकरण शुद्ध होता है, निष्काम होकर जब सब काम परमेश्वर को अर्पण करके जीवन व्यतीत करोगे तो तुम्हें परमानन्द प्राप्ति होगा'।

चन्द्रभान—'चित्त स्थिर करने का कोई उपाय तो बतलाइये'।

मि. 'गीता, भक्त मालादि ग्रन्थों का श्रवण, पठन, मनन, निदिध्यासन किया करो यह ग्रन्थ धर्म्म अर्थ, काम मोक्ष चारों फलके देने वाले हैं, इनका पढ़ना आरंभ करदो, चित्त को बड़ी शान्ति प्राप्त होगी'।

अतएव चन्द्रभान ने इन ग्रन्थों को पढना आरंभ किया, थोड़े ही काल में बुद्धि में चमत्कार हो जाने

पर उसकी यह दशा होगई कि रात्रि को बारह बजे तक गीता आदि पढ़ता और उसके यथार्थ उप देशों पर विचार करता रहता था, पहले तो वह सं समय मृतक पुत्र का स्मरण करके रोया करता था, अब सब भूलगया, सदा परमात्मा में लवलीन रह कर आनंद पूर्वक अपना जीवन बिताने लगा, पहले तो इधर उधर बैठकर हसी ठठा भी कर लिया करता था, परन्तु अब वह समय व्यर्थ न खोता था, वया तो दुकान का काम करता था वया गीता पढ़ता था तात्पर्य यह कि उसका जीवन सुधर गया, उसके आनन्द की कोई सीमा न रही।

एक रात गीता पढ़ते २ नवम अध्याय का य श्लोक सामने आया।

"सुहृन्मित्रार्यु दासीन मध्यस्थ द्वेष्य बन्धुषु
साधुष्वापिच पापेषु सम बुद्धिर्विशिष्यते ॥

अर्थात् जो पुरुष सुहृद, मित्र, शत्रु, उदासी मध्यस्थ, द्वेष्य, बंधु, साधु, पापी, सर्व प्राणि विषय समान बुद्धि करके सबको अपना आ जानता है वह पुरुष सबमे उत्कृष्ट, पूजनीय औ

योगी है-गीता के पीछे चन्द्रभान भक्तमाल विचारने लगा एक स्थल में यह प्रसंग आया कि जो पुरुष, परमेश्वर परायण होकर उसकी इच्छानुसार अपना जीवन नहीं बिताता उस पुरुष का जीवन निष्फल है।

चन्द्रभान पुस्तक रखकर मनमें विचारने लगा कि-'क्या मेरा जीवन सफल है, आज से मैं दृढ़ प्रतिज्ञा करता हूं कि सब काम ईश्वरार्पण करूंगा, माना कि मन बड़ा चंचल है परन्तु अभ्यास भी बड़ी वस्तु है, तद पश्चात् सुदामा और शिवरी की कथा पढ़ कर उसके मनमें यह भाव उत्पन्न हुआ कि 'क्या मुझे भी भगवान के दर्शन हो सक्ते हैं'।

यह विचारते २ उसकी आंख लगगई, बाहर से किसी ने पुकारा 'चन्द्रभान'।

वह चौंककर उठ बैठा, देखा तो वहां कोई नहीं, इतने में फिर बाहर से कोई बोला' चन्द्रभान, देख याद रख, मैं कल तुम्हें दर्शण दूंगा'।

यह सुनकर वह दुकान से बाहर निकल आया वहां कौन था, वह चकित होकर कहने लगा, यह स्वप्न है अथवा जागृत, कुछ पता न चला, वह दुकान के भीतर जाकर सोगया।

अगले दिन प्रातः काल उठ सन्ध्या वंधन कर दुकान में आ, भोजन बना, चन्द्रभान अपने काम धंदे में लग गया, परन्तु उसे रात वाली बात नहीं भूलती थी. फिर कहने लगा कि ऐसे अध्यास प्रायः होजाया करते है, जाने भी दो।

रात्रि को पाला पड़ने के कारण सडक पर वर्फ के ढेर लग गये थे, चन्द्रभान अपनी धुन में वैठा था, इतने में वर्फ हटाने को कोइ कुली आया, उसने समझा कृष्णचन्द्र आते है, आंखे खोल कर देखा कि बूढ़ा लालू वर्फ हटाने आया है, हंसकर कहने लगा, 'मै तो सठया गया, आवे बूढा लालू, और मै समझ कृष्ण भगवान, वाहरी बुद्धि'।

लालू वर्फ हटाने लगा, बूढा आदमी था शीत के कारण वर्फ न हटा सका, थककर बैठ गया और शीत के मारे कापने लगा, चन्द्रभान ने सोचा कि लालू को ठंड लग रही है, इसे चाय पिलानी चाहिये।

चन्द्रभान—'लालू भइया, यहां आओ, थोडीसी चाय पीलो, तुम्हें ठंड सतारही है'।

लालू दुकान पर आकर धन्यवाद करके चाय पीने लगा।

चन्द्रभान–'भाई कोई चिंता न करो, बर्फ मैं हटा देता हूं, तुम बूढ़े हो, ऐसा न हो जाड़ा मार जाय'।

लालू–'तुम क्या किसी की बाट देख रहे थे'।

चन्द्रभान–'क्या कहूं, कहते हुए लज्जा आती है, रात मैंने एक ऐसा स्वप्न देखा है कि उसे भूल नहीं सका, भक्तमाल पढ़ते २ मेरी आंख लगगई, बाहर से किसी ने पुकारा 'चन्द्रभानः मैं उठकर बैठ गया, फिर शब्द हुआ चन्द्रभान मैं तुम्हें कल दर्शन दूंगा' बाहर जाकर देखता हूं तो वहां कोई नहीं'। मैं भक्तमाल में सुदामा और शिवरी के चरित्र पढ़कर यह जान चुका हूं कि भगवान ने प्रेम वश होकर किस प्रकार साधारण जीवों को दर्शन दिये हैं, वही अभ्यास बना हुआ है, उसी के वश बैठा कृष्णचन्द्र की राह देख रहा था कि तुम आगये'।

चन्द्रभान ने लालू को और चायदी और बोला 'भाई लालू, अभिमान से अवनति, नम्रता और विनय से उच्च पदवी प्राप्ति होती है'।

लालू इन बातों को तो भली प्रकार न समझ सका परन्तु चन्द्रभान के प्रेमभाव की प्रशंसा करने लगा चन्द्रभान–'वाह भाई लालू, यह बातहीं क्या

है, इस दुकान को अपना घर समझो, मै सदैव तुम्हारी सेवा करने को त्यार हूं'।

लाल धन्यवाद करके चल दिया, उसके पीछे दो सिपाही आये,उसके पीछे एक किसान आया फिर एक रोटी वाला आया फिर एक स्त्री आई वह फटे पुराने वस्त्र पहरे हुई थी उसकी गोद में एक वालक था दोनों शीत के मारे कांप रहे थे।

चन्द्रभान—'माई, वाहर ठंड में क्यों खड़ी हो, वालक को जाड़ा लग रहा है, भीतर आकर कपड़ा ओढलो'।

स्त्री भीतर आगई, चन्द्रभान ने उसे चूल्हे के पास विठाकर चाय पिलाई और वालक को कुछ मिठाई दी

चन्द्रभान—'माई तुम कौन हो'।

स्त्री—' मैं एक सिपाही की स्त्री हूं, आठ महीने से न जाने कर्म्म चारियों ने मेरे पति को कहा भेज दिया है, कुछ पता नहीं लगता, गर्भवती होने पर मैं एक जगह रसोई का काम करने पर नौकर थी, ज्यूंही यह वालक उत्पन्न हुआ उन्हों ने इस भय से कि दो जीवों को अन्न देना पड़ेगा मुझे निकाल दिया, तीन महीने मे मारी मारी फिरती हूं, कोई

टहलनी नहीं रखता, जो कुछ पास था सब बेचकर खागई, इधर एक साहूकारनी के पास जाती हूँ, स्यात नौकर रखले'।

चन्द्रभान—'तुम्हारे पास कोई उन्न वस्त्र नहीं'।

स्त्री—'वस्त्र कहां से हो, छदाम तो पास नहीं'।

चन्द्रभान—'यह लो लोई, इसे ओढ़लो'।

स्त्री—'भगवान तुम्हारा भला करे, तुमने बड़ी दया की, बालक शीत के मारे मरा जाता था'।

चन्द्रभान—'मैंने दया कुछ नहीं की, श्री कृष्ण-चन्द्र व्रजचन्द्र की इच्छा ही ऐसी है।

फिर चन्द्रभान ने स्त्री को रात वाला स्वप्न सुनाया।

स्त्री—' क्या अचरज है, दर्शन होने कोई असम्भव तो नहीं '।

स्त्री के चले जाने पर एक सेब बेचने वाली आई, उसके सिर पर सेबों की टोकरी थी और पीठ पर अनाज की गठड़ी, टोकरी धरती पर रखकर, खम्भे का सहारा ले वह विश्राम करने लगी कि एक बालक टोकरी में से सेब उठाकर भागा, सेब वाली ने दौड़ कर उसे पकड़ लिया और सिर के बाल खैंचकर

मारने लगी, बालक बोला—'मैंने सेब नहीं उठाया
चन्द्रभान ने उठकर बालक को छुड़ा दिया।

चन्द्रभान—'माई क्षमा कर, बालक है'।

सेबवाली—'यह बालक बड़ा उतपाती है, मैं इसे दण्ड दिये बिना कभी न छोड़ूंगी'।

चन्द्रभान—'माई, जाने दे, दयाकर, मैं उसे समझा दूंगा, वह ऐसा काम फिर कभी नहीं करेगा'।

बुढ़िया ने बालक को छोड़ दिया। वह भागना चाहता था कि चन्द्रभान ने उसे रोका, और कहा—

चन्द्रभान—'बुढ़िया से अपना अपराध क्षमा कराओ, और प्रतिज्ञा करो कि फिर चोरी नहीं करोगे, मैंने आप तुम्हें सेब उठाते देखा है, तुमने यह झूठ क्यों बोला'।

बालक ने रो कर बुढ़िया से अपना अपराध क्षमा कराया, और प्रतिज्ञा की कि फिर झूठ नहीं बोलूंगा। इस पर चन्द्रभान ने उसे एक सेब मोल ले दिया।

बुढ़िया—'वाह वाह, क्या कहना है, इस प्रकार तो तुम गांव के समस्त बालकों का सत्यानाश कर

डालोगे यह अच्छी शिक्षा है, बालक मार से सुधरते हैं कि नम्रता से'।

चन्द्रभान–' माई, यह क्या कहती हो, अदले का बदला मनुष्यों की प्रकृति है, परमात्मा की नहीं, वह दयालु है। यदि इस बालक को एक सेब चुराने का कठिन दण्ड मिलना उचित है, तो हम को हमारे अनन्त पापों का क्या दण्ड मिलना चाहिये, माई सुनो मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं, एक कर्म्मचारी ने राजा के दस हजार रुपये देने थे, उसके अतिशय विनय करने पर राजा ने उसे ऋण छोड दिया। आगे उस कर्म्मचारी ने अपने सेवकों से सौ सौ रुपये लेने थे, वह उन्हें बडा कष्ट देने लगा। उन्हों ने बहुतेरी विनय की कि हमारे पास पैसा नहीं, ऋण कहां से चुकावें, कर्म्मचारी ने एक न सुनी। वह सब राजा के पास जाकर फिरयादी हुए, राजा ने तत्काल कर्म्मचारी को कठिन दण्ड दिया। तात्पर्य्य यह कि यदि हम जीवों पर दया नहीं करेंगे तो परमात्मा भी हम पर दया नहीं करेगा'।

बुढिया–'यह सत्य है, परन्तु ऐसे वर्ताव से बालक बिगड़ जाते हैं'।

चन्द्रभान—कदापि नहीं, बिगड़ते नहीं वरंच सुधरते हैं।

बुढ़िया टोकरा उठाकर चलने लगी, कि उसी बालक ने आकर विनय की कि माई यह टोकरा तुम्हारे घर तक मैं पहुंचा आता हूं।

रात्रि होने पर चन्द्रभान भोजन पाने के पीछे गीता पाठ कर रहा था कि उसकी आंख झपकी, और उसने यह दृश्य देखा—

'चन्द्रभान, चन्द्रभान'।

चन्द्रभान—'कौन हो'।

'मैं—लाल'—इतना कहकर लाल हंसता हुआ चला गया।

फिर आवाज आई। "मै हू" चन्द्रभान देखता है कि दिन वाली स्त्री लोई ओढ़े, बालक को गोद में लिये सन्मुख आकर खड़ी हुई, हंसी और लोप होगई, फिर शब्द सुनाई दिया "मै हू"—देखा कि सेब बेचने वाली और बालक हंसते २ सामने आये और अन्तर ध्यान हो गये।

चन्द्रभान उठकर बैठगया, उसे विश्वास होगया कि कृष्णचन्द्र के दर्शन होगये, क्योंकि प्राणीमात्र पर दया करना हीं परमात्मा का दर्शन करना है॥

—०—

और वेहरी है, उन्हें धन से क्या प्रयोजन है, वह धन मे क्या लाभ उठासक्ते है'।

पिता—'अच्छा, सुमन्त से पूछ लू'।

पिता के पूछने पर सुमन्त ने प्रसन्नतापूर्वक यही कहा कि अजमेर को उसका यथोचित भाग दे देना चाहिये।

अजमेर तीसरा भाग लेकर राजा के पास चला गया।

तारा ने भी व्यापार में अनन्त धन संचय करके एक प्रतिष्ठित पुरुष की पुत्री से विवाह किया। परन्तु धन की लालसा फिर भी बनी रही, अतएव वह भी पिता के पास आकर तीसरा भाग म

पिता—'मै तुम्हें कौड़ी भी देना
विचारो तो कि तुमने सै
इतना धन इकट्ठा किया।
तिन पर हमारी पालन
उठाता है, उसका पेट
अनुचित है'।

उसकी आमदनी का कुछ ठिकाना न था, परन्तु फिर भी कुछ न बचता था।

अजमेर एक समय इलाके पर पहुंचकर किसानों से बटाई मांगने लगा। किसान बोले कि 'महाराज, हमारे पास पशु है नहल, सुहागा है नदरांती, बटाई कहां से दें, पहले यह सामग्री एकत्र कर दो, फिर आपको इलाके से बहुत अच्छी प्राप्ति होने लगेगी-यह सुनकर अजमेर अपने पिता के पास पहुंचा।

अजमेर-' पिता जी इतना धनी होने पर भी आपने मेरी कुछ सहायता नहीं की, मैने सेना में काम करके राजा को प्रसन्न कर एक इलाका मोल लिया है, उसके प्रबन्ध कारण धन की अपेक्षा है, मैं तीसरे भाग का अधिकारी हूं, इसलिये मेरा भाग मुझे दे दीजिये कि अपना इलाका ठीक करूं'।

पिता-' भला मैं पूछता हूं कि तुमने नौकरी पर रहते हुए कभी कुछ घर भी भेजा, सब काम सुमन्त करता है, मेरे ध्यान में तुम्हें तीसरा भाग देना सुमन्त और मनोरमा के साथ अन्याय करना है'।

अजमेर-' सुमन्त महान मूर्ख है, मनोरमा गूंगी

और बहरी है, उन्हें धन से क्या प्रयोजन है, वह धन से क्या लाभ उठासक्ते हैं'।

पिता—'अच्छा, सुमन्त से पूछ लूं'।

पिता के पुछने पर सुमन्त ने प्रसन्नतापूर्वक यही कहा कि अजमेर को उसका यथोचित भाग दे देना चाहिये।

अजमेर तीसरा भाग लेकर राजा के पास चला गया।

तारा ने भी व्यापार में अनन्त धन संचय करके एक प्रतिष्ठित पुरुष की पुत्री से विवाह किया। परन्तु धन की लालसा फिर भी बनी रही, अतएव वह भी पिता के पास आकर तीसरा भाग मांगने लगा।

पिता—'मैं तुम्हें कौड़ी भी देना नहीं चाहता। विचारो तो कि तुमने सौदागरी की कोठी खोलकर इतना धन इकट्ठा किया। कभी पिता को भी पूछा। तिस पर हमारी पालन पोषण में सुमन्त कितना कष्ट उठाता है, उसका पेट काट कर तुम्हें दे देना अति अनुचित है'।

तारा–'मूर्ख सुमन्त को धन करना ही क्या है, धन की आवश्यकता तो बुद्धिमानों को होती है, क्या आपके विचार में सुमन्त जैसे मूर्ख को कोई पुरुष भी अपनी कन्या विवाह देगा, कदापि नहीं, मनोरमा का तो झगडा ही क्या है वह पराया धन है तिस पर वह गूगी और वहरी है। अच्छा मै सुमंत से पूछ देखता हू कि वह क्या कहता है'।

तारा के पूछने पर सुमन्त ने तीसरा भाग देना तुरन्त स्वीकार कर लिया, और तारा भी अपना भाग लेकर चम्पत हुआ, सुमन्त के पास साधारण सामग्री रहगई वह खेती का काम करके माता पिता की सेवा में तत्पर रहा।

२.

यह वार्ता देखकर अधर्म्म वड़ा दुःखी हुआ कि भाइयों ने प्रीति सहित धन वाट लिया, जूती पैजार कुछ भी न हुई, अतएव तीन भूतों को बुलाकर कहने लगा। अधर्म्म–'देखो, अजपेर, तारा, सुमन्त तीन भ्राता हैं, घन वांटती समय उन्हें आपस में झगडा

करना उचित था, परन्तु मूर्ख सुमन्त ने सब कार्य्य विगाड डाला, उसी की मूढता से तीनों भाई आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे है। तुम जाओ और एक एक के पीछे पडकर ऐसा भारत मचाओ कि सब के सब रसातल प्रवेश हों, देखना, बड़ी चतुराई से काम करना'।

तीनों भूत—'अजी देखो तो सही कैसे जजाल में फंसाते है जो तीनों आपस में लड लड़कर प्राण त्याग न करदें तो हमारा नाम अधर्म्म राज के भूत ही नहीं'।

अधर्म्म—'वाह, वाह। शावाश, जाओ'।

तीनों भूत चलकर एक झील के किनारे बैठ गये और यह निश्चय किया कि कौन २ किस किस भाई के पीछे लगे, और साथ ही यह नियम बाध दिया कि जिस भूत का कार्य्य पहले समाप्त होजाय वह तुरन्त दूसरे भूत की सहायता करे—

कुछ दिन पीछे वह तीनों भूत फिर उसी झील पर एकत्र हुए और उनमें इस प्रकार वार्तालाप होने लगा।

पहला—' भाई साहिब, मेरा काम तो बनगया, अजमेर भाग कर पिता की शरण लेने के सिवाय अब ओर कुछ नहीं बनासक्ता '।

दूसरा—' बताओ तो, कि उसे किस प्रकार फांसा '।

पहला—' मने अजमेर में बड़ी वीरता उत्पन्न कर दी, वह एक दिन राजा से कहने लगा कि 'महाराज, यदि आप मुझे सेनापति की पदवी पर नियत करदें तो मैं आपको सारे जगत का चक्रवर्ती राजा बना दूं, राजा ने उसे तुरन्त सेनापति बनाकर आज्ञा दी कि भारतवर्ष के राजा को पराजय कर दो, बस फिर क्या था, लगी युद्ध की त्यारिया होने, युद्धक्षेत्र में उपस्थित होने से एक रात पहले मैने अजमेर का सारा बारूद गीला कर दिया, उधर भारतवर्ष के राजा के लिये घास के अनगिनत सिपाही बना दिये। दोनों सेनायें सन्मुख होने पर अजमेर के सिपाहियों ने जब घास के बने हुए अनन्त योधाओं को देखा तो उनके छक्के छूट गये, अजमेर ने गोले फैंकने का हुक्म दिया, बारूद गीली हो ही चुकी थी, तोपें आग कहां से

देतीं, परिणाम यह हुआ कि अजमेर की सेना को भागना ही पड़ा। राजा ने क्रोध करके उसका बड़ा अपमान किया, उसका इलाका छिनगया, इस समय वह बदीखाने में कैद है, बस केवल यह काम शेष रह गया है कि उसे बन्दीखाने से निकाल कर उसके पिता के घर पहुंचा दूं, 'फिर छुट्टी है, जो चाहे उसकी सहायता के लिये प्रस्तुत हूं'।

दूसरा—'मेरा कार्य्य भी सिद्ध होगया है, तुम्हारी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं, देखिये, तारा को मैंने पहले तो मोटा करके आलसी बनाया, फिर तृष्णा का पंचामृत पिलाया जिससे वह संसार भर का माल मोल ले लेकर कोठी भरने लगा, जब कोठी भरगई और तारा ऋण के बोझ से दबगया तो मैंने सारा माल सत्यानाश कर डाला, अब ऋण चुकाने को उसके पास एक पैसा नहीं, भाग कर पिता के पास जाया ही चाहता है'।

तीसरा—'भाई, हमारा हाल तो बड़ा पतला है, पहले मैंने सुमन्त के पीने के पानी में पेट में दर्द उत्पन्न करने वाली बूटी मिलाई, फिर खेत में जा। र

धरती को ऐसा कठोर कर दिया कि उस पर हल न चलसके। मैं समझा था कि पीड़ा के कारण वह खेत वाहने न आयेगा, परन्तु भाई साहिब वह तो बड़ा ही मूढ़ है, आया और हल चलाने लगा, हाय हाय करता जाता था, परन्तु हल हाथ से न छोड़ता था, मैंने हल तोड़ दिया, वह घर जाकर दूसरा ले आया, मैंने धरती में घुसकर हल की अनी पकड़ ली, उसने ऐसा धक्का मारा कि मेरे हाथ कटते २ बचे, उस ने केवल एक टुकड़े के सिवाय बाकी सारा खेत वाह लिया है, यदि तुम मेरी सहायता न करोगे तो सारा खेल बिगड़ जायगा, क्योंकि यदि वह इस प्रकार खेतों को वाहता और बीजता रहा तो उस के भाई भूखे नहीं मर सक्के, फिर वैर भाव किस भांति उत्पन्न हो सक्ता है वह सुख पूर्वक उन की पालन पोषण करता रहेगा। चलो छुट्टी हुई'।

पहला—क्या हुआ, कुछ चिन्ता नहीं, देखा जायगा, घबराओ नहीं, मैं कल अवश्य तुम्हारे पास आऊंगा।

—०—

३

सुमन्त हल चला रहा था, अचानक उस का पैर एक झाडी में फस गया, उसे अचम्भा हुआ कि खेत में तो कोई झाड़ी न थी, यह कहां से आई, वास्तव में भूत ने झाड़ी बन कर सुमन्त की टाग पकड़ ली थी।

सुमन्त ने हाथ डाल कर झाडी को जड से उखाड़ डाला, देखा तो उस में काले रंग का एक भूत बैठा हुआ है।

सुमन्त–(गला दबा कर) 'बोलो, दबाऊ गला'।

भूत–'मुझे छोड़ दो, जो आज्ञा दो पूरा करने को प्रस्तुत हूं' —

सुमन्मत–'तुम क्या कर सक्ते हो'।

भूत–' सब कुछ '।

सुमन्त 'मेरे पेट में दरद हो रहा है उसे अच्छा कर दो'।

भूत–' बहुत अच्छा '।

भूत ने धरती में से तीन बूटिया लाकर एक बूटी सुमन्त को खिलादी, दरद बन्द हो गया, और दूसरी दो बूटिया सुमन्त को देकर भूत कहने लगा

कि जिस को एक बूटी खिला दोगे उसके सब रोग तत्काल दूर हो जायेंगे।

भूत—'अब जाऊं—आज्ञा है'।

सुमन्त—'हां जाओ, परमात्मा तुम्हारा भला करे।

परमात्मा का नाम सुनते ही भूत रसातल में प्रवेश होगया, केवल एक छेद शेष रह गया।

सुमन्त ने दूसरी दो बूटियां पगड़ी के छड़ बांध लीं, और घर चला आया, देखा कि भाई अजमेर और उसकी स्त्री आई हुई है, वह बड़ा प्रसन्न हुआ।

अजमेर—'भाई सुमन्त, जब तक मुझे कोई नौकरी न मिले, तुम हम दोनों को यहां रख सक्ते हो'।

सुमन्त—'क्यों नहीं, आपका घर है। आप आनन्द से रहिये'।

भोजन करते समय अजमेर की सभ्य स्त्री अजमेर से बोली कि सुमन्त के शरीर से मुझे दुर्गंध आती है इसे बाहर भेजदो।

अजमेर—'सुमन्त मेरी स्त्री कहती है कि तुम्हारे शरीर से दुर्गंध आती है पास बैठा नहीं जाता, तुम बाहर जाकर भोजन कर लो—'।

सुमन्त—'बहुत अच्छा, तुम्हें कष्ट न हो'।

४

अगले दिन अजमेर वाला भूत खेत में आकर सुमन्त वाले भूत का खोज लगाने लगा, कहीं पता नहीं मिला, खेत के एक कोने पर उसे एक छेद दिखाई दिया।

भूत जान गया कि साथी काम आया, और खेत जुतचुका, क्या हुआ चरांद में चल कर इस मूर्ख को दुख देता हूं, अतएव सुमन्त के चरांद में पहुंच कर उस ने इतना पानी छोड़ा कि सारा घास उस में डूब गया।

इतने में सुमन्त वहां आकर द्राती से घास काटने लगा, द्राती का मुंह मुडगया, घास किसी प्रकार न कटता था, सुमन्त ने सोचा कि यहां वृथा समय गवाने से क्या लाभ होगा, पहले द्राती तेज करनी चाहिये रहा काम यह तो मेरा धर्म है, एक सप्ताह क्यों न लग जाय, मैं घास काटे बिना यहां से चला जाऊं तो मेरा नाम सुमन्त नहीं।

सुमंत घर जा कर द्राती ठीक कर लाया, भूत ने द्राती को पकड़ने का साहस किया परन्तु पकड

नहीं सका, क्योंकि सुमन्त लगातार घास काटे जाता था. जब केवल नमान का एक छोटासा टुकड़ा शेष रह गया तो भूत भाग कर उसमें जा रहा।

सुमन्त कब रुकने वाला था, वह वहा पहुंच कर घास काटने लगा, भूत वहां से, भागा, भागते समय उस की पूछ कट गई।

भूत ने विचारा कि चलो-जवी के खेतों में चले देखें जवी किस प्रकार काटता है, वहां जाकर देखा तो जवी कटी पड़ी है।

भूत–(स्वागत) 'यह मूर्ख बड़ाही चांडाल है, दिन निकलने नहीं दिया रात रात में सारी जवी काट डाली, यह दुष्ट तो रात को भी काम में लगा रहता है, अच्छा अब खलयान में चल कर इस का भूसा मढाता हूं'।

भूत भाग कर चरी में छिप गया, सुमन्त गाडी लेकर चरी घर ले जाने के कारण खलयान में पहुंचा एक एक पूली उठा कर गाड़ी में रखने लगा, कि एक पूली में से भूत निकल पडा।

सुमन्त–' अरे दुष्ट, तू फिर-आगया '।

भूत–मै दूसरा हू, पहला मेरा भाई था ।

सुमन्त–' कोई हो, अब जाने न पाओगे ' ।

भूत–' कृपा करके मुझे छोड दीजिये, जो आप आज्ञा दें वही करने को त्यार हू ' ।

सुमन्त–'तुम क्या क्या कर सक्ते हो ' ।

भूत–' मै भुसे के सिपाही बना सक्ता हू ' ।

सुमन्त–' सिपाही क्या काम देते है ' ।

भूत–'तुम उन से जो चाहो सो काम करा सक्ते हो'

सुमन्त–'वह गाना गा सक्ते है ' ।

भूत–' क्यों नहीं ' ।

सुमन्त–' अच्छा बनाओ ' ।

भूत–'तुम चरी का डाल लेकर यह मन्त्र पढ़ो "हे डाल मेरे सेवक मेरी आज्ञा से सिपाही बन जा" और फिर डाल को धरती पर मारो सिपाही बन जायगा ' ।

सुमन्त ने वैसा ही किया, डालों के सिपाही बन ने लगे, यहा तक कि पूरी पलटन बन गई और मारू बाजा बजने लगा ।

सुमन्त–(हंस कर), 'वाह भई वाह, यह तो खूब

तमाशा है, इसे देख कर बालक बहुत प्रसन्न होंगे'।

भूत—'आज्ञा है, अब जाऊं'।

सुमन्त—'नहीं, अभी नहीं, मुझे इन को फिर कर डाल बना देने का मंत्र भी सिखा दो, नहीं तो यह हमारा सारा अनाज ही चट्टम कर जायेंगे'।

भूत—बस यह मन्त्र पढ़ो "हे सिपाही मेरे सेवक मेरी आज्ञा से फिर डाल बन जाओ, यह सब डाल बन जायेंगे'।

सुमन्त ने मन्त्र पढ़ा, सब के सब फिर डाल बन गये।

भूत—'अब जाऊं, आज्ञा है'।

सुमन्त—'हां जाओ, भगवान तुम पर दया करें'

भगवान का नाम सुनते ही भूत धरती में समा गया, पहले की भांति एक छेद शेष रह गया।

सुमन्त जब घर लौटा तो उसने देखा कि स्त्री सहित मंझला भाई तारा आया हुआ है, तारा, 'भा सुमन्त, लहनदारों के डर से भाग कर तुम्हारे पा आये हैं, जब तक कोई कामधन्दा प्रारम्भ किया जा यहां ठहर सक्ते हैं कि नहीं'।

सुमन्त—' क्यों नहीं, घर किस का और मैं किस का, आप बडे आनन्द से निवास कीजिये'।

भोजन परसे जाने पर तारा की स्त्री ने तारा को कहा कि मैं गंवार के पास बैठ कर भोजन नहीं कर सक्ती।

तारा—'भाई सुमन्त, मेरी स्त्री तुम से ग्लानि करती है, बाहर जाकर भोजन करलो'।

सुमन्त—'क्या हानि है, आपका चित्त प्रसन्न चाहिये'

५

अगले दिन तारा वाला भूत सुमन्त को दुःख देने के वास्ते खेत में पहुच कर साथियों को ढूंढने लगा, किसी का पता न चला, खोजते २ एक छेद तो खेत के कोने में मिला, दूसरा खल्यान में, उसे मालूम होगया कि दोनों के दोनों यम लोक को जा पहुंचे, अच्छा, पुरुषार्थ किये बिना तो मैं भी नहीं लौटता।

अतएव वह सुमंत का खोज लगाने लगा, सुमंत उस समय मकान बनाने के वास्ते जंगल में वृक्ष काट

रहा था, क्योंकि दोनों भाइयों के आ जाने पर कुटुम्ब वहुत होगया था, भाई यह चाहते थे कि अलग २ मकान में रहें, इस कारण मकान वनाना आवश्यक होगया था।

भूत वृक्ष पर चढ़ कर शाखाओं में वैठ सुमंत के काम में विघ्न डालने लगा, सुमंत टलने वाला कब था, सन्ध्या होते २ उसने कई वृक्ष काट डाले, अन्त में उस ने उस वृक्ष को भी काट दिया जिस पर भूत चढ़ा वैठा था, टहनिया काटते समय भूत उसके हाथ में आ गया।

सुमन्त–'है, तुम फिर आगये'।

भूत–'नही नही–मै तीसरा हूं–पहले दोनों मेरे भाई थे।

सुमन्त–' कुछ ही हो, अव मै नही छोड़ने का '

भूत–' मै सव काम करने पर प्रस्तुत हूं, कृपा करके मुझे जान से न मारिये–'

सुमन्त–'तुम क्या कर सक्ते हो'।

भूत–' मै वृक्ष के पत्तों से सोना वना सक्ता हूं'।

सुमन्त–'अच्छा वनाओ '।

भूत ने वृक्ष के सूखे पत्र लेकर हाथ से मले, और मंत्र पढ कर सोना बना दिया, सुमन्त ने मन्त्र सीख लिया और सोना देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ।

सुमन्त–'भाई भूत, इस का रंग तो बड़ा सुन्दर है, बालकों के खिलोने इस के अच्छे बन सक्ते है'।

भूत–'अब आज्ञा है जाऊं'।

सुमन्त्र–'जाओ, परमेश्वर तुम पर अनुग्रह करें'।

परमेश्वर का नाम सुनते ही यह भूत भी भूमि में समा गया, केवल छेद ही छेद बाकी रह गया।

६

घर बना कर तीनों भाई सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगे, जन्म अष्टमी के त्यौहार पर सुमत ने भाइयों को भोजनार्थ निमन्त्रण भेजा, उन्होंने उत्तर दिया कि हम गवारों के साथ प्रीति भोजन करना स्वीकार नहीं कर सक्ते।

सुमन्त ने इस पर कुछ बुरा नही माना, गाव के स्त्री पुरुष, बालक और बालिकाओं को एकत्र करके भोजन करना आरम्भ किया।

भोजन करने के उपरान्त सुमन्त बोला–'क्यों भई मित्रो, एक तमाशा दिखलाऊ'।

सब–'हां, दिखलाइये'।

सुमंत ने सूखे पत्ते लेकर सोने का एक टोकरा भर दिया, और लोगों की ओर फेंकने लगा, इन गंवारों ने सोना कभी काहे को देखा था. उस का रंग देख कर अचरज करने लगे।

तदुउपरांत सुमन्त ने स्त्रियों से कहा कि कुछ गाओ, स्त्रियां गायन करने लगीं।

सुमन्त–'हूं, तुम्हें गाना नहीं आता'।

स्त्रियां–'हमें तो ऐसा ही आता है, और अच्छा सुनना हो तो किसी और को बुलालें'।

सुमन्त ने तुरन्त ही भूसे के सिपाही बना कर पलटन खड़ी करदी और बैंड बजने लगा, गंवार लोगों को बड़ा ही अचम्भा हुआ।

अति काल हो जाने पर सुमन्त ने सिपाहियों को फिर भूसा बना दिया, और सब लोग अपने २ घर चले गये।

७.

प्रातः काल अजमेर ने यह वार्ता सुनी, वह हांपता २ सुमन्त के पास आया।

अजमेर—'भाई सुमन्त वह सिपाही तुम ने किस रीति से बनाये थे'—

सुमन्त—'क्यों आप को क्या प्रयोजन है'।

अजमेर—'प्रयोजन की एकही कही, सिपाहियों की सहायता से तो हम राज्य प्राप्त कर सक्ते है'।

सुमन्त—'यह बात है, तुम ने पहले क्यों नहीं कहा, चलिये, खलयान में चलिये, वहां चल कर जितने कहो उतने सिपाही बना देता हूं परन्तु शरत यह है कि उन्हें तुरन्त ही यहा से बाहर ले जाना, नही तो वह गात्र का गात्र चट्टम कर जायेंगे।

अतएव खलयान में जा कर उसने कई पलटनें बनादी और पूछा, बस कि और'।

अजमेर—(प्रसन्न होकर) 'बस, बहुत है, मै तुम्हारा अतिशय धन्यवाद करता हू'।

सुमन्त—'धन्यवाद की कौनसी बात है, अबके वर्ष भूसा बहुत हुआ है, यदि कभी टोटा पडजाय तो फिर आजाना, फिर सिपाही बना दूंगा'।

अब अजमेर धरती पर पाव नहीं रखता था, सेना लेकर उसने तुरन्त युद्ध करने के वास्ते प्रस्थान कर दिया।

अजमेर के जाने की देर थी कि तारा भी आ पहुंचा।

तारा—'भाई साहिब मैंने सुना है तुम सोना वना लेते हो, हाय हाय ! यदि थोड़ासा सोना मुझे मिल जाय तो मै सारे संसार का धन एकत्र करलूं'।

सुमंत—'हां जानता हूं, तुमने पहले क्यों नहीं कहा, बतलाओ कितना सोना वना दूं'।

तारा—'तीन टोकरे वनादो'।

सुमन्तने तीन टोकरे सोना वना दिया।

तारा—'आपने बड़ी अनुग्रह की'।

सुमन्त—अनुग्रह की कौन बात है, जंगल में पत्ते बहुत है-यदि कमी हो जाय तो फिर आजाना जितना सोना मांगोगे उतना ही बना दूंगा।

सोना लेकर तारा व्यापार करने चल दिया।

अजमेर ने सेना की सहायता से एक बड़ा भारी राज्य विजय कर लिया, उधर तारा के वैभवका भी वारापार न रहा, परन्तु सुख कहां, एक दिन मिल कर वह यूं वार्तालाप करने लगे।

अजमेर—'भाई तारा, सेना के द्वारा राज्य प्राप्त

कर सुख पूर्वक काल व्यतीत होता है, परन्तु इन सिपाहियों का पेट कहा से भरू, रुपये की त्रुटी है, सदैव यही चिंता बनी रहती है'।

तारा–'तो क्या आप समझते है कि मैं चिन्ता रहित हू अनन्त लक्ष्मी उपस्थित होने पर भी मुझे नित्य यह क्लेश बना रहता है कि धन की रखवारी को सिपाही नहीं मिलते'।

अजमेर–'मेरे ध्यान में तो इस का उत्तम उपाय यही है कि सुमन्त मूर्ख के पास चल कर मै तुम्हारे वास्ते थोडे से सिपाही बनवा दू, और तुम मेरे लिये थोड़ासा सोना बनवा दो।

तारा–'हा ठीक है चलिये'

अतएव दोनों भाई सुमन्त के पास आन पहुंचे।

अजमेर–भाई सुमन्त, मेरी सेना में कुछ न्यूनता है, कुछ सिपाही और बनादो'।

सुमन्त–'नहीं, अब मैं और सिपाही नहीं बनाता'।

अजमेर–'पर तुम ने वचन जो दिया था, नहीं मै आता ही क्यों कारण क्या है क्यों नहीं बनाते'।

सुमन्त–' कारण यह, कि तुम्हारे सिपाहियों ने एक मनुष्य मार डाला, कल जब मैं अपना खेत जोत रहा था, तो पास से एक अरथी लखी, मैंने पूछा कौन मर गया, एक स्त्री ने कहा कि अजमेर के सिपाहियों ने युद्ध में मेरे पति को मारडाला, मै तो आज तक केवल यह समझता था कि सिपाही बैंड बजाया करते है परन्तु वह तो मनुष्यों का घात करने लगें, ऐसे सिपाही बना देने से तो संसार का नाश होजायगा'

तारा–अच्छा यदि सिपाही नहीं बनाते, तो मेरे लिये सोना तो थोड़ासा और बनादो, तुम ने प्रतिज्ञा की थी कि त्रुटी हो जाने पर फिर बना दूंगा'।

सुमन्त–' हां प्रतिज्ञा निस्सन्देह की थी, पर अब मै सोना भी बनाने के लिये त्यार नहीं '।

तारा–'यह क्यों'।

सुमन्त–'यह इस लिये कि तुम्हारे सोने ने बसत की लड़की से उसकी गाय छीनली'।

तारा—'वह किस प्रकार'।

सुमन्त—'वसन्त की पुत्री के पास एक गाय थी, उसके बालक दूध पी कर मग्न रहा करते थे, कल जब

बालक मेरे पास दूध मांगने आये तो मैने पूछा कि तुम्हारी गाय कहां गई तो कहने लगे कि तारा का एक सेवक आकर तीन टुकड़े सोने के दे कर हमारी गाय लेगया, मै तो यह जानता था कि सोना बनवा बनवा कर तुम बालकों को बहलाया करोगे, परन्तु तुम ने तो उन की गायही छीनली, बस सोना अब नहीं बन सक्ता'।

दोनों भाई निराश हो कर लौट पड़े और राह में यह मन समझौती करली कि अजमेर तारा को कुछ सिपाही दे दे, और तारा अजमेर को कुछ सोना—

थोड़ी देर पीछे धन के प्रभाव से तारा ने भी एक राज्य मोल ले लिया, और दोनों भाई राजा बन कर आनन्द सहित काल व्यतीत करने लगे।

८.

सुमन्त, गूंगी बहन के सहित खेती का काम करते हुये अपने माता पिता की सेवा में तत्पर था, एक दिन उस की कुतिया बीमार होगई, उसने तत्काल पहले भूत की दी हुई बूटी उसे खिलादी, वह निरोग्य हो कर खेलने कूदने लगी यह वार्ता देख

कर माता पिता ने इस का ब्योरा पूछा, सुमन्त ने कहा कि मुझे एक भूत ने दो बूटियां दी थीं, वह सब प्रकार के रोगों को निवारण कर सक्ती है, अतएव उन में से एक बूटी मैंने इस कुतिया को खिलादी।

उसी समय दैव गति से ऐसा संयोग हुआ कि वहां के राजा की कन्या रोग ग्रस्त थी, राजा ने यह डौंडी पिटवादी थी कि जो कोई पुरुष इस कन्या को निरोग्य कर देगा, उसके साथ इस का विवाह कर दिया जायगा, माता पिता ने सुमन्त से कहा कि यह तो बड़ा अच्छा अवसर है, तुम्हारे पास एक बूटी बची है। जा कर राजा की कन्या की चिकित्सा करो, आयू पर्य्यंत सुख भोगोगे, अहोभाग्य कि हम को राज कन्या प्राप्त हो।

सुमन्त जाने पर राज़ी होगया, बाहर आने पर देखा कि द्वार पर एक कंगाल बुढ़िया खड़ी है।

बुढ़िया—'सुमन्त मैंने सुना है कि तुम रोगियों का रोग दूर कर सक्ते हो, मैं रोग से ग्रस्त होकर चिर-काल से कष्ट भोग रही हूं, रोगी होने के कारण उदर पूर्णा करनी भी दुर्घट हो गई है, कृपा करके मेरा रोग दूर कर दो।

सुमन्त तो दया का भंडार था, बूटी निकाल कर तुरत बुढ़िया को खिलादी, वह चगी होकर प्रशंसा और धन्यवाद करती हुई घरको चली गई।

माता पिता यह हाल सुन कर बडे दुखी हुए और कहने लगे कि सुमन्त तुम निस्सन्देह बड़े मूर्ख हो, कहा राज कन्या और कहां यह कंगाल बुढ़िया, तुम ने विचार तो करना था, भला इस बुढिया को चगा करने से क्या लाभ हुआ।

सुमन्त—'बुढिया और राज कन्या में मै कुछ अन्तर नहीं समझता, राज कन्या के रोग दूर करने को भी मुझे वडी चिन्ता है, अच्छा जाता हूं'।

माता पिता—'बूटी तो है ही नहीं, जा कर क्या करोगे'

सुमन्त—कुछ चिन्ता नहीं, देखो तो सही क्या होता है।

समदृष्टता का प्रभाव विदित है सुमन्त के राज महल पर पहुचते ही राज कन्या निरोग्य हो गई, राजा ने अति प्रसन्न होकर उसका विवाह सुमन्त के साथ कर दिया।

दैवयोग से कुछ काल पीछे राजा का देहान्त होगया, पुत्र न होने के कारण वहां का राज्य सुमन्त को मिल गया।

अब तीनों भाई राजपदवी पर पहुंचगये।

९.

अजमेर का प्रभाव जगत विदित था, उसने भूसे के सिपाहियों से सच मुच के सिपाही बना लिये, राज्य भर में यह हुक्म जारी कर दिया कि दस घर पीछे एक मनुष्य सेना में भरती किया जाय, और कवाईद मेड कराकर सेना को अस्त्र शस्त्र विद्या में ऐसा प्रवीण कर दिया कि जब कोई शत्रु सामना करता, सिपाही तुरन्त उसका विध्वंस कर देता, सारे राजा उसके भय से कांपने लगे, वह अखण्ड राज करने लगा।

तारा बड़ा बुद्धिमान था, उस ने धन संचय करने के निमित्त मनुष्यों, घोड़ों, गाड़ियों, जूतों, जुराबों वस्त्रों, तात्पर्य यह कि जहां तक हो सका सब व्यवहारक पदार्थों पर कर बैठा दिया, धन रखने को

्रयोग से कुछ काल पीछे राजा का देहान्त
, पुत्र न होने के कारण वहां का राज्य सुमन्त
ल गया ।
ात्र तीनों भाई राजपदवी पर पहुंचगये ।

९.

्रमेर का प्रभाव जगत विदित था, उसने भूसे
हियों से सच मुच के सिपाही बना लिये,
में यह हुक्म जारी कर दिया कि दस घर
मनुष्य सेना में भरती किया जाय, और
ड कराकर सेना को अस्त्र शस्त्र विद्या में
कर दिया कि जब कोई शत्रु सामना
वह तुरन्त उसका विध्वंस कर देता, सारे
भय से कांपने लगे, वह अखण्ड राज

दैवयोग से कुछ काल पीछे राजा का देहान्त होगया, पुत्र न होने के कारण वहा का राज्य सुमन्त को मिल गया ।

अब तीनों भाई राजपदवी पर पहुंचगये ।

९.

अजमेर का प्रभाव जगत विदितथा, उसने भूसे के सिपाहियों से सच मुच के सिपाही बना लिये, राज्य भर में यह हुक्म जारी कर दिया कि दस घर पीछे एक मनुष्य सेना में भरती किया जाय, और ...ईद मेड कराकर सेना को अस्त्र शस्त्र विद्या में प्रवीण कर दिया कि जब कोई शत्रु सामना ... तो वह तुरन्त उसका विध्वंस कर देता, सारे उसके भय से कांपने लगे, वह अखण्ड राज लगा ।

तारा बडा बुद्धिमान था, उस ने धन संचय करने ...च मनुष्यों, घोड़ों, गाड़ियों, जूतों, जुराबों, तात्पर्य यह कि जहां तक हो सका सब व्यव... पर कर बैठा दिया, धन रखने को

लोहे की सलाखों वाले पक्के खज़ाने बना दिये, और चोरी चकारी लूट मार, धन सम्बन्धी झगडे बंद करने के निमित्त अनगिनत कानून जारी कर दिये, संसार में रुपया ही सब कुछ है, रुपया की भूख में सब लोग आकर उस की सेवा करने पर त्यार होगये।

अब सुपत मूर्ख की करतूत सुनिये, ससुर का क्रिया कर्म्म करके राजसी रत्न जटित वस्त्र तो उतार कर सन्दूकों में बन्द कर अलग धर दिये, मोटे सोटे कपड़े पहन कर किसानों की भांति निज स्वभावानुसार खेती का काम करने लगा।

सुपन्त-(स्वागत)-'यह तो अच्छा राज्य है-मेरा इस प्रकार जी नहीं लगता, बैठे २ जी उकता गया, नींद और भूख दोनों जाती रहीं-कुछ काम अवश्य करना चाहिये'।

यह विचार कर उस ने अपनी गूंगी बहन और माता पिता को अपने पास बुला लिया, और ठीक पहले की भांति खेती का काम करना आरम्भ कर दिया।

मंत्री-' आप तो राजा हैं, आप यह क्या काम करते हैं'।

दैवयोग से कुछ काल पीछे राजा का देहान्त होगया, पुत्र न होने के कारण वहां का राज्य सुमन्त को मिल गया।

अब तीनों भाई राजपदवी पर पहुंचगये।

९.

अजमेर का प्रभाव जगत विदित था, उसने भूसे के सिपाहियों से सच मुच के सिपाही बना लिये, राज्य भर में यह हुक्म जारी कर दिया कि दस घर पीछे एक मनुष्य सेना में भरती किया जाय, और कवाइद परेड कराकर सेना को अस्त्र शस्त्र विद्या में ऐसा प्रवीण कर दिया कि जब कोई शत्रु सामना करता, तो वह तुरन्त उसका विध्वंस कर देता, सारे राजा उसके भय से कांपने लगे, वह अखण्ड राज करने लगा।

तारा बड़ा बुद्धिमान था, उस ने धन संचय करने के निमित्त मनुष्यों, घोड़ों, गाड़ियों, जूतों, जुराबों वस्त्रों, तात्पर्य यह कि जहां तक हो सका सब व्यवहारक पदार्थों पर कर बैठा दिया, धन रखने को

लोहे की सलाखों वाले पक्के खजाने वना दिये, और चोरी चकारी लूट मार, धन सम्बन्धी झगड़े वंद करने के निमित्त अनगिनत कानून जारी कर दिये, संसार में रुपया ही सब कुछ है, रुपया की भूख में सब लोग आकर उस की सेवा करने पर त्यार होगये।

अब सुमत मूर्ख की करतूत सुनिये, ससुर का क्रिया कर्म्म करके राजसी रत्न जटित वस्त्र तो उतार कर सन्दूकों में बन्द कर अलग धर दिये, मोटे सोटे कपड़े पहन कर किसानों की भांति निज स्वभावानुसार खेती का काम करने लगा।

सुमन्त–(स्वागत)–'यह तो अच्छा राज्य है–मेरा इस प्रकार जी नहीं लगता, बैठे २ जी उकता गया, नींद और भूख दोनों जाती रहीं–कुछ काम अवश्य करना चाहिये'।

यह विचार कर उस ने अपनी गूंगी बहन और माता पिता को अपने पास बुला लिया, और ठीक पहले की भांति खेती का काम करना आरम्भ कर दिया।

मंत्री–' आप तो राजा हैं, आप यह क्या काम करते हैं'।

सुमंत–'तो क्या मैं भूखा मरजाऊं, मुझे तो काम किये बिना भूख ही नहीं लगती, करूं तो क्या करू'।

दूसरा मन्त्री–(सामने आकर) 'महाराज, राज्य का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय, नौकरों को नौकरी कहां से दें, रुपया तो एक नहीं'।

सुमन्त–'यदि रुपया नहीं, तो नौकरी मत दो'।

मंत्री–'नौकरी लिये बिना काम कौन करेगा'।

सुमन्त–'काम कैसा, न करने दो, करने को खेतों में क्या काम थोड़ा है, खाद संभालना, सुसमय पर खेती करना इत्यादि यह सब काम है कि और कुछ'।

इतने में एक मुकद्दमें वाले सामने आये।

किसान–'महाराज इस ने मेरे रुपये चुरा लिये'।

सुमन्त–'तो फिर क्या हुआ, इस में अपराध क्या बस स्पष्ट विदित है कि इस को अपेक्षा थी, और तुम्हारे पास वाघू पड़े थे'।

सब लोग जान गये कि सुमन्त महा मूर्ख है एक दिन रानी बोली।

रानी–'प्राणनाथ, सब लोग यही कहते हैं कि आप मूर्ख हैं'।

सुमन्त–'तो इस में हानि ही क्या है'।

रानी ने विचारा कि धर्म शास्त्र की यही आज्ञा है कि स्त्री का परमेश्वर पति है, जिस में वह प्रसन्न रहे वही काम करना धर्म्म है, अतएव वह भी राजा सुमन्त के साथ खेती के काम में प्रवृत्ति होगई।

यह दशा देख कर बुद्धिमान पुरुष सब के सब अन्य देशों में चले गये, केवल मूर्ख ही मूर्ख यहा रह गये, इस राज्य में रुपया प्रचालित न था, राजा से ले कर रंक तक खेती का काम करते, आप खाते, दूसरों को खिला कर प्रसन्न होते थे।

१०.

इधर अधर्म्म राज बैठे बाट देख रहे है कि तीनों भाइयों का सर्वनाश करके भूत अब आते है अब आते हैं, परन्तु वहां आना किस ने था, अधर्म्म को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह क्या वार्ता है, अन्त में सोच सुचा कर स्वयं खोज लगाने के लिये चलने पर प्रस्तुत होगया।

सुमन्त के पुराणे गाव मे जाने पर ढूंढने से तीन छेद मिले, अधर्म्म को मालूम होगया कि तीनों भूत मारे गये, अच्छा चलें अब हम भाइयों को खोजें।

जा कर देखा तो तीनों भाई राजा बने बैठे हैं, फिर क्या था, जल भुन कर राख ही तो होगया, दांत पीस कर कहने लगा कि कच्चा न चबाजाऊं तो अधर्म्म नाम ही नहीं।

अब अधर्म्म करनेल का भेस बदल कर पहले अजमेर के पास पहुंचा, और हाथ जोड़ कर विनय की—'महाराज मैंने सुना है कि आप महा शूरवीर है, मै अस्त्र शस्त्र विद्या में अति निपुण हूं, इच्छा है कि आप की सेवा करके अपना गुण प्रकट करूं'।

अजमेर चितवनों से ताड़गया कि पुरुष चतुर और बुद्धिमान है, उसे झट सेनापति की पदवी पर नियत कर दिया।

नवीन सेनापति—'महाराज मेरे ध्यान में राज्य में बहुधा लोग ऐसे है जो कुछ कामनहीं करते, राज्य की स्थिरता सेना से ही होती है, इस लिये एक तो सब युवक पुरुषों को रङ्गरूट भरती करके सेना पहले की अपेक्षा पाच गुणी कर देनी चाहिये, दूसरे नये नमूने की बन्दूकें और तोपें बनाने के वास्ते राज्य-धानी में कारखाने खोलने आवश्यक हैं, मै एक फ़ायर

में सौ गोली चलाने वाली बन्दूक और घोड़े, मकान, पुल, इत्यादि नष्ट कर देने वाली तोप बना सक्ता हूं' ।

अजमेर ने प्रसन्नता पूर्वक इस शिक्षा को स्वीकार किया, और झट सारी राज्यधानी में एक आज्ञा पत्र जारी कर दिया कि सब लोग रंगरूट भरती किये जाएं, नये नमूने की तोपें और बन्दूकें बनाने के वास्ते जगह जगह कारखाने खोल दिये, युद्ध की सहकारी समस्त सामग्री उपस्थित होने पर पहले उस ने पड़ोसी राजा को पराजय किया, फिर भारत के राजा पर चढ़ाई का डंका बजा दिया ।

पर सौभाग्य से भारत के राजा ने अजमेर का सारा वृतान्त सुन रक्खा था, अजमेर ने तो पुरुषों को ही रंगरूट भरती किया था, उस ने स्त्रियों को भी सेना में भरती कर लिया, नये से नये नमूने की बन्दूकें और तोपें बना डाली, सेना अजमेर से चौगुणी करदी, और एक नवीन कल्पना यह की कि बम्ब के ऐसे गोले बनाये जो आकाश से छोड़े जायें, और धरती पर गिर कर फटते हुये शत्रु की सेना का नाश करदें ।

अजमेर को यह अभ्यास था कि पड़ौसी राजा की भांति छिन मे भारत के राजा को पराजय कर के उस का राज्य छीन लूगा, परन्तु यहां रंगतही कुछ ओर हुई, सेना अभी गोली की मारमें भी नहीं पहुची थी कि भारतीय राजा की सेना को स्त्रियोंने आकाश से बम्ब के गोले बरसा ने आरम्भ करदिये अजमेर की सारी सेना काई की भांति फट गई। आधी वहीं काम आई, आधी भयभीत हो कर भाग गई, अजमेर अकेला क्या कर सक्ता था भागते ही बनी, भारत के राजा ने उस के राज्य पर अपना अधिकार कर लिया।

अजमेर का सर्व नाश करके अरम्भ तारा के राज्य में पहुचा, सौदागर का भेष धारण करके वहां एक कोठी खोलदी और लगा रुपया लुटाने, जो पुरुष कोई माल बेचने आता, उसे चोगुने पच गुने दाम मिल जाते, शीघ्र ही वहां की प्रजा मालदार हो गई, तारा यह हाल देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा कि व्यापार बड़ी वस्तु है, इस सौदागर के आने से मेरा कोषधन से परिपूरित होगया, किसी बात की त्रुटी नहीं रही।

इस के उपरान्त तारा ने एक महल बनाना प्रारंभ किया, उसे विश्वास था कि रुपये के लालच से राज मजदूर मसाला सब कुछ सामग्री शीघ्र ही उपस्थित हो जायगी, कोई कठिनाई न होगी, परन्तु राजा का महल बनाने के वास्ते कोई न आया, अबर्म्भ सौदागर के पास रुपये की गिनती न थी, उस की अपेक्षा राजा अधिक नकदी और मोल नहीं दे सक्ता था, उसका महल न बन सका, राजा को साधारण मकान में ही रहना पड़ा।

इस के पीछे उस ने एक बाग़ लगाना आरम्भ किया, उस समय सौदागर ने तालाब खुदवाना शुरू कर दिया, सब लोग रुपया अधिक होने के कारण सौदागर के वश में थे, राजा का काम कोई न करता था, बाग़ भी बीच में ही रह गया।

शीत काल उपस्थित होने पर राजा ने उन्न वस्त्र आदि खरीदने का विचार किया, सारा संसार खोज-मारा, जहां पूछा यही उत्तर मिला कि सौदागर ने कोई वस्त्र नहीं छोड़ा सारे के सारे खरीद कर ले गया।

यहां तक कि रुपये के प्रभाव से अधर्म ने राजा के सब नौकर अपने पास खैंच लिये, राजा भूखा मरने लगा, क्रुद्ध होकर उसने सौदागर को अपनी राज्यधानी से निकाल दिया, अधर्म ने ठट्ठे पर जा कर डेरा जमाया, तारा को कुछ करते धरते नहीं बनती थी, उसे उपवास किये तीन दिन बीत चुके थे कि अजमेर आकर सन्मुख खड़ा होगया।

अजमेर—'भाई तारा मैं तो मरचुका, मेरी सेना राज्य पाट, सब नष्ट होगया, भारत वर्ष के राजा ने मेरी राज्यधानी पर अपना अधिकार करलिया, भाग कर तुम्हारे पास आया हूं मेरी कुछ सहायता कीजिये।

तारा—'सहायता की, एक ही कही यहां आप अपनी जान पर आ बनी है, उपवास किये तीन दिन हो चुके है, खाने को अन्न तक तो मिलता ही नहीं, तुम्हारी सहायता किस प्रकार करूं।

११.

अजमेर और तारा की यह दशा करके अधर्म फिर करनेल का भेस बदल कर सुमन्त के पास पहुंचा और निवेदन किया।

अधर्म—इसी कारण आप लोग मूर्ख है, अब मै आप को मस्तक द्वारा काम करना बतलाऊंगा, तब आप को विदित हो जायगा कि मस्तक द्वारा काम करना, हाथों द्वारा काम करने की अपेक्षा कहीं अधिक फल दायक है'।

सुमन्त—'ओहो, तो हम लोग निस्संदेह मूर्ख है'।

अधर्म—'मस्तक द्वारा काम करना सहज नहीं मुझे आप रसोई में बिठा कर इस कारण भोजन नहीं कराते कि मेरे हाथ कोमल हैं और मैं हाथों मे काम नहीं करता, परन्तु मै आप को सत्य कहता हूं कि मस्तक द्वारा काम करना अति कठिन है, यहा तक कि मस्तक द्वारा काम करने से कभी कभी मस्तक फटने लग जाता है'।

सुमन्त—'तो मित्र ऐसा कष्ट क्यों उठाते हो, मस्तक फटना क्या प्रिय मालूम हो सक्ता है, हाथों से सहज में काम क्यों नहीं कर लेते'।

अधर्म—'मै सदैव के लिये आप का मूर्ख बना रहना सहन नहीं कर सक्ता, मुझे आप लोगों की यह गति देख कर दया आती है, इस कारण यह काम करना चाहता हूं'।

सुमन्त—'बहुत अच्छा, सिखा दीजिये, काम करते २ जब हमारे हाथ थक जाया करेंगे, तो हम मस्तक से काम लिया करेंगे'।

अगले दिन सुमन्त ने अपनी समस्त राज्यधानी में यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि एक महात्मा मस्तक द्वारा काम करना बतलायगा, क्योंकि इस प्रकार काम करना अति लाभदायक है, सब लोग जाकर उसका उपदेश श्रवण करें।

लोगों के दल के दल आने लगे, सुमन्त ने जंटल मैन को एक बड़े ऊचे बुरज पर चढ़ा दिया कि लोग उसे भली प्रकार देख सकें।

अधर्म चोटी पर पहुंच कर व्याख्यान देने लगा, लोग समझे थे कि वह मस्तक द्वारा काम करना बतलायगा, परन्तु वह खाली गपोड़े हांकने लगा कि हाथों से काम करने के बिना मनुष्य यूं काल व्यतीत कर सक्ता है, यूं जीवत रह सक्ता है, लोग एक अक्षर न समझे, और निराश होकर अपने घरों को लौट गये।

अधर्म कई दिन बुरज पर बैठा बकवाद करता रहा, उसे भूख सताने लगी, लोग समझते थे कि यह

मस्तक द्वारा काम करके उदर पूर्ण कर लेगा, इस कारण उन्होंने भोजन नहीं पहुंचाया ।

सुमन्त ने प्रजा से पूछा कि क्या महात्मा ने मस्तक द्वारा काम करना प्रारम्भ कर दिया, सब ने यही उत्तर दिया कि महाराज हमारी तो कुछ समझ में नहीं आता । वह तो कोरागाल बजाये चला जाता है, दिखाता विखाता कुछ नहीं ।

तीसरे दिन अधर्म्म भूख और प्यास के मारे व्याकुल होकर गिर पड़ा, और चोटी पर से लुढ़कता२ धरती पर आ गिरा और उसका मस्तक फट गया ।

लोगों ने दौड़ कर रानी से कहा, रानी भागी२ खेत में गई, सुमन्त मूर्ख उस समय खेत में हल चला रहा था

रानी—'महाराज ! शीघ्र चलिये, वह महात्मा मस्तक द्वारा काम करने लग गया है' ।

राजा—'अच्छा—तो चलो' ।

सुमन्त ने आकर देखा कि जंटलमैन धरती पर पड़ा है, और उस का मस्तक फट गया है ।

सुमन्त—'भाइयो, महात्मा सत्य कहता था कि काम करते २ मस्तक फट जाया करता है, देखो, अन्त में बिचारे का मस्तक फट ही गया' ।

सुमन्त चाहता था कि पास जाकर उसे उठा ले, परन्तु अधर्म्म उस की मूर्खता के प्रभाव से धरती में समा गया, केवल एक छेद बाकी रह गया।

सुमन्त—ओहो, यह तो भूत था, मालूम हुआ यह उन तीनों का पिता था।

सुमन्त अब विद्यमान है, राज्यधानी की बस्ती नित्य बढ़ती जाती है, अजमेर और तारा भी आकर उसके पास निवास करने लगे है, अतिथि सेवा करना सुमन्त ने परमधर्म्म मान रक्खा है।

इस राज्यधानी में विलक्षण रीति एक यह है कि भाइयों के साथ रसोई में बैठ कर केवल वही पुरुष भोजन कर सक्ता है जिस के हाथ कठोर हों, दूसरों को बचा खुचा भोजन दिया जाता है।

चौथा-भाग

नवमी कहानी

एक समय किसी नगर में एक सदाचारी, दयालु और धनाढ्य पुरुष रहता था, उसके बहुत से सेवक थे, एक दिन सेवक एकत्र होकर यूं वार्तालाप करने लगे

हमारे स्वामी से बढ़कर दूसरा आज पृथ्वी पर कोई नहीं और धनाढ्य पुरुष अपने तईं स्वर्गीय जीव मान कर सेवकों को पशु समझते और अति कष्ट देते है, हमारा स्वामी कभी खोटा वचन मुख से नहीं निकालता, तिसपर पिता समान हमारा पालन पोषण करता है, हमारे साथ उस का प्रेम अथाह है, ऐसे स्वामी के घर में रहकर हमारे सुख की कोई सीमा नहीं

अधर्म्म स्वामी और सेवकों में यह प्रीति देख कर बड़ा दुखी हुआ, कि संसार में यदि इस प्रकार स्वामी भक्ति फैल गई तो हमारा तो जगत में से राज्य उठ जायगा, कोई उपद्रव खड़ा करना चाहिये, अतएव उस ने गोपाल नाम के एक सेवक को अपने वस में कर लिया।

कई दिन पीछे जब सेवक एकत्र होकर स्वामी की प्रशंसा करने लगे तो गोपाल बोला।

गोपाल—'स्वामी की इतनी बड़ाई करना तुम्हारी मूर्खता है, जितना काम हम उसका करते है यदि किसी राक्षस का भी करते तो वह प्रसन्न हो जाता, जब हम स्वामी की कोई आज्ञा उल्लंघन करें

तब वह अप्रसन्न हो, हां कोई काम बिगाड़ कर देखो कि कैसा दंड देता है,यू बातें मारने से क्या लाभ है' ।

काम बिगाड़ने की किसी नोकर ने हां भी नहीं भरी, गोपाल ने कहा कि देखो कल क्या तमाशा दिख ता हूं।

गोपाल स्वामी की गाय भेड़ चराया करता था स्वामी भेडों का बड़ा प्रेमी था, प्रातः काल स्वामी अपने मित्रों को जब भेड़ें दिखलाने लाया, तो गोपाल ने नौकरों का आंख मारी कि देखते रहना क्या होता है, अधर्म भी वृक्ष पर बैठा यह तमाशा देख रहा था।

स्वामी अपने मित्रों को भेडें दिखाता फिरता था, कि गोपाल ने रेवड को डरा दिया, वह इधर उधर भागने लगीं रेवड़ में कुंडे सींगों वाला एक मीढ़ा बड़ा सुन्दर था, और स्वामी उस के साथ बड़ा हित करताथा

स्वामी बोला 'प्यारे गोपाल वह मुड़े सींगों वाला मीढा तो पकड़ लो, मेरे मित्र उसे देखना चाहते हैं' ।

गोपाल ने झपट कर मीढे को इस भांति पकड़ा कि उस की एक टांग टूट गई, अधर्म बड़ा प्रसन्न हुआ कि अब लड़ाई होगी,सेवक भी खड़े देखतेथे कि क्या होता है

स्वामी—'गोपाल, प्यारे गोपाल, तुम्हारे स्वामी ने तुम्हें यह आज्ञा दी थी कि मुझे क्रोधित करो, परन्तु मेरा स्वामी तुम्हारे स्वामी से कहीं अधिक बलवान है, मैं तुम पर क्रोध नहीं करता, वरंच तुम्हारे स्वामी को अप्रसन्न करता हूं—तुम्हें दण्ड का भय है, तुम मेरी नौकरी छोड़ना चाहते हो, मैं तुम्हें नहीं रोकता, जहां चाहो जाओ, यह लो वस्त्र'।

यह कहकर दयालु स्वामी मित्रों सहित अपने घर लौट गया और अधर्म्म निराश होकर वहां से लोप होगया

—o—

दसवीं कहानी



होली के दिन थे, रात्रि को वर्षा हो जाने के कारण गांव की गलियों में पानी बह रहा था—दो छोटी छोटी लडकियां नवीन वस्त्र पहरे गली में आकर खेलने लगीं, माया ने धरती पर ऐसा पैर मारा कि देवकी की आंखों में छींटे पडगये और उस का कुड़ता खराब हो गया। माया डर कर भागना चाहती थी कि देवकी की मा आगई, उसने देवकी को रोते देख माया के मुंह पर थप्पड़ मारा।

माया जोर से रोने लगी, उसकी मां उसके रोने का शब्द सुन कर बाहर आगई, 'क्यों क्या हुआ' 'हूं, हूं देवकी की मा ने मारा' बस फिर क्या था, व लगी देवकी की मा को कोसने :—

शनैः शनैः दोनों घर एकत्र होगये और लगे आपस में लड़ने—एक बुढ़िया बोली कि क्या करते हो होली का दिन है यह लड़ाई कैसी जाने दो; चुप करो परन्तु कौन सुनता था—अन्त में माया और देवकी ने हीं लड़ाई बन्द की; और वह इस प्रकार :—

कि इधर तो स्त्री पुरुष लड़ाई कर रहे थेः उधर देवकी माया को मना कर फिर वहीं जाकर खेलने लगगई उन दोनों ने गढे में से एक नाली बना कर उस में घास के तिनके तराने आरम्भ कियेः एक तिनका वह निकला वह दोनों उस के पीछे दौड़ती २ वहां पहुंच गई जहां महाभारत छिडा हुआ था।

बुढ़िया लड़कियों को आते देखकर बोली—'तुम्हें लज्जा नहीं आती; इनहीं लडकियों के कारण लड़ाई हो रही है कि और भी कुछ, यह विचारी शुद्ध आत्मा

अधर्म—'महाराज सेना के बिना राजा की शोभा नहीं होती, न राज्य की रक्षा होती है, मैं सोल-हकला सम्पूर्ण हूं, यदि आज्ञा हो तो चतुरंगनी सेना त्यार कर दूं।

सुमन्त—'बहुत अच्छा, परंतु एक बात है मुझे मारू बाजा बजता बड़ा प्रिय लगता है, सेना त्यार करके उन्हें केवल बाजा बजाना सिखलाना और कुछ नहीं'।

अधर्म प्रजा के लोगों के पास जाकर यह समझाने लगा कि तुम लोग सिपाही बनजाओ, तुम्हें वस्त्र और रुपया दिया जावेगा।

लोग—'हमारे पास अन्न बहुत है, स्त्रियां कपड़े सीलेती हैं, हमें कुछ नहीं चाहिये, जाओ अपना काम करो हम सिपाही नहीं बनते'।

अधर्म ने सुमन्त के पास आकर कहा —

अधर्म—'महाराज आप की प्रजा बड़ी ही मूर्ख है, मुझे निश्चय हो गया कि वह बिना सरकारी हुक्म के कदापि सिपाही न बनेंगे, यह हुक्मजारी कर दिया जाय कि जो कोई सिपाही न बनेगा उसे फांसी दे दिया जायगा'।

सुमन्त ने अधर्म का कहना मान कर वैसाही हुक्म जारी कर दिया लोग अधर्म्म के पास आकर बोले।

लोग—'तुम कहते हो कि यदि हम सिपाही भरती नहीं होंगे, तो जान से मार दिये जायेंगे, हम पूछते हैं कि भरती होकर हमारा क्या बनेगा, हमने सुना है कि युद्ध में सिपाहियों को मार डाला जाता है'।

अधर्म्म—'हां, कभी कभी ऐसा भी होजाता है।

लोग—जब मरना ही ठेहरा तो घर में रह कर ही प्राण त्याग क्यों न करें, युद्ध में प्राण देने से क्या लाभ है, हम सिपाही नहीं बनते'।

अधर्म्म—'तुम महा मूर्ख हो, युद्ध में जाकर तुम्हारा माराजाना कोई निश्चत बात नहीं, बच भी सक्ते हो, परन्तु सिपाही न बनने से तुम्हारा फांसी दिया जाना तो संशय रहित है'।

लोग विसमय ग्रस्त होकर सुमन्त के पास पहुंचे।

लोग—'महाराज एक सेनापति हमें अचरज की बात सुनाता है, उसका कथन है कि यदि हम सिपाही न बनेंगे तो महाराज हम को अवश्य फांसी दे देंगे, क्या यह वार्ता सत्य है'।

सुमन्त—(हंस कर)–'भला तुम सब विचार तो करो कि मैं अकेला तुम सब को किस प्रकार फांसी दे सक्ता हूं, मूर्खता के कारण मैं तुम्हें अच्छी तरह नहीं समझा सक्ता'।

लोग—'तो हम सिपाही क्यों बनें'।

सुमन्त—'मत बनो'।

लोग अपने २ घरों को चले गये, अधर्म्म बड़ा ही निराश हुआ कि मन्त्र तो न चला, अच्छा पड़ोसी राजा के पास जा कर उसे यह उपदेश करता हूं कि ऐसे मूर्ख राजा का देश छीन ले, अतएव दूसरे राजा के दरबार में जा कर उसने विनय किया, कि महाराज सुमन्त के राज में अन्न और पशु बहुत हैं, रुपया न हुआ तो क्या है, सेना है ही नहीं, बस चढ़ाई कर के उसका राज्य छीन लीजिये।

राजा ने अधर्म्म का कहना मान कर सेना ले युद्ध की त्यारी करदी।

उधर सुमन्त की प्रजा के लोग खबर पाकर सुमन्त के पास पहुंचे कि महाराज उत्तर देश का राजा युद्ध करने के वास्ते आता है, सुमन्त ने कहा, 'आने दो हमारी कुछ हानि नहीं।

उत्तर देशाधिपती ने सुमन्त की सेना का भेद लेने के कारण कुछ सिपाही भेजे, वहा सेना कहा थी, भेद किसकालें वह लौट गये, तब उस राजा ने सेना को यह आज्ञा की कि जाकर देश लूट लें, सिपाही गांव में पहुंच कर अन्न वस्त्र पशु इत्यादि लूटने लगे, सुमन्त की प्रजा ने किसी का सामना नहीं किया, कुछ न बोले, वरंच स्वयं सिपाहियों की सेवा करने लगे, और निवेदन किया, ' भाईयो यदि अपने देश में रहने से तुम्हें कोई कष्ट होता है, तो यहा आकर हमारे पास निवास करो' ।

अब सिपाही सोचने लगे कि युद्ध करें, तो किस से करें, यहा तो यह सब लोग आप से आप सब कुछ देने पर त्यार है, राजा के पास जाकर प्रार्थना की कि महाराज सुमन्त की प्रजा तो स्वयं सब कुछ देने पर प्रस्तुत है, लड़ाई किस के साथ कीजावे, राजा ने कहा कुछ चिंता नहीं, जाओ गांव जलादो, पशु सब मार डालो, हम लड़ाई अवश्य करेंगे, यदि मेरा कहना नही मानोगे तो तुम्हें तोप के मुंह उडा दूंगा

सिपाही भयभीत होकर फिर लौटे, और गांव आदि जलाने लगे, सुमन्त की प्रजाने उन सें प्रेम पूर्वक

विनय की, कि लाभदायक पदार्थों अन्न पशु आदि को भस्म करने से आप लोगों को क्या फल मिलेगा; यदि इच्छा है तो यह सब पदार्थ अपने देश को ले जाओ, हमें कोई शोक नहीं होगा, परन्तु इस प्रकार पशुओं का वध करने से हमें क्लेश होता है।

परिणाम यह हुआ कि प्रेम के प्रभाव से सिपाहियों के चित्तद्रवत हो गये, और उस राजा को छोड़ कर वह अपने अपने घरों में चले गये, सुमन्त आनन्द से राज्य करता रहा।

१२.

अधर्म्म सोचने लगा कि अब क्या करें,इस मूर्ख ने तो बड़ा कष्ट दिया। सच है बुद्धिमानों को वश कर लेना सहज है, मूर्ख को समझाना अति कठिन है—अच्छा जण्टलमैन बनकर सुमन्त के पास चलते हैं, स्यात् कहना मान जाय—

अतएव जण्टलमैन का रूप धारण करके वह सुमन्त मूर्ख की सेवा में आया और, बोला 'महाराज मेरी इच्छा है कि आप की राजधानी में व्यापार

फैलाऊं, व्यापार करने से पुरुष बुद्धिमान और चतुर होजाता है'—

सु०—'बहुत अच्छा, आइये, व्यापार फैलाइये'।

अगले दिन अधर्म्म स्वर्ण मुद्रा का थैला लेकर चौराहे में पहुंचा, और मोहरें दिखलाकर लोगों से कहने लगा कि जो कोई मेरा काम करेगा, उसे यह मोहरें दी जाएंगी। वहां की मूर्ख प्रजा मोहरों का नाम तक नहीं जानती थी, सोनेके सुन्दर२ टुकड़े देख कर वह प्रसन्न होगये और अधर्म्मका काम करने लगे।

अधर्म्म समझा कि तारा वाला मन्त्र चल गया।

थोड़े दिन लोग अधर्म्म का काम करते रहे, उसे अन्न वस्त्र भी देते रहे। जब उनके पास मोहरें बहुत होगईं, और उन्हों ने अपनी स्त्रियों और बालकों को भूषण बनवादिये, तब वह अधर्म्म का काम करना छोड़ गये, यहां तक कि उसके हाथ आटा दाल बचना भी बन्दकर दिया।

अधर्म्म की विचित्र गति बनी। एक दिन एक किसान के घर जाकर वह कहने लगा 'भई इस मोहर,

के बदले एक आध सेर आटा तो देदो'। किसान बोला, मोहर को क्या करूंगा, मोहर तो पहले ही बहुत पड़ी हैं, आटा नहीं बेचता, हां परमेश्वर के नाम पर मांगो तो देने को त्यार हूं'। भगवान का नाम सुनकर अधर्म्म कांप उठा और भागकर दूसरे किसान के घर पहुंचा,वहां भी यही हाल हुआ—अन्त काल रात को वह भूखा ही सोया।

प्रजा के लोग सुमन्त के पास आकर कहने लगे—'महाराज एक जण्टलमैन आया है, कोट पतलून डाटे रहता है, खाता पीता खूब है, काम कुछ नहीं करता, मोहरें लिये फिरता है, यदि हम परमेश्वर के नाम पर उसे अन्न देना चाहते है तो नहीं लेता, मोहरें दिखाता है,अन्न बेचने की हमें आवश्यक्ता नहीं, उसे भूखा रखना भी उचित नहीं क्या उपाय करें'—

सु०—'गृह प्रति वारी बांधदो'—

अब अधर्म्म महाराज घर घर जाकर रोटी मांगकर खाने लगे, होते २ एक दिन राजा सुमन्त के घर की वारी आगई, वहां जाकर देखता क्या है कि सुमन्त की गूंगी बहन रोटी पका रही है।

बहुधा ऐसा होचुका था कि निकम्मे पुरुष रसोई में आकर भोजन पाजाया करते थे. इस कारण मनोःरमा ने यह नियम बांध दिया था कि जिनके हाथ काम करने के कारण कठोर होगये हों वही लोग रसोई में बैठकर भोजन पाया करें दूसरा कोई नहीं।

अधर्म्म को यह बात विदित न थी, वह झट से रसोई में जाकर बैठ गया, गूंगी मनोरमा ने उसे वहा से उठा दिया, रानी बोली, 'महाशय बुरा न मानिये यहां की यह रीति है कि कोमल हाथों वाले को उच्छिष्ट भोजन दिया जाता है, आप बाहर ठहरें जो कुछ अन्न बचेगा, आप को मिल जावेगा'।

यह बातें हो ही रही थी कि सुमन्त भी वहां आगया।

अधर्म्म, (सुमन्त)–'आप के घर में यह अपूर्व मूर्खता का नियम है, काम क्या केवल हाथों से ही किया जाता है, आप को स्यात ज्ञात नहीं कि चतुर पुरुष किस इंद्रय से काम करते है'।

सुमन्त–'भला हम मूर्ख क्या जानें, हम तो प्रायः हाथों से ही काम करते हैं'।

सरल चित्त प्रेम भाव से सब कुछ भूल कर अपने खेल में लगी हुई है, तुम ने शुद्ध यज्ञ रचा रक्खा है, तुम से तो अधिक बुद्धि इन लड़कियों में है '।

सब के सब चुप होगये और महात्माओं का यह वचन स्मरण करने लगे, कि बालकों की भांति जब तक पुरुष अपना अन्तः करण शुद्ध नहीं करता, परमात्मा को नहीं मिल सक्ता।

ग्यारहवीं कहानी

अवध राज्य में चतरसिंह नाम का एक जिमींदार रहता था, विवाह होने के एक वर्ष पीछे उसके पिता का देहान्त होगया, उस समय उसके पास बहुत धन दौलत न थी, दो गाय, दो बैल, एक घोड़ी, और दस एक भेड़ थीं प्रबन्ध कर्ता होने के कारण पैंतीस वर्ष के लगातार परिश्रम से अब उस के पास २०० गाय, १५० बैल, १,२०० भेड़ होगई थीं, वह बड़े प्रतिष्ठित पुरुषों में गिना जाने लगा, जैसा कि संसार की रीति है बहुत लोग उस से डाह करते और कहते थे।

' चतर सिंह बड़ा भाग्यवान है, धन दौलत सब कुछ उसके पास है, संसार अब उसे सुख रूप हो रहा है।

बड़े बड़े माननीय पुरुष उसके मित्र बन गये, तिस पर चतर सिंह अतिथि सेवा के कारण बड़ा प्रसिद्ध माना जाता था, उस को दो पुत्र और एक कन्या थी वह सब व्याहे हुये थे, गरीबी दशा में तो सब मिल कर काम किया करते थे, धनवान हो जाने पर यह गत बनी कि बड़ा लड़का तो मद्य का सेवन करते २ एक दिन किसी लड़ाई में काम आया, छोटा लड़का एक कलहारी स्त्री से विवाह करके पिता से अलग रहने लग गया

काल चक्र बड़ा प्रबल है, इस में स्थिरता नहीं, चतर सिंह के दिन फिरे, पशुओं में मरी पड़ी, सब पशु मर गये एक न बचा, धन कुछ चोरों ने हर लिया, कुछ योंही निबट गया। यहां तक कि उसके पास छदाम न बचा पड़ोसी आनन्द सिंह ने तरस खा कर उसे और उस की स्त्री को अपने घर में नौकर रख लिया।

आनन्द सिंह को इन के नौकर रख लेने से बड़ा लाभ हुआ क्योंकि पुरुष स्त्री दोनों बड़े सदाचारी और स्वामी भक्त थे।

एक दिन आनन्द सिंह के घर में उसके कुछ सम्बन्धी आये, भोजन करती समय आनन्द सिंह ने अपने सम्बन्धी से कहा कि तुम ने उस बूढ़े को देखा

मैं—'क्यों, उस बूढ़े में क्या बात है'।

आनन्दसिंह—'वह इस प्रान्त में कभी सब से अधिक मालदार था, उस का नाम चतर सिंह है'।

मैं—'है, चतर सिंह, मैंने उसका नाम तो सुन रक्खा था, देखा उसे आज ही है'।

आनन्द सिंह—'अब वह इतना कंगाल होगया है कि उसे मेरी नौकरी करनी पड़ी'।

मैं—'अदृष्ट बड़ा प्रबल है, लक्ष्मी कभी स्थिर नहीं रहती, मेरे विचार में चतर सिंह पिछली बातें स्मरण करके अवश्य शोक प्रकट करता होगा'।

आनन्दसिंह—मुझे कुछ मालूम नहीं, मेरे सामने कभी कुछ नहीं बोलता, चुपके२ शांति से काम किये जाता है'

मैं—'भला पूछ तो कि क्या हाल है'।

आनन्दसिंह—'हां पूछ देखो'।

मैं—(चतर सिंह से) 'बाबा, तुम हमें इस भांति आनन्द से गद्दे तकियों पर लेटने, नाना-प्रकार के व्यञ्जन खाते देख कर अवश्य दुखी होगे, क्योंकि एक समय था कि तुम भी धनाढ्य थे'।

चतरसिंह—(हंस कर) अपने सुख दुखका ब्योरा यदि मैं तुम्हें सुनाऊंगा, तो तुम्हें विश्वास नहीं होगा,

इस कारण मेरी स्त्री से पूछ देखो कि वह क्या कहती है, क्योंकि स्त्रियों को अपनी बहन लक्ष्मी से बड़ा प्यार होता है'।

स्त्री पिछली ओर कवाड़ों की ओट में बैठी थी, सम्बन्धी ने उस से पूछा।

सं०—'माई' सत्य कहो कि, पहले सुख था कि अब है

स्त्री—' सुनिये, मै और मेरा पति दोनों पचास वर्ष तक यथार्थ सुख को खोजते रहे, वह नहीं मिला, जब से इस घर में नौकर हुये हैं तब से कुछ सुख प्राप्त हुआ है, अब हमें किसी बात की अभिलाषा नहीं '।

सिवाय चतरसिंह के सब उपहास करने लगे।

स्त्री—मै सत्य कहती हूं, हंसी नहीं करती, धनवान होने पर किञ्चित मात्र भी सुख न था, सुख अब है'?

सं—'क्यों?'।

स्त्री—'धन होने पर हम सदैव ऐसे चिन्ताग्रस्त रहते थे कि परमात्मा को कभी स्मरण भी नहीं करते थे, आज कोई बड़ा आदमी आगया, उसकी सेवा में कोई त्रुटि न रह जाय, नहीं तो अपमान होगा,

नौकर काम नहीं करते, क्या करें, गाय बहुत हैं, रात को कहीं कोई बाघ न उठा ले जाय, सदाचोरों का भय रहता था सारी रात जागते कटती थीं फिर कभी मेरी और मेरे पति की किसी न किसी बात पर लड़ाई भी चल जाती थी तात्पर्य यह कि कोई दिन ऐसा न था कि चैन से बैठे हों'।

सं—'भला, अब'।

स्त्री—अब लडाई है न चिन्ता, कारण के नष्ट होने से कार्य्य स्वयं नष्ट हो जाता है, स्वामी का काम किया और छुट्टी हुई, ऊधो का लेन न माधो का देन, दुःख का अब लेश नहीं वह सब हंसने लगे।

चतरसिंह—यह बात हंसने की नहीं, मनुष्य जीवन में सत्य वार्ता है तो यही है, धन नष्ट होजाने पर पहले हम विलाप किया करते थे, जब से ज्ञान चक्षु खुल गये है, तब से हमारा कल्पित दुःख सुख में बदल गया है, संसारी विषयों में लिप्त होने से सुख प्राप्त नहीं हो सक्ता'।

वहा एक पंडित भी बैठा हुआ था, वह बोला, वार्ता तो यही सत्य है, निस्सन्देह सुख त्याग में ही है, राग में नहीं।

—०—

पांचवां-भाग

बारहवीं कहानी

लोक कलकत्ते से एक जहाज में सवार होकर जगन्नाथ पुरी की यात्रा को जा रहे थे, उन में एक साधू भी था, जहाज़ साफ़ चला जाता था, एक मांझी उंगली मे कुछ दिखा कर यात्रियों से बातें कर रहा था, साधू ने पूछा क्या है, मांझी बोला–'महाराज सामने एक छोटे से टापू में तीन महात्मा निवास करते हैं'।

साधू–'वह महात्मा कौन है'।

मांझी—महाराज नाम तो उनका मैने चिरकाल से सुना हुआ था, परन्तु कभी देखने का अवसर नहीं मिला था, एक दिन मै मछली पकड़ने उधर निकल गया, मेरी नौका बिगड़ गई मुझे रात्रि को उस टापू में रहना पड़ा, उन्होंने मेरी बड़ी सेवा की और प्रातः काल मेरी नौका को ठीक करके मुझे इधर भेज दिया

साधू–'क्या अवस्था है'।

- माझी–एक तो कोई सौ वर्ष से ऊंचा होगा, वह दुबला पतला है, परन्तु प्रसन्न मुख देवता स्वरूप, दूसरा कोई सत्तर वर्ष का है तीसरा पचास वर्ष का'।

साधू–उन्हों ने तुम से कोई बात की थी'।

माझी–'कुछ नहीं, जब तक मैं वहां रहा, वह चुपही रहे, मैंने पूछा भी कि आप कबसे इस टापू में निवास करते हैं, यहीउत्तर दिया कि हम पर दया करो'।

'बातें होते २ जहाज़ टापू के समीप जा पहुंचा, साधू ने जहाज के मालिक से एक नौका मांगी कि मैं उन महात्माओं का दर्शन करना चाहता हूं, मालक ने नौका देदी, साधू नौका पर चढकर टापू में पहुंच गया।

महात्मा—' महाराज आप को हमारा प्रणाम है'।

साधू—'आशीर्वाद, मैंने सुना है कि आप यहां एकांत रह कर मोक्ष साधन का उपाय करते है, मैं भी साधू हूं, और संसार भर में भक्ति मार्ग का उपदेश करता हूं, मुझे आपके दर्शनों की बड़ी चाह थी, यदि कुछ प्रश्न करना हो तो कीजिये'।

- महात्मा कुछ न बोले :—

साधू—'भला–आप किस प्रकार ईश्वर आराधना करते हैं, मैं भी सुनूं'।

महात्मा—'(हंसकर) हम ईश्वर की आराधना करना क्या जानें, हम तो यहां काल व्यतीत करते हैं'।

साधू—'फिर भी बतलाइये तो सही कि आपके भजन का प्रकार क्या है'।

महात्मा—'हम तो सदैव प्रार्थना करते हैं कि हे त्रगुणात्मक परमात्मा, हम तीनों पर दया कर'।

साधू–(हंस कर) 'तुम ने कहीं ब्रह्मा, विष्णु, महेश का नाम सुन लिया है, यह भजन नहीं कहलाता, सुनो आप लोग इस प्रकार प्रार्थना किया करो।

'हे परमात्मा आपने जगत का उद्धार करने के के कारण मानस तन धारण किया, आप शुद्ध बुद्ध नित्य मुक्त अन्तर्यामी हो इत्यादि'।

तीनों महात्मा इस प्रार्थना को कण्ठ करने लगे, साधू नौका पर सवार होकर जहाज पर लौट आया।

जहाज़ चलने लगा, रात्रि होगई, चन्द्रमा ने श्वेत चादर बिछा दी, यात्री सब सोगये, साधू अकेला जहाज की छत पर बैठा कुछ विचार कर रहा था कि

अचानक सामने से कोई वस्तु दिखाई पड़ी, उसने यात्रियों को जगा कर कहा कि देखो सामने क्या है।

यात्री—'ओहो, यह-तो वह तीनों महात्मा हैं, देखो समुद्र में ऐसे चल रहे है मानों धरती पर चल रहे हैं।

निकट आकर महात्माओं ने साधू से कहा महाराज हम तुम्हारी सिखाई हुई प्रार्थना भूल गये, जब तक तो रटते रहे याद रही, चुप होने की देर थी कि उसे भूल गये।

साधु—' प्रणाम करके ' मैं समझा, तुम्हें शिक्षा की आवश्यकता नहीं, तुम्हारी प्रार्थना परमात्मा को स्वयं स्वीकृत है, मैं आपको कुछ उपदेश नहीं कर सक्ता क्षमा करो ' इतने में महात्मा अन्तरध्यान होगये।

तेरहवीं कहानी

एक दिन प्रातःकाल एक गरीब किसान घर से दो रोटी पल्ले बांध कर हल जोतने चला, खेत में पहुंच कर रोटी तो उसने एक झाड़ी तले रख दी और आप हल चलाने लगा; मध्यान समय भूख लगने पर बैलों को चरने छोड़ कर वह आकर जब रोटी उठाने लगा; तो रोटी वहां कहां थी।

इधर देखा उधर देखा कुछ पता नहीं; कोई आता भी दिखाई नहीं दिया खाली साफा पड़ा है, रोटी किसी ने उठाली।

वास्तव में रोटी भूत ने उठाली थी वह झाड़ी के पीछे छिपा बैठा था।

किसान बोला 'क्या हुआ, एक दिन रोटी न खाई तो मर नहीं जाऊंगा, निस्संदेह किसी भूखे ने ही उठाई है, भगवान उस का भला करे'।

यह कह कर कुएं पर पानी पी उसने फिर खेत वाहना आरम्भ कर दिया, भूत उदास होकर अधर्म्म के पास पहुंचा और उसे सारा वृतान्त कह सुनाया।

अधर्म्म—(क्रोध से) 'तुम मूर्ख हो, काम करना क्या जानो, यदि संसारी लोग इस प्रकार सन्तोष कर के जीवन व्यतीत करने लगेंगे तो हमारा तो बेड़ा ही डूब जायगा, जाओ, तुरन्त जा कर कोई ऐसा उपाय करो कि मनुष्यों में सन्तोष और दया भाव उत्पन्न होने न पावे, नहीं तो तुम्हें फांसी पर लटका दिया जावेगा'।

भूत लौट कर विचार करने लगा कि क्या यत्न किया जाय, सोचते२ अन्तकाल उसे उपाय सूझ ही गया

अर्थात् भूत अभी [illegible]

होगया, पहले वर्ष तो उस ने किसान को यह सम्मति दी कि नमान में खेती बोओ, दैव गति से उस साल चौमासा न लगा, सब लोगों की खेतियां जल गई इस किसान को वड़ा लाभ हुआ, नमान धरती होने के कारण मुका अनाज उगा।

दूसरे वर्ष उसने किसान से कह कर एक ऊंचे टीले पर खेती बिजवाई काल वश अति दृष्टि होने के कारण सब खेतियां पानी में डूब कर सडगई। इस किसान को कोई हानि नहीं पहुंची।

अब किसान के पास इतने जौ पैदा हुए कि कोठे भर गये, करे तो क्या करे, भूत ने उसे जौ से मद्य बनाना सिखला दिया, बस फिर क्या था, किसान मद्य बना बना कर मित्रों सहित उसका सेवन करने लगा॥

भूत ने अधर्म्म राज के पास पहुंच कर विनय की कि महाराज अब चल कर देखिये कि मैंने कैसा मन्त्र चलाया है, अब किसान कदापि नहीं बच सक्ता अतएव वह दोनों किसान के घर में आ पहुंचे।

देखा कि वहा आस पास के किसान एकत्र हैं, मेमसिंह की स्त्री उन सब को मद्य पिला रही है,

इतने में उसने ठोकर खाई, और मद्य का प्याला उसके हाथ से छूट गया।

प्रेमसिंह–(क्रोधातुर) 'फूहड़ कहीं की, क्या तू इसे हाव का पानी समझती है'।

भूत ने अधर्म्म से कहा–कि यह वही प्रेमसिंह है जो रंक होने पर भी रोटी खोये जाने की किंचत चिंता नहीं किया करता था।

प्रेमसिंह स्त्री को झिड़क कर आप मद्य पिलाने लगा–उसी समय वहां कोई साधू भोजन मांगने आ गया, प्रेमसिंह उभे धतकार कर बोला 'जाओ यहां से क्यों भीतर घुसे आते हो,यहां भोजन वोजन कुछ नहीं

अधर्म्म बड़ा प्रसन्न हुआ, भूत बोला, अभी क्या है, किंचत देखते जाइये क्या होता है।

किसान पहला प्याला पीकर लोमड़ की भांति पाखण्ड धारण करके चिकनी चुपड़ी बातें करने लगे।

अधर्म्म—'वाह भई भूत क्या कहना है, यदि यह लोग मद्य के भक्त बन कर आपस में एक दूसरे के साथ ऐसी वंचकता करना आरम्भ कर देंगे तो हमारा राज्य तो अचल होजायगा।

भूत–' महाराज अभी तो पहला ही प्याला है, दूसरा प्याला पीने दीजिये, फिर इन को आप व्याघ्र के रूप में देखेंगे '।

दूसरा प्याला पीने की देर थी कि वह लोग लगे आपस में कोलाहल और हाथापाई करने, किसी ने किसी का नाक काट लिया. किसी ने किसी का कान, स्वयं प्रेमसिंह पर बेभाव की पड़ी।

अधर्म्म—(अति प्रसन्नता से 'वाह वाह, क्या खूब'।

भूत–बस तीसरा प्याला पेट में गया कि वह बारह अवतार बने '।

किसानों ने तीसरा प्याला पीलिया। दृश्य ही और होगया। वह पशु समान नग्न होकर उन्मत्त की न्याईं नाचने लगे, कोई इधर भागा, कोई उधर, कोई कहीं गिर पड़ा है. कोई कहीं, प्रेमसिंह दौड़कर मोरी में गिर पड़ा और सूकर की भांति वहीं पड़ा हल्ला मचाता रहा।

अधर्म्म–' भई भूत तुमने तो बड़ा काम किया. यह मन्त्र तो अद्वितीय है। मेरी समझ में तुमने मद्य बनाते समय उसमें लोमड़ बाघ और सूकर का

रुधिर अवश्य मिला दिया है, जिस से यह वारी २ लोमड़, वाघ और सूकर वनकर भ्रष्टाचार में प्रवृत हुए है।

भूत—महाराज यह वात नहीं, यह नियम है कि यावत्काल मनुष्य को केवल क्षुधा निवारण अन्न मिलता रहता है, यह कोई उपद्रव नहीं करता, वास्तव में मनुष्य और पशु में कुछ अन्तर नहीं, ज्यूं ही उसे अधिक मिला कि उसने धूम मचाई, वस यही मन्त्र मैंने प्रेमसिंह पर चलाया है जब तक वह निरधन था, सन्तोष से जीवन व्यतीत करता था, मैंने उसे इतना अन्न दिया कि उसकी बुद्धि भ्रष्ट होगई, मद्य वनानी सीखकर उसने परमेश्वर के दिये हुए गुणकारक पदार्थों को विषय भोग के निमित्त मादक वना डाला. लोमड, वाघ और सूकर का अंश उसमें पहले से उपस्थित था। प्रेरणा होते ही सव कुछ प्रकट होगया। अव वह मद्य भक्त होकर सदैव पशु वना रहेगा’।

अधर्म्म ने अति प्रसन्न होकर भूत को प्रधान की पदवी दे दी।

—०—

चौदहवीं कहानी

१.

एक दिन उर्मिला अपनी छोटी बहन निर्मला से मिलने आई। उर्मिला नगर में एक प्रसिद्ध सौदागर को व्याही हुई थी, निर्मला गांव में एक ग़रीब किसान के साथ व्याही हुई थी। भोजन करती समय उनमें यूं बात चीत होने लगी।

उर्मिला—'बहन निर्मला, गांव में रहना किस काम का है देखो हम नगर में रहकर बड़े २ सुन्दर वस्त्र पहरती हैं नाना प्रकार के व्यंजन खाती हैं नाटक तमाशे देखती है बाग बगीचों में भ्रमण करती हैं और सदैव रंगरलिया मनाती हैं'।

निर्मला—(अभिमान से)—'मुझ से कहती हो, मैं तो कभी भी तुम्हारे साथ अदला बदली न करूं, माना कि हमारा जीवन साधारण है, और तुम्हारा रजोगुणी, परन्तु हमें एक चिन्ता नहीं, तुम्हें हजार हैं। हानि लाभ दो जोड़े भाई है, जो आज राजा है वही कल कंगाल है। यहां तो सदैव एक रस

रहते है। यद्यपि किसान धनवान नहीं बनसक्ते, तथापि हम चिरकाल सुख भोग करते है, और क्षुधा निवारण अन्न तो हमको अवश्य ही मिलजाता है'।

उर्मला–'अन्न की एक ही कही,तुम तो पशु हो, चतुराई और सभ्यता को तुम क्या जानो। कितना ही मरो खपो, तुम और तुम्हारी सन्तान एक दिन इसी खाद के ढेर पर प्राण त्याग कर देगी और बस'

निर्मला–'तो इमसे क्या प्रयोजन है, मरना सब ने है, निःसन्देह खेती का काम कठिन है, परन्तु हमें किसी का भय नही न किसीको मस्तक झुकाना पड़ता है, नगर में रहते हुए मनुष्य के चित्त में अनन्त संकल्प विकल्प उठते है, क्या जाने कल तुम्हारा पति मद्य सेवी बनकर जुआरी और वैश्या-गामी होजाय–क्योंकि संग का प्रभाव जगत विदित है'

हरनामसिंह चारपाई पर पडा हुआ यह बातें सुन रहा था–

हर०–(स्वागत)–'मेरी स्त्री कहती तो सत्य है, हम बालपन से ही खेतों के काम में ऐसे तत्पर रहते है कि हमें कुकर्म्म करने का ध्यान तक भी नहीं आता, परन्तु दुःख यह है कि विमवाही कुछ नहीं

यदि मेरे पास धरती मुक्ता होजाय तो मैं काल से भी न डरूं'।

संयोग से काल भगवान भी वहा बैठे यह वार्ता सुन रहे थे, हरनामसिंह में धरती की लालसा उत्पन्न होते देख कर प्रसन्न हो कहने लगे, कि इसी तृष्णा के वश होकर यह पुरुष एक दिन प्राण त्याग करेगा।

२

इस गांव के समीप तीन सौ बीगाह धरती की मालकनी एक ज़िमीदारिनी रहती थी, उसने एक बूढा सिपाही कारिंदा नौकर रख छोड़ा था, यह कारिंदा पड़ौसियों को बड़ा दुःख देता था, हरनामसिंह अपने पशुओं को संभाल २ कर रखता था परंतु कहा तक कुई बेर उसकी और कारिंदे की लड़ाई हुई, हरनामसिंह अत्यंत दुखी होगया था।

कुछ दिन उपरांत यह चरचा फैली कि बुढ़िया अपनी रियासत बेचती है, और गांव का बनिया उसे मोल लेने पर त्यार है, गाव वाले डरे कि यदि बनिया मालिक बन गया तो वह सिपाही कारिंदे से

भी अधिक दुख देगा, उचित यह है कि सब मिल कर रियासत खरीद लें, परन्तु काल भगवान ने ऐसा फूटक डाला कि वह तितर बितर हो गये, एक किसान ने पचास बीगाह धरती बुढ़िया से इस शरत पर मोल ली कि आधा दाम तुरंत देदे और आधा एक वर्ष पीछे।

यह सुन कर हरनामसिंह के मन में भी ईर्षा उत्पन्न हुई, उसने विचारा कि कुछ ही हो चालीस बीगाह धरती अवश्य मोल लेनी चाहिये, सौ रुपये घर में जमा थे, बाकी कुछ अनाज और एक बैल बेचकर चालीस बीगाह धरती खरीद ही ली, आधा दाम पहले दे दिया, आधा दो वर्ष पीछे चुका देनी की प्रतिज्ञा करली।

हरनामसिंह पुरुषार्थी बड़ा था, सौभाग्य वस उस वर्ष फसल अच्छी लगी, दो वर्ष के भीतर २ ही ऋण चुक गया, अब हरनामसिंह अपने खेतों, पशुओं, भूमि, खल्यान, चराद को देखकर फूला न समाता, यह खेत तो वहां पहले भी उपस्थित थे, और हरनामसिंह उन्हें नित्य देखा भी करता था, परन्तु ममत्व हो जाने के कारण वह अब और के और

३

हरनामसिंह यूं तो सुखी था, परन्तु पड़ौसी बड़ा दुख देने लगे, कभी कोई खेत में बैल छोड़ देता, कभी गांव के बालक चरांद में डंगर चराने लगते पहले २ तो वह सब सहन करता रहा, पर कहां तक उसने विचारा कि यदि इस प्रकार चुप करता रहूंगा तो यह लोग चैन लेने न देंगे, अतएव उसने नालश करके कई मनुष्यों पर दंड लगवा दिया, लोग इस का कष्ट मान कर उसे और भी दुख देने लगे।

एक रात दयालु ने हरनामसिंह की धरती में से सारे वृक्ष काट डाले, प्रातःकाल जाकर देखा कि सारे वृक्ष कटे पड़े है, वह आग ही तो होगया—

हरनामसिंह—(स्वागत) ' हाय हाय यह क्या हुआ, यदि कोई एक आध वृक्ष काट लेता तो खैर कुछ बात न थी, पर इस चाडाल ने तो एक भी वृक्ष न छोडा, हो न हो यह उपद्रव तो दयालु ने किया है '

बस क्रोध से भरा हुआ वह दयालु के घर पंहुचा ' क्यों, वृक्ष क्यों काटे ', दयालू लडने मरने पर त्यार

होगया, ' कैसे वृक्ष, किसने काटे, जाओ, नहीं तो अभी सिर फोड़ देता हूं'–हरनामसिंह भलायह बातें कब सहन कर सक्ता था, तुरंत कचहरी में पहुंचा और नालश ठोक दी, निरणय होने पर दयालकोरा बच गया, क्योंकि वृक्ष काटने का कोई साक्षी न था हरनामसिंह जल भुन कर हाकिमों को गालियां देने लगा कि ' तुम चोरों को छोड़ देते हो, तुम स्वयं चोर हो, ' इत्यादि–

तात्पर्य्य यह कि अब कोई दिन ऐसा न था कि पड़ौसियों से उस की लड़ाई झगड़ा न हो, पहले जब घर की एक बिसवा धरती पास न थी तो वह बड़ा सुखी था, अब नित्य क्लेश रहता था करे तो क्या करे–

एक दिन गांव में यह चरचा हुई कि लोग घर बार छोड़ कर किसी नवीन देश में जाने का विचार कर रहे हैं, हरनामसिंह बड़ा प्रसन्न हुआ कि उजाड़ हो जाने पर बहुत सी धरती पर अधिकार करके आनंद पूर्वक दिन काटूंगा–

कुछ दिन पीछे हरनामसिंह के गृह में एक अतिथि

आया, हरनामसिंह ने उसका बड़ा आदर सत्कार किया, रात्रि को भोजन करती समय अतिथि बोला, कि 'पचायत ने थोडी दूर पर एक नवीन वस्ती बसाई है, मनुष्य प्रति २५ बीगाह ज़मीन मिलती है, जमीन बड़ी सुन्दर है, अभी एक मनुष्य ठाली हाथ वहा आया था, दो वर्ष के अन्दर ही अन्दर माला माल होगया।

यह सुन कर हरनामसिंह को तृष्णा ने घेरा, कहने लगा–' मैं इस अन्ध कूप में क्यों सडूं–घरवार बेच कर उस नवीन वस्ती में ही क्यों न चला जाऊं- यहां तो पडोसियों ने आपत्ति में जान डाल रक्खी है, परन्तु पहले जाकर देख आऊं '–

तीन सौ मील पैदल चलने का कष्ट उठा कर वहा पहुंचा, देखा कि अतिथि सत्य कहता था, मनुष्य प्रति २५ बीगाह जमीन मिली हुई है, यदि कोई चाहे तो एक रुपया बीगाह मोल देने पर अधिक धरती भी मोल ले सक्ता है।

बस फिर क्या था, देख भाल करके तुरंत घर को लौट आया, और धरती, मकान, पशु आदि सब

बेचबाच कर नवीन वस्ती को चल दियी–हाय तृष्णा ।

४

हरनामसिंह ने कुटुम्ब सहित नवीन वस्ती में पहुंच कर चौधरियों से मित्रता करके १२५ बीगाह धरती ले ली, और मकान बना कर वहा निवास करने लगा ।

इस वस्ती में यह रीति थी कि एक ही खेत को लगातार दो वर्ष वाहने बीजने के पीछे ढाली छोड़ना पड़ता था, कि धरती निकम्मी न होनी पावे, लोभ पाप का मूल है, पहले पहले तो हरनामसिंह आनंद सहित काल व्यतीत करता रहा, परन्तु अब उस के ध्यान में १२५ बीगाह धरती भी थोडी थी, क्योंकि लालसा तो यह थी कि सारी धरती में गेहूं बोये, धरती ढाली छोड़े तो कहां से छोड़े, फिर उसने देखा

पित करके धन सचय करने लगे है—अतएव वह सदा चिंताग्रस्त रहने लगा।

परिणाम यह हुआ कि उसने बटाई पर धरती बीजनी आरंभ की, यद्यपि बहुत सा धन एकत्र कर चुका था, तथापि तृष्णा बढ़ती ही जाती थी, तीसरे वर्ष ठीक फसल के समय पर जब बटाई वाली धरती में गेहूं पके खड़े थे तो धरती वाले ने अपनी धरती छुड़ाली, फिर तो हरनामसिंह के क्लेश की कोई सीमा न रही, कहने लगा, कि 'यदि आज यह धरती मेरी अपनी होती, तो ऐसा हो सक्ता था'।

अगले दिन मालूम हुआ कि पड़ोसी अपनी १३०० बीगाह धरती १५००) रुपये में बेचता है, सौदा पक्का हो रहा था, कि अकस्मात एक अतिथि आन पहुंचा।

अतिथि—(हरनामसिंह से)—' तुम बड़े ही मूर्ख हो कि १५०० रुपये में १३०० बीगाह धरती मोल लेते हो, विराट देश में क्यों नहीं चले जाते, वहां धरती बड़ी सस्ती है, मैनेवहां १००० रुपये में १३०००

बीगाह धरती मोल ली है, वहां का राजा बड़ा सीधा सादा है, बस वहां जाकर उसे प्रसन्न कर लो, जितनी धरती चाहोगे मिलजायगी'।

हरनामसिंह ने उसका कहना मान लिया, और इस बस्ती में धरती लेने का विचार छोड़ दिया।

५

अगले दिन हरनामसिंह कुटुम्ब को बस्ती में छोड़ कर एक नौकर साथ ले, २००० रुपये पल्लेबाध विराट देश को चलदिया, पांच सौ मील चलने पर वहां पहुंच कर उसने देखा कि सब लोग डेरों में रहते हैं, न कोई धरती बोता है न अन्न खाता है गाय भैंस घोड़े इत्यादि तराई में चरते फिरते हैं स्त्रियां दूध दोह कर मक्खन आदि बना लेती हैं,इसी से वह क्षुधा निवारण कर लेते हैं, सब लोग हंसते खेलते गाते बजाते आनन्द सहित काल व्यतीत कर रहे हैं, कोई झगडा है न लड़ाई सब के सब अनपढ़ और मूर्ख है [illegible]

हरनामसिंह को देख कर वह लोग बडे आनंद हुये, और बडी आओ भगत से उसे एक डेरे में ले गये, हरनामसिंह ने उन्हें कुछ पदार्थ भेट किये।

लोग—(भेट लेकर) 'महाशय, यहा की यह रीति है कि जो कोई हमें कुछ भेट देता है, उसके बदले हम उसे कुछ अवश्य देते हैं, इस कारण आप बतलाइये कि आप क्या चाहते है'।

हरनामसिंह—'मुझे केवल धरती की अभिलाषा है, हमारे देश में वस्ती बढ़ जाने के कारण धरती माता फल देना छोड़ गई है, तुम्हारी धरती अच्छी मालूम पड़ती है'।

लोग—(हंस कर) हा हा! यह तो कुछ भी बात नही, धरती जितनी चाहो लेलो, परन्तु हम अपने राजा से पूछलें'।

—०—

६.

इतने में राजा भी वहां आगया, यह वार्ता सुन कर वह हरनामसिंह से कहने लगा।

राजा—'निस्सन्देह, जितनी चाहो लेलो'।

हरनामसिंह–'मैं आपका धन्यवाद करता हूं, मुझे वहुत नहीं चाहिये–हां इतनी बात है कि धरती नाप कर पट्टा लिख दीजिये, मरना जीना बना हुआ है, लिखत पढ़त विना सौदा ठीक नहीं होता आज आप देदें, कल स्यात आप की सन्तान मुझ से धरती, छीन ले तो क्या बनाऊंगा'।

राजा–'वहुत ठीक धरती नाप कर पट्टा लिख देते हैं'।

हरनामसिंह–दाम क्या होंगे'।

राजा–हम एक बात जानते है दूसरी नहीं, बस एक दिन के एक सहस्र मुद्रा।

हरनामसिंह–'दिन का क्या हिसाब है, मैं नहीं समझा'।

राजा–'भाई साहिब, वीगाह वीगाह हम कुछ नहीं जानते हम तो एक दिन के एक सहस्र मुद्रा लेते है, सूर्योदय से सूर्य्यास्त तक जितना चक्र कोई मनुष्य काटले, उतनी ही धरती उस की हो जाती है'।

हरनामसिंह–'क्या कहा एक दिन में तो मनुष्य बड़ा भारी चक्र काट सक्ता है'।

राजा-हां, तो क्या हुआ, परन्तु एक शरत यह है कि जहां से आरम्भ करोगे, सूर्यास्त से पहले २ तुम्हें वहां ही आना पड़ेगा ।

हरनामसिंह-'भला चक्र का चिन्ह कौन लगायेगा ।

राजा-'तुम कसी हाथ में लेजाना, और गड़े देते जाना, परन्तु यह स्मरण रहे कि जहां से चलो सूर्यास्त से पहले वहीं आ जाओ'।

हरनामसिंह-'बहुत अच्छा'।

यह बातें सुन कर हरनामसिंह अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

—०—

७.

निद्रा कहां, हरनामसिंह रात्रि भर इसी सोच विचार में रहा कि 'मैं ३५ मील का चक्र सहज में काट सक्ता हूं, ओ हो, ३५ मील, फिर तो मैं बड़ा इलाकेदार बन जाऊंगा, सौभाग्य से दिन भी बड़े हैं, ३५ मील धरती बहुत होती है, घटयल धरती तो बेच डालूगा, अच्छी २ आप रख लूगा ।

सवेरा होने पर आंख झपकने की देर थी कि

क्या स्वप्न देखता है, कि विराट देश का राजा सनमुख खड़ा हंस रहा है, पास जाकर हंसने का कारण पूछा तो जान पड़ा कि राजा नहीं वह तो विराट देश की सूचना देने वाला अतिथि है, 'तुम कहां' पर मालूम हुआ वह तो नवीन वस्ती की बात बतलाने वाला वटुक है समीप जाकर देखने लगा तो वटुक कहां, वहां तो साक्षात काल भगवान मुंहवाये खड़े हैं और उन्ह के पैरों में धोती कुरता पहरे एक पुरुष चित्त मरा पड़ा है, झुक कर देखा तो हरनामसिंह है' हरनामसिंह भयभीत हो कर उठ बैठा 'ओ हो—स्वप्न में भी क्या क्या भयंकर दृश्य दिखाई पड़ते है'।

सूर्य्य उगते ही राजा और अपने नौकर सहित वह जंगल को चल दिया।

—o—

८.

जंगल में पहुंच कर राजा ने कहा कि जहां तक दृष्टि जाती है, हमारा ही देश है, [illegible]

आरम्भ करदो, देखो मैं यह छड़ी रख देता हूं, बस सूर्यास्त से पहले २ यहां ही आजना।

हरनामसिंह छड़ी पर एक सहस्त्र मुद्रा रख कर रोटी पल्ले बांध, कसी हाथ में ले, चक्र काटने लगा, तीन मील चलने पर एक पहर दिन चढ़ आया उसे गरमी सताने लगी।

हरनामसिंह–(स्वागत) दिन के चार पहर होते हैं, अभी तो तीन पहर शेष हैं, अभी लौटना उचित नहीं, जूते उतार डालूं, नंगे पैर ठीक चला जायगा, तीन मील और जाकर बाईं ओर फिर जाऊंगा, अहा हा ! यह टुकड़ा तो बहुत ही अच्छा है भला यह कहीं छोड़ने योग्य है, यहा तो ज्यों २ आगे बढ़ता हूं अच्छी ही अच्छी धरती आती जाती है, (फिर कर) ओ हो राजा आदि तो कोई दिखाई नही पड़ता, स्यात दूर निकल आया, अब लौटना चाहिये गरमी अत्यन्त होगई है, भूख और प्यास भी दुख दे रही है।

उसके बाईं ओर लौटते २ मध्यान होगया।

हरनाम सिंह–'अच्छा किंचत विश्राम करलें'।

बैठकर उसने रोटी खाई, पानी पिया और फिर च
प्रारम्भ किया, सूर्य्य का तेज अकथनीय तथा
अत्यन्त थी परन्तु तृष्णा का भूत सिर पर सवा
करे तो क्या करे, कहने लगा, 'क्या चिन्ता है,
दुख, फिर सुख, चलो' चलते चलते दूर निकलग

हरनामसिंह—'यह तो बुरी हुई, मैंने बड़ी
की, अब यदि पूरा घेरा देकर धरती को ठीक चौ
बनाऊंगा तो सूर्यास्त से पहले छड़ी पर प
असम्भव है, अच्छा बकूनही रहने दो, यहीं से
चलो, ऐसा न हो कि सूर्य्य अस्त होजाय और
बीच में ही रह जाऊं'।

—०—

९.

हरमानसिंह नाक की सीध छड़ी की ओर चल
लगा, गरमी के मारे उसका मुंह सूख गया, शरीर ज
उठा, पांव घायल होगये, टागें थक गई; ठहरे कि
प्रकार सूर्य उसका बांधा हुआ तो है ही नहीं कि उ
के कारण खड़ा रह जाय।

हरनामसिंह—'हाय हाय, यह मैने किया क्या मुझे लालचने मार गिराया, सूर्य्य डूबने को हुआ, छडी का अभी तक कहीं पता ही नहीं; करूं तो क्या करू हे भगवान'।

अब साफा सिर से फेंक कसी छोड़ कर वह दौड़ने लगा।

हरनामसिंह—'हाय हाय सारी के लालचमें मैं आधी भी खो बैठा; अब छडी पर पहुंचना असम्भव है'

दौड़ते २ छाती लोहार की धोंकनी बन गई उस का चित धड़कने लगा; वह सिर से पैरों तक पसीने में डूब गया; उसकी टांगें लड़ खड़ागई वह समझा कि अब प्राण गये।

हरनामसिंह—स्वागत : परन्तु क्या हुआ: इतना कष्ट उठाने पर यदि मैं यहीं ठहर जाऊंगा तो लोग मुझे महा मूर्ख समझेंगे; दौडो; जहा तक बन सके छडी पर पहुंचो'।

इतने में उसे विराट देश वासियों का शब्द सुनाई देने लगा; सूर्य्य डूबने को हुआ; लाली छा गई; छडी सामने दिखाई देने लगी, पास राजा बैठा

बैठकर उसने रोटी खाई, पानी पिया और फिर चलना प्रारम्भ किया, सूर्य्य का तेज अकथनीय तथा गरमी अत्यन्त थी परन्तु तृष्णा का भूत सिर पर सवार था करे तो क्या करे, कहने लगा, 'क्या चिन्ता है, अब दुख, फिर सुख, चलो' चलते चलते दूर निकलगया।

हरनामसिंह—'यह तो बुरी हुई, मैंने बड़ी चूक की, अब यदि पूरा घेरा देकर धरती को ठीक चौकोर बनाऊंगा तो सूर्य्यास्त से पहले छड़ी पर पहुंचना असम्भव है, अच्छाअकूनहीं रहने दो, यहीं से लौट चलो, ऐसा न हो कि सूर्य्य अस्त होजाय और मैं बीच में ही रह जाऊं'।

—०—

९.

हरमानसिंह नाक की सीध छड़ी की ओर चलने लगा, गरमी के मारे उसका मुंह सूख गया, शरीर जल उठा, पाव घायल होगये, टांगें थक गईं; ठहरे किस प्रकार सूर्य उसका बांधा हुआ तो है ही नहीं कि उस के कारण खड़ा रह जाय।

हरनामसिंह—'हाय हाय, यह मैंने किया क्या मुझे लालचने मार गिराया, सूर्य्य डूबने को हुआ, छड़ी का अभी तक कहीं पता ही नहीं; करूं तो क्या करूं हे भगवान '।

अब साफा सिर से फेंक कसी छोड़ कर वह दौड़ने लगा।

हरनामसिंह—'हाय हाय सारी के लालचमें मैं आधी भी खो बैठा; अब छड़ी पर पहुंचना असम्भव है'

दौड़ते २ छाती लोहार की धोंकनी बन गई उस का चित धड़कने लगा; वह सिर से पैरों तक पसीने में डूब गया; उसकी टांगें लड़ खड़ागई वह समझा कि 'अब प्राण गये।

हरनामसिंह—स्वागत : परन्तु क्या हुआ : इतना कष्ट उठाने पर यदि मैं यहीं ठहर जाऊंगा तो लोग मुझे महा मूर्ख समझेंगे; दौड़ो; जहां तक बन सके छड़ी पर पहुंचो '।

इतने में उसे विराट देश वासियों का शब्द सुनाई देने लगा; सूर्य डूबने को हुआ; लाली छा गई; छड़ी सामने दिखाई देने लगी, पास राजा बैठा

लगा; उन्होंने आ कर राजा से निवेदन किया, कि महाराज हमारी पुस्तकों में इस दाने की कहीं व्याख्या नहीं मिलती; किसी किसान को बुलाकर पूछना चाहिये॥

राजा ने सेवक भेज कर एक किसान को बुलाया किसान बूढ़ा, कुबड़ा, पीत वदन, मुँह में एक दान्त न पेट में आंत, आंखों से अन्धा, कानों से बहरा, दोनों हाथोंमें लाठियां लिये गिरता पड़ता राजा के सामने आया

राजा—(हाथ में दाना देकर)" तुम बतला सक्ते हो कि ऐसा दाना किस देश में उत्पन्न होता है; तुम ने ऐसा दाना कभी मोल लिया है अथवा अपने खेत में बोया है :—

कि—(दाना टटोल कर) पृथ्वीनाथ; मैंने ऐसा दाना कभी नही देखा; न कभी मैंने मोल लिया न कभी बोया, मैंने तो यही साधारण दाने देखे हैं, स्यात मेरे पिता को कुछ मालूम हो, उस से पूछ दीखये।

YOHPA राजा ने उसके पिताको बुला भेजा, पिता के हाथ में एक लाठी थी वह बेटे से अच्छा था आंख कान भी किञ्चित ठीक थे।

राजा—(दाना दिखला कर)' बाबा यह दाना

किस देश का है तुमने ऐसा दाना कभी खरीदा अथवा बोया है'।

पिता—'महाराज मैने ऐसा दाना कभी नहीं बोया, मोल लेने के विषय में मेरी यह प्रार्थना है कि मेरे समय में रुपया प्रचलित न था। अनाज के बदले में ही सब व्यवहार चलता था, हां इतना कह सक्ता हूं, कि हमारे समय में आज कल की अपेक्षा दाना बड़ा पैदा होता था, स्यात मेरे पिता को कुछ ब्यौरा हो, उसे बुलवा भेजिये'।

राजा ने उस के पिता को बुलाया, वह हट्टा कट्टा, जवान नख सिख से ठीक, हाथ में लाठी न सोटा राजा के सामने आया राजा ने उसे दाना दिखायों और पहले की भाति वही प्रश्न किया।

बूढ़ा—(हाथ में दाना लेकर) स्वामी, यह दाना मैने चिर काल पीछे देखा है (चख कर) हां, ठीक नही है'।

राजा—'भला यह तो बतलाओ कि ऐसा दाना कब और कहां होता था, तुम ने ऐसा दाना मोल ले

कर कभी अपने खेत मे बोया था’।

बूढ़ा—‘मेरे समय में सब जगह ऐसा ही दाना होता था, मैं ऐसे ही दानों से पला हूं, हमारे खेतों में सर्वदा ऐसे ही दाने उगा करते थे’।

राजा—‘परन्तु उन्हें तुम कहीं से मोल लाया करते थे अथवा क्या’।

बूढ़ा—(हंस कर) ‘महाराज, उस समय मोल लेने अथवा बेचने का पाप कर्म्म कोई नही करता था, हम रुपये का नाम तक भी नहीं जानते थे, सब के पास मुक्ता अनाज होता था’।

राजा—‘तुम्हारे खेत कहा थे’।

बूढ़ा—‘परमात्मा की पृथ्वी हमारे खेत थे, जो कोई जहां चाहता था हल चला सक्ता था, धरती पर किसी का ममत्व न था, सब लोग अपने हाथों की कमाई से पेट भरते थे’।

राजा—‘अच्छा पहले यह बतलाओ कि उस समय धरती ऐसा बड़ा दाना क्यों उत्पन्न करती थी, अब क्यों नहीं करती, दूसरे तुम्हारा पोता दो लाठियों के सहारे चलता है, तुम्हारा बेटा एक के,

तुम विना सहारे चलते हो तुम युवक प्रतीत होते हो, वह बूढ़े, यह क्या बात है'।

बूढ़ा—स्वामी, इस का कारण यह है कि इस समय मनुष्यों ने आप काम करना छोड़ दिया है, दूसरों की कमाई से अपना उदर पालन करते हैं, प्राचीन समय में प्राणी परमात्मा की आज्ञा पालन करके अपने हाथों से प्राप्त की हुई वस्तु को अपनी वस्तु समझते थे, दूसरों के पुरुषार्थ से उपस्थित भये पदार्थों की लालसा नहीं करते थे'।

सोलहवीं कहानी

१.

किसी महात्मा के वरदान से एक अति निरधन ज़िमीदार के गृह में एक पुत्र उत्पन्न हुआ, महात्मा ने यह बतला दिया था कि जन्म होते ही किसी पुरुष को बालक का धर्म्म पिता और किसी स्त्री को उस की धर्म्म माता बना देना, नहीं तो बालक जीवत न रहेगा।

पुत्र जन्म के अगले दिन ज़िमींदार पड़ौसी के पास गया कि मेरे बालक के धर्म्म पिता बन जाइये, परन्तु उसने यह उत्तर दिया कि मैं ऐसे कंगाल के पुत्र का धर्म्म पिता नहीं बनता, इस पर बिचारा किसान सारे गांव में फिरा, पर किसी ने उसके पुत्र का धर्म्म पिता बनना स्वीकार न किया, अतएव वह निराश होकर दूसरे गांव को चल दिया, राह में एक महा पुरुष से उसकी भेट हुई।

महात्मा—'क्यों भाई ज़िमींदार कहां जाते हो'।

ज़िमींदार—भाई, कहां जाते हैं, परमात्मा ने इस बुढ़ापे में आंखों का तारा, जीवन का सहारा, नाम लेवा पानी देवा एक पुत्र दिया है, उसके धर्म्म पिता माता बनाये बिना उसका जीना असम्भव है, क्योंकि महात्मा का बरदान ही ऐसा है, निर्धन होने के कारण कोई उसका धर्म पिता नहीं बनता, अब किसी दूसरे ग्राम में जाता हूं, स्यात कोई दया करके बालक का धर्म्म पिता बन जाये'।

महात्मा—'ओह, यह क्या बात है, मैं बन जाता हूं'

जिमींदार—(प्रसन्न हो कर) मैं आप का धन्यवाद करता हूं, परन्तु अब उसकी धर्म्म माता कौन बने '।

महात्मा—'यहां से थोड़ी दूर पर एक नगर है, चौराहे पर एक धनाढ्य बनिक का घर है, वहां चले जाओ द्वार पर ही तुम्हारी उस से भेट हो जायगी, यह सब वृतान्त उसे सुना कर कहना कि वह अपनी पुत्री को तुम्हारे पुत्र की धर्म्म माता बना दे'।

ज़िमींदार—'ऐसे धनी पुरुष से यह वार्ता मैं किस प्रकार कह सक्ता हूं, वह तो मुझ से स्यात घृणा करे '।

महात्मा—'नहीं कदापि नहीं, तुम तुरन्त चले जाओ '।

ज़िमींदार उस सौदागर के पास पहुंचा, उस ने बड़े हर्ष से अपनी पुत्री को उस के पुत्र की धर्म्म माता बना दिया।

२.

धर्म्म के माता पिता वन जानेके उपरांत, वालक सुख पूर्वक कुछ काल पा कर बडा होगया, यह बड़ा पराक्रमी और बुद्धिमान था, दस वर्ष की अवस्था होने पर उस की ऐसी संस्कारी बुद्धि थी कि जो विद्यां अन्य वालक पांच वर्ष में सीख सक्ते थे, वह एक वर्ष में सीख लेता था।

दैवी संयोग से दीपमाला का त्यौहार आउपस्थित हुआ, वालक माता पिता की आज्ञा लेकर नगर में अपनी धर्म्म माता को प्रणाम करने के वास्ते गया, संध्या समय घर में लौट आने पर वह पिता से कहने लगा।

वालक—'पिता जी, इस त्यौहार पर मै अपनी धर्म्म माता को तो प्रणाम कर आया, परन्तु धर्म्म पिता का दर्शण करना भी आवश्यक है, इस कारण कृपा करके मुझे उनका निवासस्थान भी सूचित कीजिये'।

पिता—'बेटा, हमें स्वयं इस का बडा शोक है कि हम तुम्हारे धर्म्म पिता का निवास स्थान नहीं जानते धर्म्म पिता बन जाने के पश्चात हम ने उन्हें कभी नहीं देखा, क्या जाने मर गये अथवा जीते हैं'।

बालक—'पिता जी मैं उन के दर्शन अवश्य करूंगा, आप कृपा कर मुझे आज्ञा दीजिये, क्या हुआ, उद्योग करने से कहीं न कहीं भेट हो ही जायेगी।

माता पिता ने बालक को आज्ञा देदी और उसने घर से बाहर निकल कर जंगल की राह ली।

३.

अकस्मात राह में एक महात्मा दिखाई पड़े।

महात्मा—'बेटा—कहा जाते हो'।

बालक—'अपने धर्म्म पिता की खोज में, दीपमाला के त्यौहार पर मैं अपनी धर्म्म माता को प्रणाम करने गया था, घर लौटने पर मैंने अपने माता पिता से यह इच्छा प्रकट की कि मैं अपने धर्म्म पिता

का दर्शन किया चाहता हूं, उन्होंने कहा कि हमें उनका कुछ पता नहीं मुझे दर्शन की अत्यन्त अभिलाषा थी, इस कारण माता पिता की आज्ञा लेकर मै अपने धर्म्म पिता को ढूंढने जाता हूं।

महात्मा—'वाह वाह, लो तुम्हारा 'काम बन गया, मै ही तुम्हारा धर्म्म पिता हूं'।

बालक—(प्रसन्न मुख) 'तो अब आप किधर जा रहे है यदि हमारे गृह में चलने का विचार है तो वहां चलिये, नहीं तो मै तुम्हारे साथ चलूंगा।

महात्मा—' मुझे इस समय तुम्हारे घर चलने का अवकाश नहीं, और बहुत काम करने है, मै कल निज स्थान को लौटूंगा, तुम कल वहां आजाना'।

बालक—'मै आपका घर नहीं जानता, आऊंगा कहां से'।

महात्मा—'कल को प्रातः काल अपने घर से बाहर निकल कर सीधी पूर्व दिशा की राह लेना, कुछ दूर चल कर तुम्हें जंगल मिलेगा, और वहां एक घाटी है, उस घाटी में बैठ कर किञ्चित विश्राम

कर के देखना कि क्या होता है, जो कुछ देखो उसे भूलना नहीं, फिर वहां से आगे चल देना, जंगल समाप्त होने पर एक बाग़ आयेगा, उस में सुनहरी छतवाला स्थान मेरा घर है, मै द्वार पर ही तुम्हें मिल जाऊंगा।

बालक—'जो आज्ञा'।

यह कह कर धर्म्म पिता अन्तर ध्यान होगया और बालक अपने घर लौट आया।

४.

अगले दिन प्रातः काल बालक ने जंगल की राहली, पूर्व दिशा की ओर चलते २ वह घाटी में पहुच गया, देखा कि बीच में चील का एक वृक्ष है, उस की शाखा में रस्से से बधा हुआ बान के वृक्ष का एक बोझल लक्कड़ लटक रहा है और ठीक उस के नीचे सहत का भरा हुआ एक कुण्ड रक्खा है बालक बैठ कर देखने लगा, इतने में चार बचों के संग उसे एक रीछनी आती दिखाई दी, वह सब दौड़

कर सहत कुण्ड के पास पहुंचे, रीछनी लटकते हुये लक्कड़ को सिरसे धकेल कर सहत खाने लगी, और बच्चों ने भी वैसा ही किया, इतने में लक्कड़ उलट कर बच्चों के लगा, रीछनी ने उसे फिर धक्का दिया, वह उलट कर फिर बच्चों की पीठ पर लगा, बच्चे भाग गये, रीछनी ने पोरे को फिर बड़े बल से धक्का दिया उस समय बच्चे आकर सहत खाने लग गये थे, पोरा उलट कर एक बच्चे के ऐसा लगा कि वह मर गया रीछनी को क्रोध चढ़ गया, उसने रिसिया कर पोरे को ऐसा झटका दिया कि रस्सा टूट गया, पोरा रीछनी के सिर पर गिरा और वह मर गई ।

५.

बालक इस दृश्य का तात्पर्य्य कुछ न समझा और वहां से चल दिया, बाग़ में पहुंच कर फाटक पर धर्म्म पिता से उसकी भेट होगई, वह बालक को भीतर लेगया, बालक ने ऐसा सुन्दर और रमनीक स्थान कभी काहे को देखो था—धर्म्म पिता ने उसे

सारा महल दिखाया, और एक मोहरबंद द्वार पर खडे होकर कहने लगा—

धर्मपिता—'बेटा, देखो इस द्वार में ताला नहीं, केवल मोहर लगी हुई है, यह द्वार खुल सक्ता है, परतु तुम कदाचित इसके खोलने का ध्यान न करना, यावत्काल चाहो, इस स्थान में निवास करो, इस द्वार को कभी न खोलना, यदि भूल कर कभी खोल बैठो तो रीछनी वाला दृश्य स्मरण रखना, भूल न जाना—'

अगले दिन धर्मपिता तो कहीं बाहर चला गया, धर्म पुत्र वहा आनन्द पूर्वक निवास करने लगा, रहते २ ३० वर्ष व्यतीत होगये, एक दिन मोहर वाले द्वार पर खड़ा होकर वह विचार करने लगा कि धर्मपिता ने इस द्वार को खोलने का निषेध क्यों किया है, देखूं तो इसके भीतर है क्या।

धक्का देने पर मोहर टूट गई, द्वार खुल गया, देखा कि अन्दर बड़ा दालान है, बीच में एक सिंहासन बिछा हुआ है, और उस पर एक गदा रक्खी हुई है धर्मपुत्र ने झट से सिंहासन पर चढ़कर गदा

हाथ में उठा ली, गदा उठाते ही दालान तो लो
होगया, उसे सारा संसार दृष्टि गोचर होने लग
कहीं समुद्र, कहीं धरती, कहीं जंगल, कहीं पहा
कहीं बस्ती, कहीं उजाड, कहीं पुण्यात्मा, कहीं पाप
त्मा, सब के सब दिखाई देने लगे, अब धर्मपुत्र
विचारा कि चलो अपने खेत तो देखें कि अना
कैसा पैदा हुआ है देखता क्या है कि खेती पक
खडी है और दूलो चोर रात को चोरी से फ़स
काटकर अपने घर लेजाना चाहता है—धर्मपुत्र
सोचा कि यह तो सारी खेती ही चुरा लेजायग
मुझे पिता को जगा देना उचित है, अतएव उस
अपने पिता को जगा दिया, धर्मपुत्र के पिता
पड़ोसी एकत्र करके खेत में पहुंच कर दूलो को पक
लिया और उसे कारागार में भिजवा दिया।

तब धर्मपुत्र ने विचारा कि चलो अपनी धर्म
माता को देखें कि वह क्या करती है, धर्म माता क
विवाह एक सौदागर से हो चुका था. इस समय व
सोई पड़ी थी, उसका पती उसे सोती छोड़ कर किस

पर स्त्री के पास चल दिया था, धर्म्मपुत्र ने यह दशा देखकर धर्म्म माता को जगा दिया और कहा कि तुम्हारा पती इस समय अमुक स्त्री के पास गया है, धर्म्म माता उस स्त्री के घर जाकर अपने पति को निकाल लाई और अपनी सौतन को बहुत मारा।

तद उपरांत धर्म्मपुत्र ने देखा कि उसकी माता झोंपडे में सोई हुई है, चोर भीतर घुसकर उसका संदूक तोड़ने लगा है, माता जाग उठी, चोर उसे मारने दौडा, धर्म्मपुत्र ने क्रोध से चोर के गदा मारी, चोर तुरंत मरगया और गदा हाथ से छूट गई—

बस फिर क्या था, गदा छूटते ही संसार का दृश्य जाता रहा, वही दालान आ उपस्थित हुआ, और बाहर से धर्म्म पिता भी आगया, उसने धर्म्म-पुत्र को सिंहासन से नीचे उतार कर कहा—

धर्म्मपिता—अंतकाल तुमने मेरी आज्ञा भंग की, देखो, पहला पाप तुमने यह किया कि मोहर तोड़ी, दूसरा पाप यह कि सिंहासन पर बैठकर मेरी गदा

हाथ में ली, तीसरा पाप यह कि गदा हाथ में लेकर तुमने जगत में इतना पाप फैला दिया कि यदि तुम आधघंटा और वहां बैठे रहते तो आधा संसार नष्ट हो जाता, देखो मै स्वयं सिंहासन पर बैठकर तुम्हें दिखलाता हूं कि तुमने क्या कर डाला है।

तद् पश्चात सिंहासन पर बैठकर गदा हाथमें ले, धर्म्मपिता धर्म्मपुत्र को संसार का दृश्य दिखला कर कहने लगा—

धर्म्मपिता–'देख, तूने अपने पिता की क्या दुर्दशा करदी है, दूलो चोर कारागार में रहकर सब प्रकार के दुष्ट कर्म्म सीख आया है, अब उसका सुधार असम्भव है, वह तेरे पिता के दो बैल चुरा चुका है, इस समय वह खल्यान में आग लगाने को त्यार है, यह सब तेरी ही करतूत है—

धर्म्मपुत्र अपने पिता का खल्यान जलता देख कर शोकातुर हुआ–

धर्म्मपिता–' देख,अब इधर देख,यह तेरी धर्म्म माता का पति है, इस ने पर स्त्री गामी हो कर

अपनी विवाहता स्त्री को त्याग दिया है, इस की पहली भिया वेश्या बन गई है, तेरी धर्म्म माता दुख से पीडत होकर मद्य सेवनी हो गई है—देखा—अच्छा अब अपनी माता को देख कि वह क्या कह रही है—

'धर्म्मपुत्र की माता—' क्या अच्छा होता यदि चोर मुझे उस रात मार डालता, मै इन पापों से तो बच जाती '।

तब धर्म्म पिता ने धर्म्म पुत्र को कारागार का दृश्य दिखाया कि दो सिपाही एक डाकू को पकड़े खड़े है ।

धर्म्म— देख इस डाकू ने दस मनुष्यों का वध किया है, उचित यह था कि वह अपने पाप कर्म्मों पर आप पश्चाताप करता परन्तु तू ने उसे मार कर उस के सारे पाप अपने ऊपर ले लिये, पाप कर्म्म का फल भोगना अवश्य है, यदि तू रीछनी वाला दृश्य स्मर्ण रखता तो तेरी यह दशा न होती, देख रीछनी ने पहली बार पोरे को धकेल कर अपने बच्चों को डराया, फिर धकेल कर एक बच्चे का वध किया,

तीसरी वार अन्त में धकेल कर आप प्राण खो बैठी वही तूने किया, अब उपाय यही है कि तीस वर्ष तप करके तू डाकू के पापों का प्रायश्चित कर नहीं तो उसके बदले तुझे नरक भोगना पड़ेगा'।

धर्मपुत्र—डाकू के पापों का प्रायश्चित मैं किस भांति कर सक्ता हूं।

धर्म्म पिता—' जितना पाप तूने जगत में फैलाया है उस का दूर कर देना ही डाकू और अपने पापों का प्रायश्चित कर देना है '।

धर्म्म पुत्र—' मैं संसार से पाप किस प्रकार दूर कर सक्ता हूं '।

धर्म्म पिता—' पूर्व दिशा को जाने पर तुझे खेत में कुछ मनुष्य मिलेंगे, निज बुद्धि अनुसार उन्हें शिक्षा देना, और रास्ते में जो कुछ देखे उसे स्मरण रखना, चौथे दिन तुझे एक जंगल मिलेगा, वहां एक कुटिया है, उस में एक साधू निवास करता है, उसे यह सारा वृत्तान्त सुना देना वह तुझे प्रायश्चित करने की क्रिया बतला देगा, उसकी आज्ञानुसार तप करने से तेरे पाप निवृति हो जायेंगे '।

अतएव धर्म्म पुत्र यह वार्ता सुन कर वहां से चल दिया।

७.

राह में धर्म्म पुत्र यह विचार करता जा रहा था, कि विना अपने ऊपर पाप लिये, संसार से पाप किस प्रकार नष्ट हो सक्ता है, पापियों को कारागार में भेजने अथवा वध करने से ही जगत में पाप दूर हो सक्ता है, और कोई उपाय नहीं '।

देखता क्या है कि खेत में एक बछड़ा घुसा हुआ है, लोग उसे बाहर निकाल रहे हैं, वह निकलता नहीं, एक बुढिया बाहर खड़ी पुकार रही है कि मेरे बछड़े को क्यों मारते हो '।

धर्म्म पुत्र ने जिमीदारों से कहा कि तुम क्यों वृथा हल्ला मचाते हो, बाहर आजाओ, बुढिया आप अपने बछड़े को बुला लेगी।

किसान बाहर निकल आये, बुढिया ने बछड़े को पुकारा वह झट दौड़ कर बाहर आगया और बुढ़िया से प्यार करने लगा।

धर्म्मपुत्र इतना तो समझ गया कि 'पाप पापसे बढ़ता है, मनुष्य पाप कर्म्म द्वारा पाप नष्ट करने का जितना यत्न करते है उतना ही पाप फैलता है, परन्तु इसे नष्ट क्यों कर करूं, देखो बुढ़िया के पुकारने पर बछड़ा बाहर न निकलता तो क्या होता।

८.

अगले दिन धर्म्मपुत्र एक गांव में पहुंचा, किसी किसान के गृह में जाकर चारपाई पर बैठ गया, वहा एक स्त्री मैले वस्त्र से पत्थर की चौकी साफ़ कर रही थी, भला चौकी साफ़ किस प्रकार हो, जितना साफ़ करती थी चौकी उतनी ही और मैली हो जाती थी।

धर्म्म पुत्र—'माई यह क्या करती हो'।

स्त्री—' चौकी शुद्ध करती हूं, मैं तो थक गई, यह शुद्ध होने में ही नही आती '।

धर्म्म पुत्र—' शुद्ध कैसे हो, वस्त्र तो मैला है, पहले वस्त्र धो कर स्वच्छ कर लो फिर चौकी तुरन्त साफ़ होजायगी'।

स्त्री ने वैसाही किया, चौकी साफ होगई, अगले दिन धर्म्म पुत्र एक जंगल में पहुंचा, देखा कि कुछ मनुष्य लोहे की लठ्ठ को मोड़ रहे है, वह नहीं मुड़ती मनुष्य आप चक्कर खाये चले जाते है।

बात यह थी कि जिस खम्भे के साथ उन्होंने लठ्ठ का सिरा बांध रक्खा था, वह स्वय चलायमान था, अचल नहीं था, लठ्ठ मुडे किस प्रकार लठ्ठ के साथ २ खम्भा चक्कर खाता जाता था, और उस के साथ साथ मनुष्य भी चक्र खाते जाते थे।

धर्म्म पुत्र—'तुम यह क्या करते हो'।

मु०—'देखते नहीं कि क्या करते हैं, हम लठ्ठ मोड़ रहे हैं, परिश्रम करते २ हारगये परन्तु यह लठ्ठ मुडती ही नहीं'।

धर्म्म पुत्र—'मुडे किस भांति, खम्भा तो फिर जाता है, पहले खम्भे को स्थिर करो फिर लठ्ठ तुरन्त मुड जायगी'।

किसानों ने वैसाही किया, दूसरे गड़े दिन धर्म्म पुत्र को कुछ चरवाहे मिले. देख

शीत निवार्णार्थ वह आग जला रहे हैं—सूखी लकड़ियां एकत्र करके उन्होंने आग जलाई, अभी आग जली ही थी कि ऊपर से उन्होंने गीला घास डाल दिया, आग बुझ गई, चरवाहों ने कई वेर ऐसा ही किया परन्तु आग न जली।

धर्म्म पुत्र—' भाई किंचित धीरज धारन करो पहले आग को भली भांति दहक लेने दो, प्रचण्ड हो जाने पर जो डालोगे भस्म होजायगा'।

चरवाहों ने वैसा ही किया, आग जलने लगी परन्तु धर्म्म पुत्र इन दृश्यों का तात्पर्य कुछ नहीं समझा।

९.

चौथे दिन धर्म्म पुत्र साधू की कुटिया पर पहुंच गया।

साधू—' कौन'।

धर्म्म पुत्र—'पापी महान पापी, अपने और दूसरों के पापों का प्रायश्चित करने आप के पास आया हूं'।

सा०—(बाहर आकर) 'कौन से पाप' ।

धर्म्म पुत्र ने आदि से लेकर अन्त तक सारा वृतान्त साधू को कह सुनाया और बोला—'प्रभो मैं यह तो समझ गया कि पाप से पाप दूर नहीं होता, वरच बढ़ता है, परन्तु पाप नष्ट किस प्रकार हो सक्ता है, कृपा कर यह उपदेश कीजिये '।

साधू—' अच्छा मेरे साथ आओ '।

जगल में जाकर साधू ने धर्म्म पुत्र को कुठार दे कर कहा कि इस वृक्ष को काट कर इस केतने के तीन टुकड़े करके उन्हें आग से झुलस दो—धर्म्म पुत्र ने वैसा ही किया, तब साधू बोला, ' अच्छा अब इन्हें यहा धरती में गाड़ दो, सामने पहाड़ी के नीचे एक नदी बहती है, वहा से मुंह में पानी भर भरला कर इन्ह तीनों टुंडों को सींचना आरम्भ करो, पहला टुंड स्त्री वाला है, दूसरा किसानों तीसरा चरवाहों वाला, जब तीनों टुंड हरे हो जायं तो जान लेना कि तेरी तपस्या पूर्ण हो गई '।

यह कह कर साधू कुटिया में चला गया।

१०.

धर्म्म पुत्र टुंडों को पानी देकर सन्ध्या समय
कुटिया में पहुंचा तो देखा कि साधू मरा पडा
उस ने साधु का दाह कर्म्म किया।

लोगों में यह वार्ता प्रसिद्ध हो गई कि साधू का
न्त होगया, उस ने धर्म्म पुत्र को अपना चेला
कर कुटियामें छोड़ दिया है, साधू की उस प्रान्त
ाड़ी मानता थी, इस कारण धर्म्म पुत्र को अन्न
ी का कोई घाटा न था।

एक वर्ष वीत जाने पर दूर २ यह चरचा फैल
कि धर्म्म पुत्र नित्य मुंह में पानी भर भर टुंडों
सींच कर कठिन तपस्या करता है, फिर क्या
चढ़ावा चढ़ने लगा, संसारी पुरुष स्वार्थ वश
२ से उसके पास आने लगे धर्म्मपुत्र पूजने लगा
न्तु उस का यह नियम था कि जो आता अनाथों
वांट देता, अपने कारण केवल उदर पूरण अन्न
रखता और कुछ नहीं।

ढुंढ सींचते २ उसे दो वर्ष होगये, परन्तु हरा एक भी नहीं हुआ, एक दिन घोडे पर सवार कुटिया के बाहर उसे कोई मनुष्य जाता दिखाई दिया, धर्म्म पुत्र ने बाहर आकर पूछा।

धर्म्म पुत्र—'तुम कौन हो'।

पु०—'मैं डाकू हूं, मनुष्यों को वध करके उन का धन चुरा कर बड़ा आनन्द करता हूं'।

धर्म्म पुत्र—(भय से स्वागत) 'इस का सुधार असम्भव है, और लोग तो मेरे पास आकर अपने पापों पर पश्चाताप करते है, यह तो अपने पापों की प्रशंसा करता है, हाय हाय, यदि यह डाकू यहा आया जाया करेगा तो लोग डरके मारे मेरे पास आना छोड देंगे मुझे अन्न पानी कहा से मिलेगा— (प्रकट) तेरी वार्ता सुन कर मुझे बड़ा आश्चर्य होता है लोग तो मेरे पास आकर अपने पाप कर्म्मों को स्मरण करके पछताते है, तू उन पर घमण्ड करता है, स्यात तुझे परमेश्वर का भय नहीं, देख यहा तेरे आने से लोग भय खाकर मेरे पास आना छोड़ देंगे, इस कारण यहा से चला जा, फिर यहा न आना'।

डाकू—' मैं परमात्मा से नहीं डरता, रही चोरी इस में पाप ही क्या है, तू तपस्या से पेट भरता है, मैं चोरी से, पेट पालन सब को करना पड़ता है, यह बातें तू उन्हीं मूर्खों को सिखला, मुझे क्या सिखलाता है, परमात्मा के नाम पर कल दो मनुष्य और वध कर डालूंगा, बस कि और कुछ भी मैं तेरे रुधिर से अपने हाथ रंगने नहीं चाहता, देख फिर मेरे मुंह न लगना '।

यह कह कर डाकू वहां से चल दिया।

११.

धर्म्म पुत्र को वहां रहते २ आठ वर्ष बीत गये, डाकू के भय से लोगों ने कुटिया पर आना त्याग दिया, धर्म्म पुत्र को इस का बड़ा शोक हुआ एक समय उसके चित्त में यह स्फुरना हुई।

धर्म्म पुत्र—(स्वागत) ' डाकू सत्य कहता था, मैंने तो निस्सदेह तपस्या को जीवका बना रक्खा है, साधू ने तो तप करने को कहा था, अच्छा तप किया कि महन्त बन कर अपने तई पुजवाने लग गया

जब लोग यहां आकर मेरी स्तुति करते है तो मै प्रसन्न होता हूं, जब नही आते तो दुख मानता हू, क्या इसी का नाम तपस्या है, मान और प्रतिष्ठा के लोभ में पाप नष्ट तो क्या करने थे, उलटा और सचय कर लिये, वन अब उपाय यही है कि विरक्त हो कर एकान्त बैठ कर प्रथम अन्तः करण शुद्ध करू तब कुछ बनेगा, यूं नही '।

यह निश्चय करके वह कुटिया छोड़ कर जंगल को चल दिया, राह में उस की फिर डाकू से भेट हुई।

डा—' क्यों, आज कहा चले '।

धर्म्म पुत्र—'एकान्त सेवन करने मैं अब ऐसे स्थान में निवास करना चाहता हू जहां कोई न आवे'।

डा०—' तो पेट कहा से भरोगे' ।

धर्म्म पुत्र–'जैसी ईश्वर इच्छा, देखा जायगा' ।

डाकू तो चल दिया, धर्म्म पुत्र सोचने लगा 'मैने उसे उपदेश क्यों न किया, आज तो उस का मुख शात था, स्यात कुछ सुन कर वह सत मार्ग चलने का उद्योग करता ।

धर्म्म पुत्र—(डाकू को पुकार कर) 'ओ भाई डाकू, सुनो परमात्मा सर्वत्र व्यापक है, अब भी मान जाओ, यह दुष्ट कर्म्म त्याग दो'।

डाकू यह सुन कर छुरा निकाल कर धर्म्मपुत्र को मारने दौड़ा धर्म्म पुत्र डर कर झट से जंगल में भाग गया।

डाकू-'जा, चला जा, छोड़ देता हूं, यदि फिर सामने आया तो मारही डालूंगा'।

सन्ध्या समय धर्म्म पुत्र जब ठुंड सींचने गया तो उस ने देखा कि स्त्री वाला ठुंड हरा हो गया है।

१२.

अब धर्म्म पुत्र विरक्त हो कर एकान्त रहने लगा, एक दिन क्षुधा वश होकर कंद मूल फल खाने गुफा से बाहर निकला तो देखता क्या है कि सामने वृक्ष पर साफे में बन्धी रोटी लटक रही है, रोटी लेकर वह गुफा में लौट आया।

जब कभी भूख सताती, और वह गुफा से बाहर आता तो उसे वृक्ष पर से रोटी मिल जाती, वह सुख

पूर्वक काल व्यतीत करने लगा, उसे केवल यह भय बना रहता कि ऐसा न हो तपस्या पूर्ण होने से पहले ही डाकू मुझे मारडाले, यदि कभी डाकू की आहट पाता तो वह गुफा में छिप जाता, दस वर्ष बीत जाने पर वह एक दिन ठुंडों को पानी दे रहा था; कि उस के चित्त में यह विचार उत्पन्न हुआ, मैं मृत्यु से डरता हूं, यह भी पाप है, कौन जाने, स्यात प्राणान्त होने से ही मैं पापों से निवृत्त होजाऊं; हानि लाभ सब परमात्मा के हाथ है, मनुष्य किसी का कुछ नहीं बिगाड़ सक्ता'।

इस विवेक के उत्पन्न होते ही वह अभय होकर डाकू की खोज में चला; थोड़ी दूर जाने पर उसे सामने से डाकू आता दिखाई पड़ा, देखता क्या है कि डाकू ने हाथ पैर बांधे एक मनुष्य को घोड़े पर अपने पीछे बिठा रक्खा है।

धर्म पुत्र—'भाई डाकू यह कौन है, इसे कहां लिये जाते हो'।

डाकू—यह एक धनाढ्य सौदागर का पुत्र है, अपने पिता के धन का पता नहीं बतलाता, अब इसे

जंगल में लेजा कर किसी वृक्ष से बाध कर इतने चाबुक मारूंगा कि आपही वतला देगा'।

धर्म पुत्र–' नहीं २ ऐसा मत करो, इसे छोड़ दो'

डा०–'क्यों, क्या तुम्हारा जी भी मार खाने को चाहता है, हटो अपना रास्ता लो नहीं तो अभी मार डालूंगा।

धर्म पुत्र–(निडर होकर) मै अभय हूं, मरने से नहीं डरता वस परमात्मा की यही आज्ञा है कि इस मनुष्य को छोड़ दो'।

डाकू—' अच्छा छोड़ देता हू: देखो मैंने कितनी वार तुम से कहा है कि तुम मेरे सामने न आया करो, परन्तु तुम नहीं मानते '।

धर्म पुत्र—भाई अब भी डाकूपना छोड़दो'।

डाकू ने कुछ न सुना वह घोड़ा दौड़ा कर वहां से चल दिया, मनुष्य प्रसन्न होकर धर्म पुत्र का धन्यवाद करता हुआ अपने घर को लौट गया।

सन्ध्या समय धर्मपुत्र ने जा कर देखा कि किसानों वाला ठुड हरा होगया है।

१३.

दस वर्ष और बीत गये, धर्म्म पुत्र शांत स्वरूप राग द्वेप से रहित, अभयपद को प्राप्त होकर, आनंद में मग्न बैठा एक दिन यह विचार करने लगा ।

धर्म्म पुत्र—'अहा हा, परमात्मा कैसा कृपालु और दयालु है, उसने मनुष्यों के कारण क्या क्या अद्भुत पदार्थ उपस्थित किये है, तिस पर भी मनुष्य दुख से क्लेशित है, क्यों मेरी समझ में नही आता कि मनुष्य सुख मे जीवन क्यों व्यतीत नही करते, मेरे ध्यान में तो केवल अज्ञान ही इसका मूल कारण है, यदि प्रेम भाव से प्राणियों को सद् उपदेश किया जावे तो उन्हें सुख मिल सक्ता है एकांत रहना पाप है मेरा धर्म है कि इस तप से जो कुछ मुझे प्राप्त हुआ है दूसरों पर उसको प्रकट करू'।

उस समय उसका चित्त दयासे परिपूरत होगया इतने में उसे डाकू दिखाई पड़ा पहलेतो उसने विचारा कि डाकूको उपदेश करना व्यर्थ है इतनी वार समझा चुका हूं, परन्तु क्या हुआ मेरा तो धर्म यही है कि प्राणीमात्र में प्रेम और दया भाव उत्पन्न करूं ।

धर्म्मपुत्र ने देखा कि डाकू नेत्र नीचे किये मन मलीन उसकी ओर आरहा है, वह दौड़कर डाकू के चरणों में गिर पड़ा—और बोला—

धर्म्मपुत्र—भाई, ऐ भाई, प्यारे, निजस्वरूप को विचारो, देखो, तुम्हारे भीतर सतचित आनन्द स्वरूप शुद्ध नित्य मुक्त परमात्मा विराजमान है, अज्ञान के कारण क्यों दूसरों को कष्ट देते और आप कष्ट भोगते हो, क्यों जन्म जन्मातर के लिये पाप का बोझा इकठ्ठा करते हो, भाई मेरा कहना मानो, अपना सर्व नाश मत करो—मानजाओ—भाई मान जाओ—

डाकू—(क्रोधसे) बस बस, इस बकवाद को छोड़ो, जाओ अपना काम करो'—

परन्तु अब धर्म्मपुत्र वहां से टलने वाला न था, वह डाकू को आलिंगन करके रोने लगा, डाकू का चित्त उसकी यह दशा देखकर तुरन्त द्रवत होगया, वह झट धर्म्मपुत्र के चरणों में गिर पडा और बोला—

डाकू—'धर्म्मपुत्र आज तुमने मुझे पराजय किया, बीस वर्ष तक मैं तुम्हारा सामना करता रहा, मैंने तुम्हारी एक न सुनी, परन्तु आज बेबस हूं, देखो

पहली वेर जब तुमने मुझे उपदेश किया था, मैंने वड़ा क्रोध किया था, फिर जब तुम गुफा में निवास करने लगे तो मै समझ गया कि तुम पूर्ण वैरागी हो, उसी दिन से मै तुम्हारे भोजनार्थ वृक्ष में रोटी लटकाने लगा—

तब धर्म्मपुत्र समझा कि स्त्री चौकी तबही शुद्ध कर सकी थी, जब उसने पहले वस्त्र शुद्ध कर लिया था, अर्थात् अपना अंतःकरण शुद्ध किये विना दूसरों का अंतःकरण शुद्ध करना असम्भव है ॥

डाकू—'जब तुम मृत्यु मे अभय होगये तो मेरा चित्त फिर गय।' ॥

धर्म्मपुत्र जान गया कि जिस प्रकार खभे के स्थिर किये विना लट्ठ नही मुड़ सकी थी, उसी प्रकार अपना चित्त स्थिर किये विना दूसरों के चित्त को अपनी ओर मोड़ना कठिन है।

डाकू—परन्तु देखो, यावत्काल तुम दयामय नहीं बने मेरा चित्त द्रवत नहीं हुआ, तुम्हारा प्रेम रूप बनना था कि मै तुम्हारे आधीन होगया'—

धर्म्मपुत्र परमानन्द को प्राप्त होकर डाकू सहित

टुंडों के पास गया, देखा कि चरवाहों वाला टुंड हरा होगया है—तब धर्म्मपुत्र को निश्चय होगया कि जिस प्रकार मध्यम अग्नि गीले घास को नहीं जला सकी थी, उसी भांति जब तक पुरुष का अपना चित्त प्रकाशस्वरूप न होजाय, दूसरे के चित्त को प्रकाशित नहीं कर सक्ता।

तीनों टुंडों के हरा भरा हो जाने पर धर्म्म पुत्र के आनन्द की कोई सीमा न रही, उसे विश्वास होगया कि मेरी तपस्या सम्पूर्ण हुई, डाकू को दीक्षत करके उसने तुरन्त वहीं समाधि लेली, अब डाकू बड़े उत्साह से अपने गुरु की आज्ञानुसार जगत में भक्तिमार्ग का उपदेश करके जीवन व्यतीत कर रहा है।

सत्रहवीं कहानी



सत्तर वर्ष की अवस्था का एक मनुष्य ऐसा महा पातकी था कि उसने भूल कर भी कभी किसी शुभ कर्म्म का अनुष्ठान नहीं किया था, प्राणांत समय उस के मुख से यह शब्द निकले।

'हाय हाय ! हे भगवन ! मुझ पापीका वेड़ा कैसे पार होगा, हा आप तो भक्त वत्सल; कृपा और दया के समुद्र हो, अवश्य मुझ जैसे कठोर पापी पर क्षमा करोगे।

भक्ति विषयक अन्तिम वासना के कारण उस के जीवात्मा ने स्वर्ग के द्वार पर पहुच कर कुडी खडकाई।

भीतर से–'स्वर्ग के द्वार पर कौन खडा है, चित्रगुप्त, इसने क्या क्या कर्म्म किये है'।

चित्रगुप्त—' महाराज यह बड़ा पापी है जन्म से लेकर मरण पर्यन्त इस ने एक भी शुभ कर्म्म नही किया'।

भीतर से–' जाओ, पापियों को स्वर्ग में आने की आज्ञा नही हो सक्ती।

मनुष्य—' महाशय, आप कौन है।

भीतर से–' योगेश्वर'।

मनुष्य—योगेश्वर, मुझ पर दया करो, भगवान की-क्षमता और जीव की अज्ञानता पर विचार करो आपही अपने मन में किंचित सोचिये कि किस

ताई से आपने मोक्षपद प्राप्त किया है, मल विक्षेप से रहित होकर अन्तः करण शुद्ध करना क्या कुछ खेल है–निस्संदेह मै पापी हूं, परन्तु परमात्मा दयालु हैं मुझे क्षमा करेंगे'।

भीतर की वानी बन्द होगई, मनुष्य ने फ़िर कुंडी खटखटानी आरम्भ की।

भीतर से—'कौन है, मृत लोक में इस ने क्या क्या कर्म्म किये है'।

चित्रगुप्त—स्वामी, इस ने जीवन पर्यंत एक काम भी अच्छा नहीं किया'।

भीतर से–'जाओ तुम्हारे सरीखे पापियों के लिये स्वर्ग नहीं बना'।

मनुष्य–' आप कौन है'।

भीतर से–' बुद्ध '।

मनुष्य—महाराज, केवल दया के क़ारण आप अवतार कहलाये, राज पाठ धन दौलत सब पर लात मार कर प्राणी मात्र का दुख निवारण करने के हेत आपने वैराग धारण किया, आपके प्रेममय उपदेश

को काम करना चाहिये, वह निकम्मा न बैठे, अन्न वस्त्र सबको अवश्य मिल रहता है'।

पूर्ण०—बहुत अच्छा, चलिये।

अगले दिन दोनों का विवाह होगया।

कुछ काल पीछे उस देश का राजा पूर्णसिंह के झोंपड़े के पास से जा रहा था, बसन्ती (पूर्णसिंह की स्त्री का नाम है) उसे देखने बाहर निकली, बस उसे देखते ही राजा उस पर आसक्त होगया।

राजा—'तुम कौन हो'।

बसन्ती—'पूर्णसिंह किसान की भार्या' राजा 'है—यह सौंदर्य और यह झोंपडा, तुम तो महलों में रहने की अधिकारणी हो'।

बसन्ती—'मै आपका धन्यवाद करती हू, मुझे ·ाही प्रिय है'।

प्रेम बाण ने ऐसा घायल किया कि

करता रहा कि बसन्ती,

प्रातः काल सेवकों को

तिम पर अन्तयता सोगता, 'हरि को भजे सोहरिका होई।

स्वर्ग का द्वार खुल गया और पापी भीतर चला गया।

अठारवीं कहानी



एक दिन पूर्णसिंह गांव के वाहर किसी काम को जा रहा था, पीछे से किसी ने पुकारा।

स्त्री–' पूर्णसिंह तुम विवाह क्यों नही करते '।

पूर्ण०–' विवाह किस से करूं और किस प्रकार' शरीर पर तो वस्त्र तक नही, व्याह कौन करे'।

स्त्री–' मैं और कौन '।

पूर्ण०–' अहो भाग्य, तुम्हारे सरीखी सुन्दरी मुझे मिले, इस से अधिक सौभाग्य क्या हो सक्ता है परन्तु मेरे पास तो एक छदाम भी नही, गुज़ारा किस भांति होगा'।

स्त्री–'वाह वाह, इस की क्या चिंता है, मनुष्य

को काम करना चाहिये, वह निकम्मा न बैठे, अन्न वस्त्र सबको अवश्य मिल रहता है '।

पूर्ण०—बहुत अच्छा, चलिये।

अगले दिन दोनों का विवाह होगया।

कुछ काल पीछे उस देश का राजा पूर्णसिंह के झोंपड़े के पास से जा रहा था, वसन्ती (पूर्णसिंह की स्त्री का नाम है) उसे देखने बाहर निकली, बस उसे देखते ही राजा उस पर आसक्त होगया।

राजा—' तुम कौन हो '।

वसन्ती—' पूर्णसिंह किसान की भार्या ' राजा ' है—यह सौंदर्य और यह झोंपड़ा, तुम तो महलों में रहने की अधिकारणी हो '।

वसन्ती—' मैं आपका धन्यवाद करती हू, मुझे यह झोंपडाही प्रिय है '।

राजा को प्रेम बाण ने ऐसा घायल किया कि सारी रात वह यही विचार करता रहा कि वसन्ती को किस प्रकार वश में करूं, प्रातः काल सेवकों को

बुला कर वह उपाय पूछने लगा कि वसन्ती को महलों में लाने के लिये क्या यत्न किया जाय सेवकों ने कहा कि महाराज पूर्णसिंह को बुला कर महलों में इतना काम कराओ कि वह काम करता २ मर जाय, बस फिर वसन्ती से विवाह करा लेना राजा बोला अच्छा जाओ पूर्णसिंह को बुला लाओ।

सेवक पूर्णसिंह के झोंपड़े पर पहुंचा और कहने लगा, पूर्णसिंह तुम्हें महाराज ने काम करने को बुलाया है, चलो। वसन्ती ने कहा, प्राणनाथ; काम पर जाइये, परन्तु सन्ध्या उपरान्त वहां नहीं ठहरना; घर लौट आना'।

पूर्णसिंह सेवक के संग राजदरबार में पहुंच गया राजा ने उसे चार मनुष्यों का काम, पूरा करने का हुक्म दिया वह सब काम समाप्त करके सन्ध्या समय घर लौट आया।

घर आकर देखा कि सब प्रबन्ध ठीक है; चूल्हा जल रहा है: भोजन बना रक्खा है; पति को देख कर वसन्ती ने प्रणाम किया; पानी ला, हाथ मुंह धुला, भोजन उसके सामने रख दिया।

वसन्ती' स्वामी, काम का क्या हाल है'।

पूर्णसिंह—'कुछ न पूछो, मुझे प्रतीत होता है कि राजा मेरे मारडालने का विचार कर रहा है'।

वसन्ती—'प्यारे काम से घबराना उचित नहीं, परमात्मा की कृपा से सब अच्छा होगा'।

अब राजा के सेवकों ने काम बढ़ाना आरम्भ किया, पूर्णसिंह नित्य सन्ध्या से पहले काम समाप्त करके घर चला आता था, फिर नौकरों ने उस से बढ़ई और लोहार का काम कराना आरम्भ किया उस ने वह भी पूरा कर दिया।

चौदह दिन बीत जाने पर राजा ने नौकरों से कहा कि 'तुम तो कहते थे कि सात दिन में ही पूर्ण-सिंह की समाप्ति कर देंगे, आज चौदह दिन हो चुके है, तुम से कुछ नहीं हो सका, तुम कर क्या रहे हो, वह तो नित्य घर चला जाता है, उस का कुछ भी नहीं बिगड़ा, क्या तुम मुझे मूर्ख बनाया चाहते हो'।

नौकर—'महाराज हमने बहुत यत्न किया, वह तो हारी मानता है न जीती, क्या जाने उसके अथवा

उसकी स्त्री के पास कोई मन्त्र है, हम सोचते २ थक गये, वह काम करते २ नहीं थका, आज आप उसे यह हुक्म दें कि कल सायंकाल से पहले २ महल के सामने वह एक मंदर त्यार करदे, यदि न बना सका तो आज्ञा भंग के दंड में उसका सिर काट देना, बस छुट्टी हुई'।

पूर्णसिंह के आने पर राजा ने उसे हुक्म दिया

राजा—'पूर्णसिंह, कल सूर्य्यास्त से पहले २ हमारे महल के सामने एक मंदर बना दो, यदि न बनाओगे तो तुम्हारा सिर काट दिया जायगा'।

पूर्णसिंह घर जा कर स्त्री से कहने लगा 'प्यारी अब मेरा अन्त समय आगया, चलो यहां से भाग चलें; नहीं तो विना अपराध ही मारे जायेंगे'।

बसन्ती—'भागने की कोई बात भी है आप डरते क्यों हैं'।

पूर्णसिंह—'डरूं ना तो और करूं क्या राजा ने आज यह हुक्म दिया है कि कल सायं काल से पहले पहले महल के सामने एक मंदर बना दो, नहीं तो सिर काट दिया जायगा, बता अब क्या करें'।

वसन्ती—'तो भागने से क्या लाभ होगा, सब जगह राजा के सिपाही उपस्थित है, कहीं न कहीं पकड़े जायेंगे बस मेरे विचार में तो राजा का हुक्म मानना ही उचित है'।

पूर्णसिंह—'हुक्म किस भांति मानूं एक दिन में मन्दर बनना मुझे तो असम्भव मालूम पड़ता है'।

वसन्ती—'प्राणनाथ उदास मत हो, भोजन करके आप सैन कीजिये' प्रातःकाल पूर्णसिंह ने महल में जा कर देखा कि मन्दर त्यार है, नेकसी कसर बाकी है, सो उस ने सन्ध्या होने से पहले २ पूरी करदी।

राजा ने जब बाहर आ कर देखा कि मन्दर बन गया तो बड़ा दुखी हुआ कि वसन्ती नहीं मिलती हाय क्या करूं, नौकरों को बुला कर फिर ताड़ना करने लगा उन्होंने कहा 'महाराज आज उसे यह आज्ञा कीजिये कि कल सायंकाल से पहले २ महल के चारों ओर खाई खोददे, नहीं फांसी देदी जायगी राजा ने पूर्णसिंह को वही हुक्म सुना दिया।

पूर्णसिंह घर में लौट आया परन्तु वह बड़ा उदास था।

वसन्ती—'प्यारे, आज आप उदास क्यों है, क्या राजा ने कोई और कड़ा हुक्म सुना दिया है'।

पूर्ण०—'हा, महल के चारों ओर एक दिन में खाई खोदने को कहा है, अब बचना असम्भव है'।

वसन्ती—'कुछ चिता की बात नहीं, आप दुःखी न हों, चैन से सैन करो, कल देखा जायगा।

अगले दिन पूर्णसिंह ने जाकर देखा कि खाई खुद गई है।

राजा को बड़ा कष्ट हुआ कि अब क्या करू, नौकरों को बुला कर पूछने लगा कि बतलाओ अब क्या किया जाय, नौकर बोले—'महाराज, अब अन्तम उपाय यही है कि पूर्णसिंह को यह हुक्म दीजिये कि अज्ञात स्थान में जाकर अज्ञात वस्तु लावे, बस जहा कहीं जाकर जो कुछ भी लावेगा, कह देना कि ठीक नही, फिर मारा जायगा, किसी प्रकार बच नही सक्ता—राजा ने वैसा ही किया।

पूर्णसिंह ने घर आ कर सारा वृत्तान्त वसन्ती से कहा, उसे बड़ी चिंता हुई।

वसन्ती—'प्यारे, प्रतीत होता है कि नौकरों ने राजा को यह पट्टी पढ़ादी है कि हमें किस रीति से वश करना चाहिये, तो क्या चिंता है, अब हम सावधान होकर बचने का उपाय करेंगे—मैं अब उन से बच नहीं सक्ती, आप सिपाहियों की माता बुढ़िया की सहायता लें, वह जो कहे सो करें मै जानती हूं कि राजा के सेवक बलात्कार मुझे यहां से महल में लेजायेंगे, परन्तु यदि आप बुढ़िया की आज्ञा पालन करेंगे तो मै शीघ्र ही आप से मिल जाऊंगी। इस में संशय नहीं यह लो चिमटा और झोली, इन चिन्हों से बुढ़िया जान लेगी कि आप मेरे पति है'।

पूर्णसिंह झोली आदि लेकर छावनी में पहुंचा, वहां सिपाही दलेल कर रहे थे, दलेल कर चुकने के उपरांत जब वह बैठ गये तो पूर्ण सिंह ने उन से पूछा कि भाई तुम अज्ञात स्थान और अज्ञातवस्तु को जानते हो'।

सिपाही—'आप को इन बातों का खोज लगाने भेजा किसने है'।

पूर्णसिंह—'राजा ने'।

सिपाई—'भाई साहिब सच तो यह है कि जब से हम सिपाही भरती हुये हैं, हमें कभी यह मालूम नही हुआ कि हम कहां जाते है और क्या खोजते है, इस विषय में हम तुम्हारी कुछ सहायता नही कर सक्ते'।

पूर्णसिंह वहा से चल कर बुढ़िया के झोंपड़े पर पहुंचा देखा कि बुढिया बैठी सन कात रही है और रोती जाती है पूर्णसिंह को देख कर बोली 'तुम यहा क्यो आये' उस ने बुढ़िया को वसन्ती के दिये हुये झोली चिमटा दिखलाये, वह शात होकर बोली कि 'हुआ क्या' पूर्ण सिंह ने आद से लेकर अन्त तक सारा हाल सुना कर कहा कि 'अब राजा ने मुझे अज्ञात स्थान में जा कर अज्ञात वस्तु लाने को भेजा है'—बुढ़िया को निश्चय हो गया कि अब समय आगया; पूर्ण सिंह को भोजन करा कर कहने लगी।

बुढ़िया—'पूर्णसिंह; यह लो तागे का गोला; इस का एक सिरा पकड कर इसे खोलते चले जाओ

जाते २ समुद्र पर पहुंच जाओगे; वहां एक बड़ा भारी नगर है उसके पार किसी गृह में रात्रि को निवास करना, वहां तुम्हें इन बातों का ब्योरा मिल जायगा'।

पूर्णसिंह—'क्या ब्योरा, कुछ खुलासा कहो'।

बुढ़िया—'सुनो जब तुम उस वस्तु को देखो जिसे मनुष्य माता पिता से भी अधिक मानते हों, तो तुरंत उस वस्तु को लेकर राजा के पास चले जाना, यदि राजा कहे कि वह यथार्थ वस्तु नहीं, तो तुम उसे पीटते २ नदी के तीर जा कर टुकड़े २ करके जल में बहा देना उसी समय बसन्ती तुम्हें मिल जायगी'।

पूर्णसिंह ने वैसाही किया, पहले उसे समुद्र मिला, फिर नगर आया वह रात्रि को एक गृह में जा टिका प्रातः काल होने पर वहा पिता ने पुत्र को जगा कर कहा कि 'जाओ जंगल से लकड़ी काटलाओ मुझे सरदीसता रही है परन्तु पुत्र ने यही उत्तर दिया कि 'अभी सवेरा है, सूर्य्य उदय हो जाने दो; लकड़ी काटने को तो दिन भर पड़ा है' इस पर

माता बोली—'जाओ बेटा, देखो तुम्हारा पिता शीत से कांप रहा है, जाओ शीघ्र जाकर लकड़ी काट-लाओ' परन्तु पुत्र ने एक न मानी।

इतने में बाहर गरजना हुई, बालक तुरन्त उठ कर बाहर चला गया, पूर्णसिंह भी उसके पीछे हो-लिया कि देखूं वह क्या वस्तु है जिसे यह बालक माता पिता से अधिक मानता है, देखा कि एक मनुष्य ने पेट पर चमड़े से मढ़ी हुई एक वस्तु बाध रक्खी है, और उसे लकड़ी से पीट रहा है, उसी का घोषन सुन कर बालक बाहर दौड़ आया है, पूर्णसिंह ने पूछा 'यह क्या है' मनुष्य बोला, ढोल—पूर्णसिंह ने कहा 'यह भीतर से भरा है अथवा खाली है' मनुष्य ने उत्तर दिया 'खाली'।

अब पूर्णसिंह इस घात में लगा कि इस ढोल को लेकर राजा के पास जाये, क्योंकि बुढिया के कथनानुसार इस वस्तु को ही बालकने माता पिता से अधिक सन्मान दिया है।

थोड़ी दूर जा कर मनुष्य ने ढोल खोल कर अलग रख दिया, और आप सड़क पर लेट विश्राम

करने लगा, पूर्णसिंह ढोल उठा कर दौडा, और भागता २ अपने घर पहुंच गया।

आकर देखा कि चमन्ती घर में नहीं है, मालूम हुआ कि अगले दिन ही राजा ने उसे पकड मगवाया वह तुरन्त राजा के पास पहुंचा और विनती की 'महाराज मैं अज्ञात स्थान में जाकर अज्ञात वस्तु ले आया हूं'।

राजा—'तुम कहां गये थे'।

पूर्णसिंह ने सारा हाल कह सुनाया।

राजा—'वह स्थान जहां तुम गये थे, यथार्थ नहीं, भला दिखलाओ क्या लाये हो'।

पूर्णसिंह—'यह ढोल'।

राजा—'यह ठीक नहीं'।

राजा का उत्तर सुन पूर्ण सिंह ने ढोल पीटना आरम्भ कर दिया, सारी सेना एकत्र होगई, पूर्णसिंह की सलामी लेकर पूछने लगी 'आज्ञा सरकार'।

राजा ने सेना को बहुत पुकारा कि पूर्णसिंह के पीछे मत लगो, परन्तु उन्होंने राजा की एक न सुनी

तब राजा ने आज्ञा की कि बसन्ती को पूर्णसिंह के पास छोड़ आओ और ढोल उस से ले आओ।

परन्तु बसन्ती के मिल जाने पर भी पूर्णसिंह ने राजा को ढोल नहीं दिया, और यही कहा कि 'मैं इसे तोड़ फोड़ कर जल में बहाऊंगा, मुझे यही शिक्षा मिली है'।

अतएव उस ने ढोल के टुकड़े२ करके उसे जल में प्रवेश कर दिया, और अपनी स्त्री को संग लेकर घर लौट आया, तद उपरात राजा ने उसे कष्ट देना छोड़ दिया, अब वह सुख पूर्वक काल व्यतीत करता है।

छटा भाग

उन्नीसवीं कहानी

बंबई प्रान्त के सूरत नगर में चाय की दूकान पर देश देशान्तर के निवासी चाय पीने आते है, एक दिन वहा फ़ारस देश निवासी एक विद्वान् मुल्ला चाय पीने आया, उस ने सारा जीवन परमेश्वर के यथार्थ स्वरूप जानने और इसी विषय में पुस्तकें लिखने और पढ़ने में व्यतीत किया था, परिणाम यह हुआ कि वह नास्तिक मत का अनुयायी बन गया, फ़ारस के बादशाह ने इसे बहुत बुरा माना और उसे अपने राज्य से निकाल दिया।

आयू पर्य्यन्त आदि कारण की मीमांसा करते करते यह अभागी मुल्ला अन्त में बुद्धिहीन होकर यह मानने पर उतर आया कि इस संसार का कोई न्यन्ता ही नहीं।

इस मुल्ला के साथ एक हब्शी गुलाम था, मुल्ला तो दूकान में चला गया, हब्शी बाहर बैठ कर धूप सेकने लगा; मुल्ला ने अफ़ीम टांक कर चायकी प्याली पी और गुलाम से बात चीत करने लगा।

मुल्ला—' अबेओ नालायक़, भला बता, खुदा है कि नहीं '।

हबशी—' खुदा के होने में भी शक हो सक्ता है, कभी नहीं, खुदा है, (काठका बुत दिखला कर) देखिये; ये मेरा खुदा है, यह हमेशा मेरी हिफाजत करता है, हमारे मुल्क में इस लकड़ी को जिसका यह बुत बना हुआ है बड़ा मुतबर्रूक माना जाता है '

उस समय दूकान में और लोग भी उपस्थित थे, स्वामी सेवक में यह वार्तालाप होता देख कर एक ब्राह्मण देवता बोले।

ब्राह्मण—' हवशी तू अत्यन्त मूर्ख है, परमात्मा कहीं जेब में समा सक्ता है, वह तो अद्वितीय सारे संसार का कर्ता धर्ता और हर्ता है, उस सर्व शक्ति-

मान परब्रह्म के मन्दर श्रीगंगा जी के तट पर बने हुये हैं, वहां के पुजारी ही उस परमात्मा का वास्तव् स्वरूप जानते हैं, दूसरा कोई नहीं जानता, सहस्रों वर्ष के उलट फेर से भी उन पुजारियों के सन्मान अथवा अधिकार और प्रतिष्ठा में कोई न्यूनता नहीं हुई, जिस से सिद्ध होता है कि भगवान स्वय उनकी रक्षा करते रहते है'।

यहूदी—'हरगिज़ नहीं सच्चे खुदाका घर हिन्दोस्तान में नहीं न वह ब्राह्मणों की हिफ़ाज़त करता है, ब्राह्मणों का खुदा सचा नहीं हो सक्ता, सच्चा खुदा तो इबराहीम, इसहाक और याकूब का है, वह सिवाय बनी इसराईल के और किसी कोम की हिफाजत नहीं करता रोजे अजल से हमारी क़ौम खुदा को प्यारी है, आज कल जो हम गिरे हुए दिखाई देते हैं यह दर असल हमारा इमत्हान हो रहा है, क्योंकि खुदा हमें कौल दे चुका है कि वह एक दिन हम सबको युरशलम में जमा कर देगा, उस वक्त वहां के क़दीम मन्दर की शान दुबाला होकर कुल दुनिया पर हमारी बादशाहत क़ायम होजायगी'।

अन्धा—' गोपाल, देख कैसा अन्धेरा है, मैंने तुम से ठीक कहा था कि सूर्य्य नहीं है, सब लोग झकमारते हैं कि सूर्य्य है, परन्तु मैं उन से पूछता हूं कि वह क्या है'।

गोपाल—' सूर्य्य क्या है यह जानने से मुझे कुछ प्रयोजन नहीं, हां प्रकाश को मैं भली भांति जानता हूं, देखिये, मैंने यह मोमबत्ती बनाली है, यही मेरा सूर्य है, रात्रि को इसी की सहायता से मैं सब काम कर सक्ता हूं'।

पास ही सुमाटरा टापू का रहने वाला एक लंगडा बैठा था।

लंगडा—(हंस कर) ' मालूम हुआ कि आप जामनू अन्धे हैं जभी कहते हो कि सूर्य्य नहीं है, सुनो सूर्य्य अग्निका एक गोला है, प्रातः काल नित्य समुद्र से निकलता है और सन्ध्यासमय हमारे टापू के पर्वतों में छिप जाता है, मुझे शोक है कि आप को नेत्र नहीं नहीं तो आप स्वयं देख लेते'।

धींवर—' वाह जी वाह क्या कहना है, तुम

कभी टापू से बाहर नहीं गये, यदि नौका पर बैठ कर दूर समुद्र में जाते तो पता लग जाता कि सूर्य्य टापू के पर्वतों में लोप नहीं होता, किन्तु समुद्र से ही निकलता और साय काल को समुद्र में ही डूब जाता है, यह सब कुछ मैंने अपने नेत्रों से देखा है'।

इस पर हमारे में से एक हिन्दुस्तानी ने कहना आरम्भ किया।

हि०—मुझे आपकी मूर्खता देख कर बड़ा अचरज होता है, सूर्य्य यदि अग्निका गोला होता, तो समुद्र में डूब कर बुझ न जाता, भाई साहिब यह बात नही यह तो साक्षात देवता है, रथ में सवार हो कर सुमेर पर्वत के गिरद घूमता है, कभी कभी केतु इसे पकड़ लेता है, परन्तु हमारे भूमेश्वर ब्राह्मण लोग प्रार्थना करके इसे छुड़ालेते है, तुम यह समझते हो कि सूर्य्य केवल तुम्हारे टापू में ही प्रकाश करता है और जगह नहीं, तुम्हारा यह विचार मिथ्या है'।

जहाज का मालिक—' देवता की एकही कही सूर्य्य देवता नहीं, वह केवल हिन्दोस्तानमें ही प्रकाश

नहीं करता, मैने देश देशान्तर की यात्रा की है; सूर्य्य तो सारी पृथ्वी पर प्रकाश करता है, बात यह है कि वह जापान देश से निकलता और इंगलस्तान के पीछे छिप जाता है, इसी कारण जापानी अपने देश को निपन अर्थात् सूर्य्य की जन्म भूमि कहते हैं'।

अंगरेज–'तुम सब मूर्ख हो, सूर्य्य की चाल का निर्णय हमने किया है, वह कहीं से निकलता है न छिपता है सदैव पृथ्वी के गिरद घूमता रहता है, यदि ऐसा न होता तो अभी हम पृथ्वी का चक्कर काट कर आये हैं कहीं न कहीं हम अवश्य सूर्य्य से टकराते'।

कपतान–'तुम सब मूर्ख हो और दूसरों को मूर्ख बना रहे हो, सूर्य्य पृथ्वी के गिरद नहीं घूमता, वरंच पृथ्वी सूर्य्य के गिरद घूमती है, वह अपने धुरे पर फिरती हुई चौवीस घण्टे में एक चक्कर पूरा करती है, जो भाग घूमती समय सूर्य्य के सन्मुख होता है वहां दिन होता है, बाकी सब देश में रात

होती है सूर्य किसी विशेष पर्वत, टापू, समुद्र अथवा देश में प्रकाश नहीं करता, वह एक देशी नहीं सर्व देशी है, विचार दृष्टि से आकाश की ओर देखो तब प्रकट हो जायगा कि मेरा कथन सत्य है'।

'इस दृष्टान्त से आप समझ गये होंगे कि मत-मतान्तर का झगड़ा केवल अज्ञान का फल है, सूर्य की भांति परमात्मा सर्वत्र व्यापक है, वह एक देशी नहीं, प्रत्येक मनुष्य अपने और अपने देश के वास्ते पृथक परमात्मा बनाने का उद्योग करता है, प्रत्येक जाति उस परब्रह्म परमात्मा को जिस में यह सारा प्रपञ्च सहारा पाता है, अपने निज मन्दरों में बन्द करना चाहती है।

'परमात्मा ने मनुष्यों को समता सिखलाने के लिये, अपना मन्दर आप बना दिया है जो अद्वितीय है।

वह मंदर यह मायावी प्रपञ्च है, सारे मानुषी मन्दर इसी मन्दर की भांति मूर्ति हैं, साधारण मन्दरों

में फवारे, जगमोहन, दीपक, चित्र अथवा मूर्तियां, धर्म्म पुस्तक, वलीदान, हवन कुण्ड, और पुजारी सब कुछ होता है, परन्तु ऐसा मन्दर वतलाओ जहां समुद्र फवारा हो, आकाश जगमोहन, सूर्य्य, चन्द्र और तारे दीपक हों प्रेम भाव से परिपूरत प्राणी चित्र और मूर्तिया हों परमेश्वर की कृपालता और दयालता की व्याख्या करने को सांसारिक सुख सामग्री की अपेक्षा और कौनसी धर्म्मपुस्तक सामर्थ्य है, पुरुष की निज आत्मा से अधिक धर्म्म शास्त्र और कौनसा है, पर उपकार के सदृश कौनसा वलीदान है, और योगी के चित्त के तुल्य और कौनसा हवन कुण्ड है जहां स्वयं भगवान निवास करते है।

'पुरुष को निज वुद्धि अनुसार परमात्मा का ज्ञान होता है, ज्यूं ज्यूं प्राणी परमदेव की कृपालता, दयालता और प्रेम को अपने चित्त में स्थापन करके उसे अनुभव करता है, त्यों त्यों वह परमात्मा के समीप होता जाता है'।

'इस कारण ज्ञानी को अज्ञानी से ग्लानि करना अधर्म्म है, योगी और महात्मा वही है जो नास्तिक से भी द्वेष नहीं करता'।

चीनी की वार्ता सुन कर सब चुप होगये।

बीसवीं कहानी

चीन और भारत वर्ष के हद्द पर मैनपुरी एक बहुत छोटी सी राजधानी है उस में केवल सातहजार मनुष्य की बस्ती है, परन्तु क्या हुआ, महल, मन्त्री जरनेल, करनेल, सब है सेनामें साठ सिपाही हैं परन्तु नाम तो सेना है, साठ हों चाहे साठहजार सब व्यवहारिक पदार्थों पर कर लगा हुआ है, परन्तु मनुष्य ही इतने थोड़े है कि कर की आमदनी से राजा तक का पेट नहीं भरता, मन्त्री आदि का तो कहना ही क्या है, इस कारण राजा ने आमदनी का एक और अद्भुत प्रबन्ध कर रक्खा है, अर्थात् द्यूत घर बना कर ठेके

परदे रक्खा है जूआ खेलने वाले हारें अथवा जीतें, राजा अपना टकौना लेऊता है, यहां विशेष आमदनी इस कारण होती है कि ओर राजाओं ने अपने देशों में जुआ बन्द कर रक्खा है क्योंकि मनुष्य जुआ हार कर प्रायः आत्मघात कर लिया करते थे, मैनपुरी का राजा सुतंत्र है, इस लिये उसे जुआ खिलाने से कौन रोक सक्ता है ।

इस जुआ घर में देश देशान्तर के लोग जुआ खेलने आते है, यद्यपि राजा इस कमाई को पापसमझता है, परन्तु करे क्या, सत्य व्यवहार से धन सञ्चय होना असम्भव है, आत्म रक्षा भी आवश्यक है, इस कारण उसे जुआ खिलाना ही पडता है ।

बडी राजधानियों की भांति यहा किसी बात में कमी नहीं, दरबार होते है, सेना काइद मेड करती है, चीफ कोर्ट, वकील, कानून, आदि सब कुछ विद्यमान है ।

यहा की प्रजा बडी सुशील है, परन्तु दैव जोग

से वहां किसी मनुष्य ने एक पुरुष मारडाला, अब वह ठाठ बाट से चीफ कोर्ट के जज एकत्र हुये, वकील, बालिष्टर आदि सब के सामने उन्होंने यह फ़ैसला दिया कि वधक का सिर काट दिया जाय।

मुशकिल यह पड़ी कि इस राजधानी में गला काटने की कल विद्यमान न थी, राजा ने मन्त्रियों की सम्मति से चीन के बादशाह को पत्र लिखा कि कृपा करके गला काटने की कल भेज दीजिये, चीन के बादशाह ने दस हजार रुपया मांगा, तब तो राजा जी चकराये कि दस हजार का तो मनुष्य नहीं, कल के दाम इतने, फिर भारत वर्ष के महाराज को लिखा उसने आठ हजार मोल किया, राजा ने विचारा कि यदि गला काटने की कल मोल ली गई तो सारी राज्यधानी ही बिक जायगी, यह ठीक नहीं, क्या करें मन्त्रियों ने कहा ' महाराज सेनापति से कहिये कि वह किसी सिपाही को हुक्म देदे कि वह खूनी का का गला काटदे, क्योंकि युद्ध में भी तो वह यही काम करते है, परन्तु किसी सिपाही ने गला काटना अंगीकार नही किया।

राजा ने इस विषय में एक कमेटी नियत की, और उस कमेटी ने एक उप कमेटी बनाई, अन्तकाल बड़े झगड़े के पीछे यह निश्चय हुआ कि खूनी को उमर क़ैद कर दिया जाय।

राजा ने यह बात मानली, अब बन्दी खाना कहां से लावें, एक साधारण कोठरी थी, वहीं खूनी को क़ैद करके उस पर पहरा लगा दिया, और हुक्म दिया कि पहरे वाला क़ैदी के वास्ते राजा के लंगर में से नित्य रोटी ला दिया करे।

एक वर्ष पूरा होजाने पर राजा जब राजधानी का हिसाब देखने लगा तो उसने पांच सौ रुपया खूनी के भोजन छादन पहरे आदि का खर्च लिखा हुआ देखा राजा—(स्वागत)–' है यह क्या, पांच सौ रुपया, खूनी तो भगवान इस का सत्यानाश करे. अभी जवान है, मरन समय तक तो हमारी राजधानी ही खतम कर जायगा '।

मंत्रियों को बुला कर कहने लगा कि शीघ्र इस खूनी का कोई ठिकाना करो नहीं तो झोंपडा लुट जायगा।

मन्त्री आपस में विचार करने लगे।

पहला—'पहरा हटादो'।

दूसरा—'खूनी यदि भाग गया'।

पहला—भाग गया तो पाप कटा।

अतएव पहरा हटादिया गया, खूनी आप नित्य जाकर राजा के लंगर से रोटी ले आता, रात को कोठड़ी बन्द करके आनन्द सहित सेन करता, भागने का नाम तक न लेता था।

मन्त्री बड़े चकित हुये कि अब क्या करें, इस के यहा पड़े रहने से हमारे राज की हानि ही हानि है, लाभ कुछ भी नहीं, एक मन्त्री ने खूनी को बुलाया और यू बात चीत करने लगा।

मंत्री—'भाई तुम भागते क्यों नहीं, तुम जहा चाहो जा सक्ते हो, महाराज इसका बुरा न मानेंगे'।

खूनी—'महाराज बुरा मानें अथवा भला, मैं जाऊं कहा और करू क्या, आपने तो मेरा सर्वनाश कर दिया, काम करने का अभ्यास मुझे नहीं, इस से तो यह अच्छा था कि आप उसी समय मेरा वध

काट डालते, हाय हाय, यह कैसा अन्याय है, पहले मनुष्य को क़ैद करके निकम्मा बना देना, और फिर कहना कि भाग जाओ, मै नही जाता, मै तो अब यहीं प्राण दूगा'।

लीजिये अब फिर कमीशन बैठी, कई दिन के अधिवेशन के उपरात यह निश्चय हुआ कि सौ रुपये साल पैशन देकर उसे यहां से विदा कर दिया जाये।

अन्धे को चाहिये दो आखें, खूनी पैशन पाकर बड़ा प्रसन्न हुआ, मैनपुरी छोड कर दूसरी राजधानी में धरती मोल लेकर खेती करने लग गया, अब वह आये वर्ष मैनपुरी जाकर सौ रुपये ले आता है और आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करता है।

बस इस में यही बात अच्छी हुई कि उसने किसी ऐसे देश में अपराध नही किया जहां कैदी का गला काटने अथवा उसे बन्दी खाने में रखने के लिये खर्च की कुछ भी चिन्ता नही की जाती।

—o—

सातवां भाग

इक्कीसवीं कहानी



काशी नरेश ब्रह्मदत्त ने राजा दीर्घायु के साथ युद्ध करके उसकी सेना के सहस्रों योधा मार डाले, गांव जला दिये, और स्वयं दीर्घायु को पकड़ कर पिंजरे में कैद कर दिया।

रात्रि को चारपाई पर पड़ा हुआ ब्रह्मदत्त यह विचार कर रहा था कि दीर्घायु को किस प्रकार वध करूं कि अकस्मात एक बूढ़ा दिखाई पड़ा।

बूढ़ा—'तुम दीर्घायु के वध करने का विचार कर रहे हो, क्यों है यही बात'।

ब्रह्म०—'हां, बात तो यही है, परन्तु अभी तक मैंने कुछ निश्चय नहीं किया'।

बूढ़ा—'परन्तु तुम तो स्वयं दीर्घायु हो'।

ब्रह्म०—'झूट मैं, मैं, दीर्घायु, दीर्घायु'।

बूढ़ा—' तुम और दीर्घायु एक हो, दीर्घायु को जो तुम अपने से भिन्न मानते हो, यह केवल तुम्हारी भ्रांति है '।

ब्रह्म०—'आप कहते क्या है, मै यहां कोमल बिछोने पर पड़ा हूं दास दासी मेरी सेवा में उपस्थित हैं, आज की भांति कल मैं अपने मित्रों के संग प्रीति भोजन करूंगा, दीर्घायु पक्षी की न्याईं पिंजरे में बन्द है, कल वह कुत्तों से फड़वा दिया जायगा'।

बूढ़ा—' आप उस की आत्मा को नाश नहीं कर सक्ते '।

ब्रह्म०—' वाह वाह, तो चौदह हज़ार योधा मार कर ढेर किस प्रकार लगा दिया, मै जीता हूं, वह मर गये, क्या इस से यह सिद्ध नहीं होता कि मै आत्मा को नष्ट कर सक्ता हूं '।

बूढ़ा—' यह आप किस तरह जानते है कि वह मर गये'।

ब्रह्म—' इस लियें कि वह दिखाई नहीं देते, इस पर एक बात यह है कि उन्हे कष्ट हुआ, और मुझे राज्य की प्राप्ति हुई।

बूढा—' यह भी आप को भ्रांतिमात्र है, आपने उन्हें कष्ट नहीं दिया,वरच अपने आप को कष्ट दिया है

ब्रह्म०—' मैं आप की बात नहीं समझता' ।

बूढा—' भला मैं यह पूछता हू कि समझ ने की आपको इच्छा भी है कि नहीं' ।

ब्रह्म०—' हां समझने की इच्छा तो है ' ।

बूढा—' अच्छा तो आओ उस तालाव पर चलें' ।

तालाव पर पहुंच कर बूढे ने कहा कि, 'वस्त्र उतार कर इस तालाव में उतर जाओ, ज्यूं ही मैं तुम्हारे सिरपर पानी डालना आरम्भ करूं, तुम तालाव में गोता लगाना, राजा ब्रह्मदत्त ने वैसा ही किया, गोता लगातेही उस ने देखा कि वह राजा ब्रह्मदत्त नहीं, कोई और है, पास एक अपरिचित सुन्दरी स्त्री लेटी हुई है, यद्यपि इस स्त्री को उसने पहले कभी नहीं देखा था,तथापि उसे वह अपनी रानी समझ रहा था ।

स्त्री—' प्यारे दीर्घायु, कल के थकान के कारण आपको सोते २ अतिकाल होगया है, मैंने आप को सुख से सैन करने दिया, अब आप उठिये, वस्त्र पहर

कर दरबार में जाइये, राजे महाराजे आप की राह देख रहे हैं'।

राजा ब्रह्मदत्त अपने तईं दीर्घायु मान बैठा था वह तुरन्त उठ कर दरबार में चला गया।

वहा राजे महाराजे दीर्घायु को देख कर अति प्रसन्न हुये और प्रणाम करके बोले 'महाराज ब्रह्मदत्त बड़ा दुख दे रहा है, यह अपमान सहन करना अब असम्भव है, आज्ञा दीजिये कि युद्ध की दुन्दभी बजाईजावे' दीर्घायु बोला नहीं, पहले दूत भेज कर ब्रह्मदत्त को समझाना उचित है,—अतएव दूत भेज कर आप मृग्या करने चल दिया और वहां जाकर जंगल से दो सिंह मार लाया फिर महल में आकर उसने भोजन किया, और रात्रि को रानी के साथ विहार करता रहा।

अब इसप्रकार सदैव वह राज काज करके मृग्या करने जाता; रात्रि को महल में आ कर रानी के साथ विहार करता था महीनों बीत गये; इतने में दूतों ने आकर निवेदन किया कि 'महाराज ब्रह्मदत्त नहीं मानता वह तो युद्ध करने पर आरूढ है'।

दीर्घायु (वास्तव में ब्रह्मदत्त) ने मंत्रियों को एकत्र करके आज्ञा की कि चतुरगनी सेना सजा कर युद्ध की त्यारी करो, मैं स्वयं संग्राम करूंगा, आठवें दिन दीर्घायु और ब्रह्मदत्त में घोर संग्राम हुआ, दीर्घायु (अर्थात् ब्रह्मदत्त) पकड़ा गया, उसे क्षुधा पिपासा का इतना दुख न था जितना कि अपमान और अप्रतिष्ठा का पिंजरे में बन्द रह कर सदा अपने मित्रों और सम्बन्धियों को वध होते देख कर अति-क्लेश मानता, और यह विचार करता था कि शत्रु को किस प्रकार मारूं; यहां तक कि जब उसने 'अपनी रानी के हाथ पाव बन्धे देखे, और यह जाना कि उसे ब्रह्मदत्त के पास लेजा रहे हैं तो वह क्रोध मे जल उठा और चाहता था कि पिंजरा तोड़ कर बाहर निकल जायें परन्तु वह बेसुध होकर अन्दर ही गिर पड़ा ।

इतने में दो वधकों ने आकर उस की मुशकें कसलीं और उसे फांसी पर ले चले, दीर्घायु रो रो कर कहने लगा, 'मुझे मत मारो; मुझ पर दया करो'

परन्तु किसी ने न सुना, फांसी पर लटकने को ही था कि उसे ध्यान आया।

'ओहो, यह किस प्रकार हो सक्ता है, मै तो ब्रह्मदत्त हूं, यह तो स्वप्न है, वह उद्योग करके सिर बाहर निकालाही चाहता था कि फिर सोगया और देखा कि मै तो पशु बन गया हूं।

अब वह पशु बनकर जंगल में चरने लगा, बच्चे उस का दूध पीने लगे, तब ब्रह्मदत्त समझा कि मैं तो हिरनी बन गया, परन्तु इस अवस्था में वह बड़ा सुख मान रहा था, इतने में किसी शिकारी ने बच्चे के गोली मारी, बच्चा गिरपडा और एक भयानक मनुष्य ने आकर उस का सिर काट डाला।

ब्रह्मदत्त ने भय से चौक कर सिर बाहर निकाल दिया, तो देखा कि बूढा पास खड़ा है, और वहां कुछ भी नहीं।

ब्रह्मदत्त—'ओहो, मैने कितने काल पर्यन्त कष्ट भोगा, कि मै कुछ वर्णन नहीं कर सक्ता'।

बूढा—'काल—अभी तो आपने सिर डबोया

था, मेरा तो लोटा भी खाली नहीं हुआ, आप कहते हैं कि चिरकाल तक आपने दुख भोगा, विचारो कि दीर्घायु और जिन योधाओं और पशुओं को तुम ने मारा है वह सब वास्तव में तुम ही हो, तुम यह समझ रहे हो कि आत्मा केवल तुम में ही है, परन्तु मैंने तुम्हारा आवर्ण दूर करके यह दिखला दिया है कि दूसरों को कष्ट देने से वास्तव में तुम अपने को ही कष्ट देते हो, आत्मा एक और सर्वत्र व्यापक है, उसी का एक अंश तुम में है, उस अंश को शुद्ध अथवा अशुद्ध करना तुम्हारे वश में है, सब को अपना आत्मा समझ कर उनके साथ प्रेम करने से तुम्हारा आत्मा शुद्ध हो जायगा, दूसरों को दुख देकर निज आत्मा को पालन करने से तुम्हारा आत्मा भ्रष्ट हो जायगा, आत्मा अविनाशी है, जो मर गये वह तुम्हारे दृष्टिगोचर नहीं, परन्तु आत्मा नहीं मरा, आत्मा एक रस है; तुम दूसरों को मार कर निज आत्मा को दीर्घ करना चाहते हो, यह असम्भव है, आत्मा छोटा बडा नहीं हो सक्ता, वह देश काल से परे अक्षर, नित्य, अपरिणामी सत्य

पदार्थ है, उस से भिन्न जो कुछ दिखाई देता है वह सब भ्रांति मात्र है'।

यह कह कर बूढ़ा अन्तरध्यान होगया।

अगले दिन ब्रह्मदत्त ने दीर्घायु को छोड़ दिया और पुत्र को राज्य सौंप कर वन में तपस्या करने चला गया।

अन्तः करण का मल विक्षेप दूर करके अब ब्रह्मदत्त साधू वेष में प्राणी मात्र को देश २ फिर कर यह उपदेश करता है, कि दूसरों का अपकार करना, स्वयं अपना अपकार करना है।

बाईसवीं कहानी



सृष्टि के आदि में मनुष्यों को कोई भी इति कर्तव्यता नहीं थी, क्योंकि उन्हें अन्न, वस्त्र, गृह आदिक की कोई अपेक्षा न थी इस प्रकार रहते २ छह सौ मनुष्य होगये, इस समय तक वह रोग का नाम तक नहीं जानते थे।

कुछ काल पीछे परमात्मा ने मनुष्यों को देख ने की इच्छा की, आकर देखा कि वह सब परस्पर विरोध करके स्वार्थी वन गये हैं, और जीवन की अपेक्षा मृत्यु चाहते है।

परमात्मा ने विचारा कि—' यह सब भिन्न २ रहने का परिणाम है, ऐसा प्रबन्ध करू कि मनुष्य परस्पर मिलाप के बिना जीवत ही न रह सकें' अतएव उस ने मनुष्यों में शीत ऊष्ण क्षुधापिपासा उत्पन्न कर दिये, जिन से बचने के कारण उन्हें बलात्कार गृह बनाने और खेती करनी पड़ी।

परमात्मा ने सोचा कि प्रत्येक मनुष्य सब काम नहीं कर सक्ता, अवश्य एक को दूसरे की सहायता लेनी पड़ेगी, भला यह कब सम्भव है कि एक ही मनुष्य अपने लिये हथियार बना कर जंगल से लकड़ी काट कर मकान बनाये, अथवा कपास बोकर आप ही उसे कात कर कपड़ा बुने वह अब यह जान लेंगे कि परस्पर मित्रता से काम करने में ही उनका भला है: और किसी प्रकार नहीं यह प्रबन्ध उन में ऐक्यताकार बीज बो देगा'।

कुछ काल पीछे परमात्मा ने आ कर देखा कि वह पहले की अपेक्षा और भी दुःखी हैं, काम तो मिल कर करते हैं, क्योंकि इस के विना जीना असम्भव है, परन्तु सब मिल कर काम नहीं करते उन्होंने छोटे २ जथे बना रक्खे है, और एक जथा दूसरे जथे को कष्ट दे रहा है।

परमात्मा ने सोचा कि मनुष्यों को मृत्यु समय से अज्ञात कर देता हूं, क्योंकि ऐसा करने से चित्त में यह भाव उत्पन्न होजायगा कि कौन जाने कब देहान्त हो जाय हम अपने इस क्षणक जीवन को भ्रष्ट क्यों करें।

परन्तु इस से भी कुछ न हुआ, परमात्मा ने देखा कि बलवानों ने दुर्बलों को मृत्यु का भय दिखला कर अपने वश में कर लिया है बलवानों की सन्तान काम करना छोड़ देने के कारण दारिद्री हो गई है दुर्बलों को अत्यन्त काम करने में अति कष्ट होने लगा है प्रत्येक जथा एक दूसरे से भय और द्वेष करने लगा है।

परमात्मा ने यह दशा देख कर निश्चय किया

कि अब अन्तम उपाय करना उचित है अर मै रोग को भेजता हू, क्योंकि जब वह यह जान लेंगे कि प्रत्येक मनुष्य रोग ग्रस्त हो सक्ता है, तो उन्ह में परस्पर दया करने का भाव उत्पन्न होजायगा।

कुछ काल पीछे परमात्मा ने आकर देखा कि रोग ने मनुष्यों में ऐक्यता तो क्या उत्पन्न करनी थी, उलटी उन्ह में ग्लानी और विरोध बढ़ा दिया, वह इस भाति कि धनवान जब रोगी होते हैं तो निरधनों से काम कराते है, और जब दूसरे रोग ग्रस्त होते है तो धनी लोग उन की किंचित मात्र भी चिंता नही करते, निरधन विचारों को काम से इतनी छुट्टी ही नही मिलती कि वह अपने कुटुम्बियों की रक्षा कर सकें, इस कारण कि रोगी पुरुषों के देखने से धनाढ्य पुरुषों के विषयानन्द में कोई विक्षेप न हो, बस्ती से दूर मकान बना कर उन में वैद्यादि नौकर रख दिये गये है जो कंगाल रोगियों पर दया न करके उन से घृणा करते हैं और वह विचारे इन वैद्यों के हाथों में अनेक प्रकार का कष्ट भोग कर प्राण त्याग देते हैं, तिस पर बहुत से रोगों

को लोग छूत अथवा गन्द रोग समझ कर न केवल रोगियों से बचते है वरंच उनकी रक्षा करने वालों से भी छूना पाप मानते है ।

तब परमात्मा ने यह निर्णय किया कि मनुष्यों को सुखी करना असम्भव है, जैसे है वैसे ही रहने दो

कुछ काल उपरात अब लोग यह मानने लगे है कि हमें सुख प्राप्ति का उपाय करना उचित है, कुछ लोग यह जान गये है कि काम ऐसा होना चाहिये जो सब को प्रिय हो, यह नहीं कि धनाढ्य तो उसे रीछ समझ कर भागें, और निरधन उसे करते २ प्राण दे दें, वह समझ ने लगे है कि मृत्यु काडं का सदैव बज रहा है, इस कारण वर्ष, महीने, घण्टे, मिनट जो कुछ भी मिले उसे ऐक्यता और प्रेम में बिताना चाहिये, उन्हें विश्वास होता जाता है कि रोग उत्पन्न होने पर वैर भाव प्रकट करने के प्रतिकूल एक दूसरे के साथ प्रेम करने का अवसर मिलता है ।

तेईसवीं कहानी

एक समय एक राजा को यह ध्यान आया कि यदि मुझे यह मालूम होजाय कि:—

(१)—प्रत्येक कार्य्य के आरम्भ करने का ठीक समय कौनसा है।

(२)—किन लोगों की बात सुननी चाहिये, किन की नहीं।

(३)—और अति आवश्यक कर्तव्य क्या है तो मैं जो चाहूं सो कर सक्ता हूं।

अतएव उस ने अपनी राजधानी में डौंडी पिटवा दी कि जो कोई पुरुष इन तीन बातों का उत्तर देगा, उसे बहुत इनाम दिया जायगा. अब बुद्धिमान पुरुष आकर राजा को इन प्रश्नों का उत्तर देने लगे।

पहले प्रश्न के उत्तर में किसी ने कहा कि मनुष्य को काम करने के वास्ते पहले दिनों, महीनों और वर्षों की सूचीपत्र बना लेनी चाहिये. किसी ने कहा कि कार्य्य आरम्भ करने का पहले से ठीक समय नियत करना [illegible] है, मनुष्य को चाहिये

वृथा काल व्यतीत न करे, जो कर्तव्य हो सदा उसे करता रहे, किसी ने कहा कि राजा कितना भी चतुर और सावधान क्यों न हो वह अकेला प्रत्येक कार्य्य आरम्भ करने का ठीक समय नहीं जान सक्ता, उसे बुद्धिमान लोगों की सभा बना कर उन से सम्मति लेनी चाहिये।

इस पर दूसरे बोले कि कुछ कार्य्य ऐसे होते हैं कि उन्हे तुरन्त करना पडता है, सभा में उन पर विचार करने का अवकाश नही मिल सक्ता, और कार्य्य करने से पहले उसका फल जानना आवश्यक है, यह सब वार्ता ओझे पंडित जानते हैं इस कारण उन से पूछना उचित है।

इसी प्रकार लोगों ने दूसरे प्रश्न के भी अनेक उत्तर दिये, किसी ने कहा राजा को मंत्री अति उत्तम होने चाहियें, कोई बोला, पंडित, कोई बोला, वैद्य, किसी ने कहा सेना, इत्यादि।

तीसरे प्रश्न का उत्तर भी ऐसा ही मिला, कोई कहता था पदार्थ विद्या सब से उत्तम कर्तव्य है, कोई कहता था शस्त्र विद्या, कोई बतलाता था पूजा पाठ।

राजा को कोई उत्तर ठीक मालूम न हुआ, पास जंगल में जगद विख्यात बुद्धिमान् एक साधू निवास करता था, राजा ने विचारा कि चलो उस साधू से इन प्रश्नों का उत्तर पूछें।

साधू कुटिया छोड कर कहीं बाहर नहीं जाता था, और केवल साधारण मनुष्यों से मिला करता था, इस कारण राजा साधारण वस्त्र पहर कर पैदल साधू की कुटिया पर पहुंचा।

देखा कि साधू कुटिया के सामने धरती खोद रहा है।

राजा—(प्रणाम करके) 'महाराज मैं आप से तीन बातें पूछने आया हूँ–पहली यह कि मैं यथार्थ कार्य्य करने का यथार्थ समय किस प्रकार जान सक्ता हूं–दूसरी यह कि मुझे किन लोगों से सहवास करना उचित है, तीसरी यह कि मेरा वास्तविक कर्तव्य क्या है'।

साधू ने कोई उत्तर नहीं दिया, और धरती खोदता रहा।

राजा—'महाराज आप थके मालूम पड़ते है, लाइये कसी मुझे दीजिये, और आप किञ्चित विश्राम कर लीजिये।

साधू ने कसी राजा को देदी, धरती खोदते २ सांझ हो गई।

राजा—'महाराज मैं तो आप से अपने प्रश्नों का उत्तर लेने आया था, यदि आप कोई उत्तर नहीं दे सक्ते. तो मैं लौट जाता हूं'।

साधू—'देखो कोई भागा जाता है'।

राजा ने मुंह फेर कर देखा कि एक दाढी वाला मनुष्य जंगल की ओर से दौड़ा आ रहा है, उसने अपने पेट को हाथों से दाब रक्खा है, और हाथों के बीच में से रुधिर बह रहा है, राजा के पास पहुंच कर वह बे सुध होकर पृथ्वी पर गिर पडा, राजा और साधू ने कुरता उठा कर देखा तो मनुष्य के पेट में बड़ा भारी घाओ पाया, राजा ने घाओ को पानी से धो कर अपना रुमाल उस पर बांध दिया, रुधिर बन्द होगया, कुछ काल उपरान्त मनुष्य को सुध आई, उसने पानी मांगा, राजाने तुरन्त जल लाकर मनुष्य को पिलाया इतने में सूर्य्य अस्त होगया, राजा साधू की सहायता से मनुष्य को उठा कर कुटिया में ले गया, और वहां जाकर चारपाई पर लिटा दिया, रात्रि को सब ने सैन किया, भोर होने पर मनुष्य बोला।

मनुष्य-(राजा से) 'राजन आप मुझ पर क्षमा कीजिये'।

राजा-'क्षमा कैसी, मैं तो तुम्हें जानता भी नहीं'।

मनुष्य-'आप मुझको नहीं जानते, परन्तु मैं आप को जानता हूं, आपने मेरे भाई का धन हर लिया था, इस कारण मैंने प्रतिज्ञा की थी कि आप से बदला लूं, मैं जानता था कि आप साधू से मिल कर सन्ध्या समय अकेले घर को लौटेंगे, इस कारण मैं जंगल में छुप रहा था, आपके सिपाहियों ने मुझे यहां देख कर पहचान लिया, और मुझे गोली मारी, मैं भाग कर यहां आया, यदि आप मेरा घाओ बन्द न करते तो मैं अवश्य मर जाता, आपने मुझ पर बड़ी दया की, मैं तो आप को मारना चाहता था, परन्तु आपने मेरी जान बचाई, अब आगे को मैं आपका निज दास बन कर जीवन व्यतीत करूंगा, आप क्षमा करें'।

राजा बड़ा प्रसन्न हुआ कि ऐसा दारुण शत्रु सहज में ही मित्र बन गया, उसने साधू से पूछा 'महाराज आपने मेरे प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया, अच्छा प्रणाम, अब आज्ञा दीजिये'।

साधू-'आपके प्रश्नों का उत्तर तो मिल चुका'।

राजा-'मैं नहीं समझा'।

साधू—' देखो, यदि तुम कल मुझ पर, तरस खा कर धरती न खोदते और शीघ्रही लौट जाते तो यह मनुष्य राह में तुम्हें कष्ट देता, और तुम पछताते कि मै साधू के पास क्यों न ठहर गया, इस लिये विदित हुआ कि उचित समय वह था जब तु धरती खोद रहे थे, और उचित मनुष्य मै था औ मेरा भला करना तुम्हारा उत्कृष्ट कर्तव्य था, उस पीछे जब यह मनुष्य आया, तो उचित समय व था जब तुम उस के घाओ को बन्द कर रहे थे, औ वह उचित मनुष्य था, और उस के घाओ को बन करना तुम्हारा कर्तव्य था साराश यह कि सदैव वर्त मान काल ही उचित काल है, क्योंकि केवल वर्तमा काल पर ही हमारा अधिकार है,जो मनुष्य मिल जा वही उचित मनुष्य है, कौन जानता है पलमें क्या जाये कोई मिले अथवा न मिले, और अति उत्त कर्तव्य पर उपकार है, क्यों कि उपकारार्थ ही पु इस मृत लोक मै शरीर धारण करता है ॥

समाप्त